Elementary History of India

PART I

BY

DR. ISHWARI PRASAD, M.A., LL.B., D.LITT.,

Author of the History of Mediaeval India, A Short History of Muslim Rule in India, The Student's History of India, etc.

भारतवर्ष का सरल इतिहास

प्रथम भाग

लेखक

डा० ईश्वरीप्रसाद

एम० ए०, एल-एल० बी०, डी० लिट्

प्रकाशक

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

भूमिका

इतिहास की यह छोटी-सी पुस्तक मिडिल सेक्शन के विद्यार्थियों के लिए लिखी गई है। इस पुस्तक का प्रथम संस्करण सन् १९२३ मे प्रकाशित हुआ था। उस समय इतिहास की पाठ्य पुस्तकें अधिकांश अँगरेज विद्वानों की बनाई हुई थी और उनमे नई खोज का सर्वथा अभाव था। अध्यापकों और विद्यार्थियों ने इस पुस्तक को पसन्द किया और शिक्षा-विभाग ने भी उनकी राय का अनुमोदन किया। गत सात वर्षों मे ऐतिहासिक गवेषणाओं-द्वारा बहुत-सी नई सामग्री एकत्र हो गई है जिससे लाभ उठाना उचित समझा गया। अध्यापकों के अनुरोध से यह पुस्तक फिर नये सिरे से लिखी गई है और विषय को सरल और मनोरंजक बनाने की चेष्टा की गई है। व्यावहारिक अनुभव से जो त्रुटियाँ इसमे पाई गई थी वे दूर कर दी गई है।

थोड़े-से स्थान मे ऐतिहासिक घटनाओं का स्पष्टरूप से वर्णन करना कठिन कार्य है। परन्तु यथासम्भव इस बात का ध्यान रक्खा गया है कि पुस्तक के पढने से बालकों की इतिहास के प्रति रुचि बढे और वे इसके अध्ययन से लाभ उठावें। इतिहास का उद्देश्य सत्य की खोज करना और उसे प्रकाशित करना है। भारतीय इतिहास की सामग्री उत्तरोत्तर बढ रही है। आधुनिक अन्वेषण ने बहुत-सी प्राचीन घटनाओं पर नया प्रकाश डाला है और अनेक धारणाओं को निर्मूल सिद्ध कर दिया है। इन सब बातों का इस पुस्तक में समावेश है। भारत की प्राचीन सभ्यता का भी काफी वर्णन किया गया है जिससे हमारे बालकों को मालूम हो कि उनके पूर्वज कैसे थे और उनके क्या आदर्श थे। मुस्लिम और ब्रिटिश काल के इतिहास का वर्णन करने में सहिष्णुता और निष्पक्षता से काम लिया गया है।

यथासम्भव भाषा इस पुस्तक की सरल रक्खी गई है और विषय को ग्राह्य बनाने की चेष्टा की गई है। तब भी यह नही कहा जा सकता कि पुस्तक सर्वथा दोषरहित है। जो सज्जन त्रुटियों की ओर लेखक का ध्यान आकृष्ट करेंगे उनकी बड़ी कृपा होगी।

इलाहाबाद यूनीवर्सिटी
ता० ८ मार्च सन् १९३३

ईश्वरीप्रसाद

प्रस्तावना

इतिहास का उद्देश्य—एक समय था जब कि हमारे स्कूलों में इतिहास की पढ़ाई पर अधिक ध्यान नहीं दिया जाता था। इतिहास में न अध्यापकों की रुचि थी और न विद्यार्थियों की। इतिहास की पुस्तकें भी पुराने ढङ्ग की थीं। उनमें न घटनाओं का वर्णन ही सही था और न उनकी भाषा ही रोचक अथवा सरल थी। परन्तु अब लोग इतिहास के महत्त्व को समझने लगे हैं और हमारे शिक्षा-विभाग ने भी ऐतिहासिक ज्ञान की आवश्यकता स्वीकार कर ली है। इतिहास मानव-जाति की कथा है। इसके पढ़ने से जान पड़ता है कि मनुष्य-जाति अपनी वर्तमान दशा को किस प्रकार पहुँची है। इतिहास का ज्ञान समाज को उन्नति के मार्ग पर ले जाता है। इसकी सहायता से बड़े बड़े राजनीतिज्ञ कठिन परिस्थितियों में गलतियाँ करने से बचते हैं और अपने लक्ष्य पर पहुँचने में सफल होते हैं। मानव-समाज और संस्थाओं का जो रूप इस समय दिखलाई देता है वह किस प्रकार उन्हें मिला है? कालान्तर में क्या परिवर्तन हुए हैं और उनसे देशों और राष्ट्रों को क्या लाभ अथवा हानि हुई है? इतिहास के पढ़ने का क्या उद्देश्य है? इतिहास से हमें मालूम होता है कि हमारे समाज की जिसमें हम रहते हैं, किस प्रकार उत्पत्ति और विकास हुए हैं। वर्तमान की जड़ अतीत में है। अशोक और चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के समकालीन हिन्दुओं के विचार और काम कैसे थे—इसके जानने की हमें यों इच्छा होती है कि जो कुछ आजकल के हिन्दू सोचते और करते हैं उसकी जड़ प्राचीन भारत में है। समाज का विकास किस प्रकार हुआ है, इस बात को जानने की प्रत्येक बालक इच्छा रखता है। उदाहरण लीजिए। एक समय था जब कि न्यायाधीश रिश्वत लेते थे, क़ानून कठोर थे, छोटे-

छोटे अपराधों के लिए हाथ, पैर, नाक काट डाले जाते थे, मुकदमे बरसों चलते रहते थे, जब मनुष्य मनुष्य में भेद किया जाता था। यह सब हाल पढ़ने से हमें वर्तमान की कद्र मालूम होती है। इनके ज्ञान से हमें मालूम हो सकता है कि हमारे शासन और समाज के दोष किस तरह धीरे-धीरे दूर हुए हैं।

इतिहास से सदाचार की भी वृद्धि होती है, महान् पुरुषों का अनुकरण करने की इच्छा बालकों में पैदा होती है। बालक स्वभाव ही से वीरोपासक होते हैं। बहादुरी अथवा दूसरी तरह के बड़े काम उन्हें अधिक रुचिकर होते हैं। आप जानते हैं कि प्रतापी वीरों अथवा साधु-सन्तों की जीवन-कथा सुनकर वे कितने प्रसन्न होते हैं। इतिहास-द्वारा वे ऐसे महान् पुरुषों का हाल जान जाते हैं जिनसे उनकी भेंट होने की कोई सम्भावना नहीं। गौतमबुद्ध, अशोक, अकबर से हमारी कहाँ भेंट हो सकती है परन्तु इतिहास-द्वारा हम उनके बारे में सब कुछ जान सकते हैं। बालक इस बात को जानने के लिए उत्सुक रहते हैं कि ये बड़े लोग किस तरह जीवन व्यतीत करते थे, संसार में ऐसा यश उन्होंने किस तरह पैदा किया। बड़े-बड़े राज्य उन्होंने कैसे बनाये और उनके प्रबन्ध के लिए क्या किया। इतिहास-द्वारा हम बड़े से बड़े महापुरुष से भी भेंट कर सकते हैं और उसके जीवन से शिक्षा ले सकते हैं। विचार-शक्ति भी इतिहास पढ़ने से बढ़ती है। बालकों से अकसर पूछा जाता है—बताओ फलां काम का क्या नतीजा हुआ? उनसे पूछा जाता है बताओ औरङ्गज़ेब की नीति ने किस प्रकार मुगल-राज्य को नष्ट कर दिया? क्या अकबर के दीन-इलाही से मुगल-साम्राज्य को लाभ हुआ? क्या वेल्ज़ली की सहायक नीति ने देशी राज्यों को दुर्बल और निकम्मा बना दिया? ऐसे प्रश्नों से बालकों की उत्सुकता बढ़ती है। उनकी विचार-शक्ति का विकास होता है। वे यह सोचते हैं कि अमुक काम करने से अमुक फल होता है। वे समझने लगते हैं कि प्रजा की सेवा से राजाओं की शक्ति नष्ट हो जाती है। जिन राज्यों के अफसर रिश्वत

[illegible]ते हैं वे बहुत दिन तक नहीं चल सकते। दासता में देश की आर्थिक हीनता होती है और मानव-जीवन की शान में बट्टा लगता है। धीरे-धीरे बालक इस नतीजे पर पहुँचता है कि इन बुरी बातों से बचना ही समाज और मानव दोनों के लिए श्रेयस्कर है। कार्य और कारण का सम्बन्ध जानने में इतिहास हमारी बड़ी मदद करता है। ऐसा करने से ऐसा परिणाम होता है यह सोचते-सोचते मनुष्य की बुद्धि बढ़ती है और वह समझ एवं दूरदर्शिता से काम लेने लगता है।

इतिहास सच्ची घटनाओं का वर्णन कर सत्य मे बालकों की रुचि बढ़ाता है और उनकी देश-भक्ति को जाग्रत करता है। स्वर्गीय दादाभाई नौरोजी, गोखले, रानाडे आदि महानुभावों की देश-सेवाओं का हाल पढ़कर बालक की अनुकरण-शक्ति प्रबल होती है और वह भी उन्हीं के से काम करने की इच्छा करता है। जो अपने देश के बारे में कुछ नहीं जानता वह देश मे क्या प्रेम कर सकता है। जिसे अपने देश की महत्ता और उसकी सभ्यता के चमत्कार का ज्ञान नहीं वह उसके लिए किस तरह प्राण दे सकता है। भारतीय बालक के लिए तो इतिहास का जानना और भी आवश्यक है। उसके पढ़ने से वह जानेगा कि भारत की प्राचीन सभ्यता कैसी बढ़ी-चढ़ी थी और उसे फिर उन्नत दशा पर पहुँचाने के लिए उसे क्या करना चाहिए। इसके अलावा बालकों की कल्पना-शक्ति की भी इतिहास-द्वारा वृद्धि होती है। जब बालक किसी भयङ्कर प्लेग अथवा अकाल का हाल पढ़ते हैं तो वे अनुमान कर सकते हैं कि ऐसी दुर्घटनाओं से मनुष्य-जाति को कितना कष्ट पहुँचता है। इस कल्पना-शक्ति की मदद से वे दीन, असहाय और क्षुधा-पीड़ित लोगों का आर्तनाद सुन सकते है। इस तरह उनके हृदय में करुणा, दया और सहानुभूति के भाव उत्पन्न होते हैं।

इतिहास की शिक्षा किस तरह होनी चाहिए—इतिहास का विषय ऐसा रोचक, शिक्षाप्रद एवं उपयोगी है परन्तु इसकी पढ़ाई पर यथोचित ध्यान नहीं दिया जाता। बहुत-से अध्यापक तो बालकों से कह देते

है कि अकबर का पाठ याद कर डालो और फिर उसे जबानी सुनते है। बहुत-से इतिहास की पाठ्य पुस्तक को लेकर साहित्यिक रीडर की तरह पढाते है जिससे बालकों पर ज़रा भी प्रभाव नही पडता। कुछ ऐसे भी है जो पुस्तक की भाषा को भी रटवाते है जिससे स्मरणशक्ति भी खराब हो जाती है और इतिहास का ज्ञान भी नही होता। अध्यापक को पढाने के पहले पाठ को स्वय खूब तैयार कर लेना चाहिए। उसको स्वाध्याय-द्वारा अपने ज्ञान की वृद्धि करनी चाहिए। जो अध्यापक स्वय पूरा ज्ञान नही रखता वह दूसरों को क्या पढा सकेगा। अध्यापक कहानी कहने में भी कुशल होना चाहिए। उसे इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि बालक कितना समझ सकते है। किन बातों पर ज़ोर देने की ज़रूरत है और कौन-सी बाते ऐसी है जिन्हे सक्षेप से वर्णन करना चाहिए? यदि अध्यापक इस बात को नही जानता तो वह पढ़ाने में कभी सफल नही हो सकता। भाषा पर भी उसका अधिकार अच्छा होना चाहिए। जिस भाषा मे वह शिक्षा देता है उसे वह अच्छी तरह लिख और बोल सकता हो। अध्यापक का काम नाटक खेलनेवालों का-सा है। जिस तरह नाटक खेलनेवाले उपस्थित जनता पर प्रभाव डालते है उसी प्रकार अनुभवी अध्यापक को अपने विद्यार्थियों पर प्रभाव डालना चाहिए। नये अध्यापकों को पहले-पहल बडी कठिनाई होती है क्योंकि वे क्लास में जाते समय अपना अधिक ख़्याल रखते है। शिक्षक को चाहिए कि क्लास में जाकर अपने को बिलकुल भूल जाय और यह तभी हो सकता है जब उसने पाठ को खूब तैयार कर लिया हो। बालकों से कभी कभी प्रश्न भी पूछने चाहिएँ जिससे पता लग जाय कि वे पाठ को समझते है या नही। इतिहास का पाठ कहानी के रूप में सरल भाषा में कहा जाय और फिर कभी कभी बालकों से प्रश्न भी पूछे जायँ। इससे उन्हें विषय पर ध्यान देना पडेगा। विद्यार्थियों के पास नोटबुक हों तो अच्छा है। मिडिल क्लास के लडके नोटबुक का उपयोग कर सकते है। नोटबुक में नक़्शे, चार्ट, तारीख़ें और लड़ाइयों

के नाम आदि होने चाहिएँ। कभी-कभी प्रश्नों के उत्तर भी लिखे जायें तो लाभकारी होंगे।

तारीखें याद करनी चाहिएँ या नहीं—बहुधा अध्यापक पूछते हैं कि तारीखें याद करना जरूरी है या नही। ऐसा देखा गया है कि कही-कही तो बिल्कुल तारीखें याद कराई ही नही जातीं और विद्यार्थी एक-दो शताब्दी के अन्तर को कुछ भी नही समझते। बाज लिख देते हैं प्लासी की लड़ाई १६५७ में हुई बाज लिखते हैं १८५७ में। कही-कही पर तारीखें इतनी रटाई जाती हैं कि बालकों का नाक में दम हो जाता है। दोनों ही तरीके गलत और हानिकारी हैं। इतिहास में मुख्य चीज तारीखें नही हैं, देश, जाति अथवा राष्ट्र का विकास है। इस पर विशेष ध्यान देना चाहिए। तारीखों में केवल बड़ी-बड़ी ही स्मरणीय हैं। अध्यापकों को चाहिए कि ऐसा नकशा बना दें जिसमें प्रसिद्ध तारीखें घटनाओ के साथ दर्ज हो। सही तारीखों का जानना जरूरी है। कुछ लोग कहते हैं बालकों को तारीखें बताने से क्या लाभ। उनमें काल की अनुमान-शक्ति है ही नही। यह ठीक है बालक सन् १५२६ का आज अन्दाज़ा नही लगा सकता। परन्तु इसके साथ दूसरी तारीखों का मुकाबिला करना सीखेगा। जब वह पानीपत की सन् १७६१ की लड़ाई का हाल पढेगा तब उसे मालूम हो जायगा कि १५२६ और १७६१ में क्या भेद है। इतने समय में युद्ध-कला मे क्या अदल-बदल हुआ है? क्या नये हथियार बने? किस प्रकार सेनाओं की रणक्षेत्र में व्यवस्था हुई और क्योंकर मराठों और देशी मुसलमानों की पराजय हुई? तारीखों का क्रम ऊँचे दर्जों के बालकों को अवश्य जानना चाहिए।

जबानी पाठ की व्यवस्था—अध्यापक को अपने पाठ की इस प्रकार व्यवस्था करनी चाहिए। मान लीजिए आज हमें बालकों को अकबर की राजपूत-नीति बतलानी है। पाठ के विविध अशों की इस प्रकार व्यवस्था होनी चाहिए।

१. राजपूतों के गुण—उनकी वीरता, साहस और रण-कौशल—

मुगलों के पहले जो बादशाह हुए उनका राजपूतों के साथ बर्ताव—
इस बर्ताव का परिणाम—देश में अशान्ति और राजविद्रोह।

२. अकबर का हिन्दुओं के साथ स्वाभाविक प्रेम और उसका पक्षपात-रहित होना—अकबर का यह समझना कि मुगलों के राज्य की जड़ राजपूतों की मदद के बिना मजबूत नहीं हो सकती।

३ आमेर-नरेश भारमल की बेटी के साथ अकबर का विवाह होना—इसके परिणाम—राजा भगवानदास और मानसिंह का राज्य में बड़े ओहदे पाना—अन्य राजपूतों का आमेर का अनुकरण करना—बीकानेर, जोधपुर की अकबर के साथ मित्रता—बादशाह का बराबरी का बर्ताव करना।

४. अकबर की नीति के परिणाम—राजपूतों की मित्रता और उनके द्वारा हिन्दू-जाति का राज-भक्त बन जाना—साम्राज्य की मजबूती—राजपूतों का उसकी शान के लिए अनेक युद्धों में खून बहाना—राजा मानसिंह का काबुल को जीतना—राजपूतों के साथ सम्बन्ध होने से अकबर के धार्मिक विचारों में परिवर्तन होना।

चित्र, नक़शे, सिक्के और ऐतिहासिक भ्रमण—अध्यापकों को चाहिए क्लास के कमरे में ऐतिहासिक चित्र और नक़शे रक्खे जिससे पाठ के समझाने में सुविधा हो। पूरे चित्रों से बालकों पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। ब्लैक-बोर्ड की भी सहायता काफी लेनी चाहिए। कभी-कभी अध्यापक स्वयं भी खड़िया से चित्र बना सकते हैं। इतिहास की पढ़ाई के लिए भू-चित्रावली अर्थात् एटलस का पास रखना जरूरी है। विशेषतः युद्धों, किलों और शहरों के मुक़ामों को समझाने के लिए नक़शों से काम लेना चाहिए। क्लास में बड़े नक़शे मौजूद हों और कभी-कभी अध्यापकों को स्वयं भी बोर्ड पर नक़शे खींचकर पाठ की व्याख्या करनी चाहिए। सिक्के भी ऐतिहासिक घटनाओं पर अच्छा प्रभाव डालते हैं। इनके अलावा इतिहास को काल के अनुसार विभाजित करके चार्ट बना

देना भी लाभदायी है। ऐतिहासिक स्थानों में बालकों को प्राचीन इमारतें दिखने ले जाना अच्छा है। हमारे प्रान्त मे आगरा, इलाहाबाद, कन्नौज, बनारस, इटावा, मथुरा आदि कई ऐसे शहर हैं जहाँ इतिहास की सामग्री चारों तरफ फैली हुई है। इमारतों, किलों और महलों के देखने से उस समय की कारीगरी का हाल मालूम होता है और उनके बनानेवालों की शान-शौकत का भी पता लगता है। आगरे का किला, ताजबीबी का रौज़ा, फतेहपुर सीकरी के महल--इनको देखकर कौन ऐसा है जो मुगलों की महत्ता को न समझे?

इतिहास की आवश्यकता--किसी भी देश की उन्नति के लिए उसके बालकों की ऐतिहासिक शिक्षा का सँभालना जरूरी है। बडे-बडे विद्यार्थियों की अपेक्षा छोटे बालकों का पढाना कठिन है। यथा-सम्भव एक अध्यापक को कई विषय न पढाना चाहिए क्योंकि इससे उसकी किसी विषय मे रुचि नही रहती। सबके सब उसके लिए नीरस हो जाते हैं और पढाई भी उसी तरह होने लगती है जैसे मशीन का काम होता है। जब काम मे हृदय नही तो वह नीरस और निरर्थक हो जाता है। खेद है कि यूरोप के देशों की तरह हमारे देश मे भी हेड मास्टर महोदय इतिहास की शिक्षा पर यथोचित ध्यान नही देते। उनका ध्यान अँगरेजी भाषा और गणित-शास्त्र की ओर ही अधिक रहता है। २३-२४ वर्ष पहले जब यह लेखक स्कूल मे पढता था तब भी यही हाल था और आज भी वही है। इतिहास की बाजार मे वह कीमत नही हो सकती जो वैज्ञानिक अथवा उद्योग-शिक्षा की है। इतिहास एक प्रकार का साहित्य है। इसके पढने से मनुष्य व्यापारिक कौशल नही प्राप्त कर सकता। जिस खेत मे चार मन गेहूँ पैदा होते है उसमे आठ मन नही पैदा कर सकता परन्तु अपने सामाजिक कर्त्तव्यों को भलीभाँति जान सकता है। इसके द्वारा उसका अनुभव बढता है और उसके विचार उत्कृष्ट होते हैं। यही कारण है कि इतिहास को स्कूली शिक्षा में ऊँचा स्थान मिलना चाहिए।

विषय-सूची

भारतवर्ष का इतिहास

अध्याय १

भूगोल और इतिहास का सम्बन्ध

भारतवर्ष—हमारे देश का नाम भारतवर्ष है। यह पृथ्वी के प्राचीन देशो में से है। अन्य प्राचीन देश कभी के इस संसार से लुप्त हो गये परन्तु यह अभी तक जीवित है। प्राचीन काल मे इसका नाम आर्यावर्त अथवा आर्य्यों का निवासस्थान था। पुराणों के पढ़ने से पता लगता है कि प्राचीन मनुष्यो का खयाल था कि पृथ्वी पर सात द्वीप हैं। उनमें से एक का नाम जम्बूद्वीप है। द्वीप के भिन्न भिन्न भाग 'वर्ष' कहलाते थे। हमारा देश इसी जम्बूद्वीप का एक वर्ष था। राजा भरत यहाँ राज्य करते थे। इसलिए इसका नाम भारतवर्ष हुआ। जब मुसलमान इस देश में आये तो वे सिन्धु नदी के इस पार के देश को हिन्दुस्तान कहने लगे। सिन्धु शब्द बिगड़कर हिन्दु हो गया और हिन्द लोगो के रहने की जगह हिन्दुस्तान अथवा हिन्द कहलाने लगा। अँगरेजी भाषा में हिन्द का बिगड़कर 'इण्ड' हो गया और यूरोप की जातियाँ इण्ड देश को 'इण्डिया' के नाम से पुकारने लगीं। मुसलमानो ने इसका नाम अपनी पुस्तको मे

हिन्दुस्तान ही लिखा है। परन्तु हिन्दुस्तान का प्रयोग उन्होंने केवल उस देश के लिए किया है जो हिमालय से विन्ध्याचल तक और पूर्व में बङ्गाल, आसाम से लेकर पश्चिम में सिन्ध और मुल्तान तक विस्तृत है।

जल वायु का मनुष्य पर प्रभाव—मनुष्य पर देश की आवहवा का बड़ा असर पड़ता है। ठंढे देशों के रहनेवालों की रहन-सहन, चाल-ढाल गर्म देशों के लोगों से भिन्न होती है। ठंढे देशवाले परिश्रमी, मजबूत, फुर्तीले होते हैं। उनका खाना पीना, वेष-भूषा बिलकुल जुदी होती है। शीतकाल में उन्हें मोटे ऊनी कपड़े पहनने पड़ते हैं और मांस-मदिरा का भी इस्तेमाल करना पड़ता है। गर्म देश मे रहनेवालो को अधिक कपड़ों की जरूरत नहीं पड़ती और न उन्हें अपने स्वास्थ्य के लिए गर्म चीजें खानी पड़ती हैं। भारतवर्ष एक गर्म देश है। यहां साल में जाड़े के चार महीनों को छोड़कर गर्मी पड़ती है। परन्तु यहां भी अनेक स्थान ऐसे हैं जहाँ न अधिक गर्मी पड़ती है न सर्दी—जैसे बंगाल, मध्यप्रदेश, मालवा, बम्बई और मद्रास के सूबे। पंजाब, संयुक्तप्रान्त और राजपूताना में मई और जून के महीनो में ऐसी लू चलती है कि शरीर झुलस जाता है और जाड़े में ऐसी सर्दी पड़ती है कि कभी-कभी पानी जम जाता है।

पहाड़ी देशो में ज़मीन पथरीली होने के कारण खेती-बारी की उतनी सुविधा नहीं होती जितनी मैदानों मे। परन्तु वहाँ लकड़ी, जड़ी-बूटी, धातु आदि बहुतायत से पाई जाती है और इन्हीं के द्वारा लोग अपनी जीविका कमाते हैं। पहाड़ो पर रहनेवाले मजबूत

होते हैं। परन्तु ज़रा-सी भी गर्मी में घबरा जाते हैं और काम नहीं कर सकते। यह कहना अनुचित न होगा कि भारत में सब प्रकार की आवहवा पाइ जाती है। यदि एक तरफ वर्फ से ढका हुआ हिमालय पहाड़ है तो दूसरी तरफ़ सिन्ध का रेगिस्तान है जहाँ पानी का नाम तक नहीं। जहाँ आसाम की खासी पहाड़ियाँ है जिनमें ४०० से ५०० इञ्च तक पानी बरसता है वहाँ थार के मैदान भी हैं जिनमें वर्षा बहुत कम होती है।

सीमा—भारतवर्ष के उत्तर में हिमालय पर्वत है जो लगभग १,४०० मील लम्बा और १९,००० .फुट ऊँचा है। इसकी चोटियाँ २५ से २९ हज़ार .फुट तक ऊँची है। उत्तर-पश्चिम के कोने में सुलेमान और हाला पहाड़ों की श्रेणियाँ है और उत्तर-पूर्व की तरफ़ भी पर्वतो की श्रेणियाँ और घने जंगल है। पश्चिम में अरब सागर, पूर्व में बंगाल की खाड़ी और दक्षिण में हिन्द महासागर है। इन समुद्रों ने भारत की बहुत काल तक रक्षा की। परन्तु जब यूरोप की समुद्री जातियाँ यहाँ आईं तब यह सीमा टूट गई। इसी सीमा को तोड़कर अँगरेजो ने भारत में अपना राज्य स्थापित किया है।

हिमालय पर्वत—हिमालय पर्वत हमारे देश के उत्तर में एक पत्थर की विशाल दीवार की तरह खड़ा हुआ है। इसकी कई श्रेणियाँ है जो सैकड़ो मील तक चली गई है। इन श्रेणियो के बीच में गहरी घाटियाँ हैं जिनमें बर्फ की नदियाँ बड़े वेग से बहती हैं। इन पहाड़ो मे होकर निकलना कठिन है। सड़कें न होने के कारण व्यापार भी कम होता है। व्यापारी अपना माल घोड़ो या खच्चरो पर लादकर ले जाते है। जब जाड़ा जोर का पड़ता है तब तो ये मार्ग

बिलकुल बन्द हो जाते है। कहा जाता है कि यही कारण है कि हिन्दुस्तान के लोग दुनिया के दूसरे देशो से अलग हो गये। भारतवासी चीन, तिब्बत, रूस आदि देशो के लोगो के साथ मेलजोल न कर सके। इसी लिए उनके आचार-विचार, व्यवहार, रीति-रवाज में इतना अन्तर हो गया है। अपने ही देश मे रहने के कारण जाति-पॉत का भेद-भाव बढ़ गया और छूत-छात के विचारो ने देश को जकड़ लिया।

इस कथन में बहुत कुछ सचाई है। परन्तु तो भी यह नहीं समझना चाहिए कि भारत का बाहरी देशो से कुछ भी सम्बन्ध नहीं रहा है। उत्तर की तरफ हिमालय पहाड मे ही कई रास्ते है जिनमें होकर मनुष्य बराबर भारत में आते-जाते रहते है। पामीर की श्रेणियो से गिलगिट होकर, तिब्बत से लेह होकर और पूर्व की तरफ़ शिकम होकर रास्ते है। परन्तु ये रास्ते ऐसे नहीं है कि जिनमे होकर बड़ी सेनाये आ-जा सके अथवा मनुष्य ज्यादा तादाद में निकल सके। पूर्वी सीमा हमेशा सुरक्षित रही क्योंकि उधर से आने का ऐसा सुभीता नहीं था। उस रास्ते से कभी हमारे देश पर हमला नहीं हुआ।

परन्तु उत्तर-पश्चिम के कोने की पर्वत-श्रेणियो में ऐसे दर्रे हैं जिनमें होकर प्राचीन काल से लोगों का आना-जाना हुआ है। ये हैं खैबर, कुर्रम और बोलान के दर्रे। उन्हीं दर्रों में होकर प्राचीन काल मे भारत के आक्रमणकारी आते है। आर्य्य, यूनानी, हूण, सिथियन, मंगोल, तुर्क, अफगान, सबने उन्हीं रास्तो से होकर भारत पर हमले किये और देश मे अपने राज्य स्थापित किये। उन्हीं के द्वारा हमारी प्राचीन सभ्यता का स्रोत बराबर बहता रहा और दूर-दूर देशो मे उसका प्रचार

हुआ। सच तो यह है कि हिमालय पर्वत हमारे बड़े काम का है। यह बाहरी शत्रुओं से हमारी रक्षा करता है। इससे कई बड़ी-बड़ी नदियाँ निकलती हैं जो देश को उपजाऊ बनाती है। बंगाल की खाड़ी से उठनेवाले बादल हिमालय से टकराकर दोआब में जल बरसाते हैं जिससे खेती फलती-फूलती है। इसके अलावा हिमालय प्रदेश में अनेक ऐसे शीतल स्थान हैं जहाँ लोग अपनी स्वास्थ्य-रक्षा के लिए जाते हैं।

क्षेत्रफल-जन-संख्या—भारतवर्ष विस्तार में रूस को छोड़कर सारे यूरोप के बराबर है। इसका क्षेत्रफल १८ लाख २ हजार वर्गमील है जिसमें ७ लाख ९ हजार वर्गमील में देशी रियासतें आबाद हैं। भारत की जन-संख्या सन् १९३१ ई० की मर्दुमशुमारी के अनुसार लगभग ३५ करोड़ है जिसमें लगभग २७ करोड़ हिन्दू और ८ करोड़ मुसलमान हैं। शेष अन्य धर्मों के माननेवाले सिक्ख, जैन, यहूदी, ईसाई आदि हैं। संयुक्त-प्रान्त की जन-संख्या सन् १९३१ की मनुष्य-गणना के अनुसार ४,९६,१४,८३३ है।

भारतवर्ष के तीन प्राकृतिक भाग—भारत के तीन प्राकृतिक भाग हैं।—(१) हिमालय का पहाड़ी प्रदेश। (२) आर्य्यावर्त। (३) दक्षिण।

(१) हिमालय का पहाड़ी प्रदेश—पहला भाग 'हिमालय प्रदेश' है। इसमें काश्मीर, नैपाल, भूटान, शिकम आदि पहाड़ी राज्य हैं। अफ़गानिस्तान की घाटियाँ और बिलोचिस्तान का रेगिस्तान भी इसमें शामिल है। यह प्रदेश अफ़गानिस्तान, काश्मीर से आसाम तक फैला हुआ है। इसमें अनेक ऊँची-ऊँची श्रेणियाँ हैं जो हमेशा बर्फ़

से ढकी रहती हैं। इन्हीं पहाड़ों से भारत की बड़ी बड़ी नदियां निकलती हैं जो दोआब के मैदान को मालामाल बनाती हैं।

(२) आर्यावर्त—आर्यावर्त हमारे देश के उस भाग का नाम है जो हिमालय और विन्ध्याचल पर्वत के बीच में है। आर्यों का निवासस्थान होने के कारण यह आर्यावर्त कहलाता है। इसकी जमीन समतल और उपजाऊ है। सिन्धु, गंगा, जमुना, ब्रह्मपुत्र और उनकी अनेक सहायक नदियां इसी विस्तृत क्षेत्र में बहती हैं। सिन्धु नदी १,५०० मील बहकर, सतलज, व्यास, रावी, चिनाब और झेलम का पानी लेती हुई अरब सागर में गिरती है। गंगा भी १,५०० मील बहकर जमुना, चम्बल, घाघरा, गण्डक, सरयू, रामगंगा आदि नदियों का पानी लेकर बंगाल की खाड़ी में गिरती है। इसी तरह ब्रह्मपुत्र भी १,८०० मील बहकर बंगाल की खाड़ी में मिल जाती है। इन नदियों की मदद से प्राचीन समय में खेती ही नहीं व्यापार भी खूब होता था। पानी से लबालब भरी रहने के कारण इनमें नावें चल सकती थीं। इन्हीं के द्वारा माल एक सूबे से दूसरे सूबे में पहुंचता था और जरूरत के वक्त सेना भी पहुंचाई जाती थी।

यही कारण है कि उत्तरी भारत के बड़े-बड़े नगर सब इन्हीं नदियों के किनारों पर बसे हुए हैं। यदि कोई यात्री ईस्ट इंडिया रेलवे के एक सिरे से दूसरे सिरे तक सफर करे तो उसे सुन्दर घने आमों के बाग और अन्न से लदे हुए खेत दिखलाई देंगे। रेगिस्तान अथवा जंगल का कहीं नाम-निशान नहीं दिखाई देगा। खेती और व्यापार की सुविधा होने से इस देश में दौलत की कमी नहीं थी। जितने हमला करनेवाले भारत में आये—उन्होंने यहीं लूटमार की और

राज्य स्थापित किये। मुसलमानो ने इसी देश मे पहले लूटमार की और अपना राज्य स्थापित किया।

भारत की सभ्यता को बढ़ाने मे गङ्गा नदी से बड़ी मदद मिली है। हिन्दू इसे हमेशा से पवित्र मानते आये है। संसार की कोई नदी इसकी बराबरी नही कर सकती। अधिकांश हिन्दुओ के लिए गङ्गा मे स्नान करना पापो से छुटकारा पाना और उसका नाम लेना एक बड़े पुण्य का कार्य है। इसका कारण यही है कि गङ्गा के जल से देश की अनुपम शोभा है; अन्न पैदा होता है जिससे मनुष्यो के प्राणो की रक्षा होती है।

राजपूताना—आर्यावर्त में राजपूताना भी शामिल है। यहाँ क्षत्रियो के राज्य अब तक मौजूद है। यह देश रेगिस्तान है। पानी की यहाँ कमी है। रेगिस्तान ने बाहरी हमला करनेवालों से राजपूतो की रक्षा की है। मुसलमान बादशाहो ने कई बार राजपूत-राज्यो पर चढ़ाई की। परन्तु उनका आधिपत्य केवल नाम-मात्र के लिए ही रहा।

(२) दक्षिण—दक्षिण एक त्रिभुज की शकल का प्लेटो है जो विन्ध्याचल पर्वत से कुमारी अन्तरीप तक फैला हुआ है। इसके तीन तरफ पहाड़ है। पश्चिम मे पश्चिमी घाट, पूर्व में पूर्वीय घाट और उत्तर में विन्ध्या और सतपुड़ा पर्वत और नर्मदा नदी। पहले वह सारा देश जो विन्ध्याचल और कुमारी अन्तरीप के बीच में है दक्षिण कहलाता था। परन्तु आजकल दक्षिण इस प्लेटो के केवल पश्चिमी भाग को कहते है, जिसमें निज़ाम का राज्य और बम्बई का अहाता शामिल है। नर्मदा, गोदावरी, कृष्णा, तुङ्गभद्रा आदि नदियाँ

में बहती है। परन्तु गङ्गा, जमुना के साथ उनकी तुलना नहीं जा सकती। शेष भाग तुंगभद्रा नदी से कुमारी अन्तरीप क सुदूर दक्षिण या तामिल प्रदेश कहलाता है। अधिकांश द्रास अहाता और मैसूर, कोचीन, ट्रावनकोर आदि रियासतें इसी के अन्तर्गत हैं। दक्षिण को विन्ध्याचल पर्वत और नर्मदा नदी उत्तरी भारत से अलग करते हैं। इसलिए वहाँ आर्य्य-सभ्यता का प्रचार होने में कठिनाई हुई। परन्तु तो भी आर्य्यों के रीति-रवाज, खान-पान, आचार-विचार बहुत कुछ दक्षिण में फैल गये। मुसलमान भी दक्षिण को आसानी से न जीत सके। उनका आधिपत्य वहाँ कभी पूर्णरीति से स्थापित नहीं हुआ। इसी लिए दक्षिण पर मुसलमानों के रीति-रवाज, आचार-विचार का बहुत कम प्रभाव पड़ा।

दक्षिण में उत्तरी भारत की तरह विस्तीर्ण, समतल मैदान नहीं है। जमीन ऊँची-नीची है। विशेषकर महाराष्ट्र में जहाँ मराठे रहते हैं जमीन पहाड़ी है और जङ्गलों से ढकी हुई है। इन पहाड़ों में क़िले बनाना आसान था, इसी लिए १७ वीं और १८ वीं शताब्दी में मराठों ने मुग़लों का खूब मुकाबिला किया। जलवायु का प्रभाव भी लोगों की रहन-सहन पर काफी पड़ा है। वे कष्ट से नहीं घबराते और परिश्रम करने के लिए हमेशा तैयार रहते हैं। यही कारण है कि छोटे-छोटे टट्टुओं पर चढ़नेवाले, रूखा-सूखा भोजन करनेवाले मराठों ने मुग़लों की विशाल सेना को नाकों चने चिनवा दिये।

भारत का समुद्री तट—जिस तरह भारत उत्तरी सीमा ... पश्चिम की त... सुरक्षित है उसी तरह दक्षिण, दक्षिण-पूर्व और ... अँगरेज़ों के आने तक समुद्र ... गहरे नीले समुद्र उसकी रक्षा करते हैं।

तरफ से कोई भारत पर हमला नहीं हुआ था। इसलिए भारतीय शासकों ने कभी इस बात का ख़याल नहीं किया कि समुद्रतट की रक्षा करना भी जरूरी है। परन्तु जब अरब के मुसलमान और यूरोप के व्यापारियों ने समुद्र के रास्ते से भारत पर हमला किया तब उनको पता लगा कि केवल स्थल की लड़ाई से राज्य की रक्षा नहीं हो सकती। मुगल-राज्य के नष्ट-भ्रष्ट होने पर यूरोप के लोग समुद्र के मार्ग से हमारे देश मे घुस आये और उन्होने अपनी बस्तियाँ बना ली। देश की दुर्दशा देख उन्हे राज्य बनाने की इच्छा हुई और इस प्रयत्न मे वे सफल हुए। अँगरेजो ने अपनी समुद्री शक्ति के जोर से ही पूर्वीतट पर अपना अधिकार जमाया और बंगाल को अपने क़ब्ज़े मे किया।

आज भी समुद्र के द्वारा भारत का संसार से सम्बन्ध है। विदेशों के साथ व्यापार होता है और लोग आसानी से बाहर आ-जा सकते है। जैसा पहले कह चुके है दक्षिण के दोनों ओर दो पहाड़ों की श्रेणियाँ है। इनके नाम है---पूर्वी घाट और पश्चिमी घाट। पश्चिमी किनारा मलाबार और पूर्वी किनारा कारोमंडल कहलाता है। समुद्र के किनारो पर ऐसे बन्दरगाह बहुत कम है जहाँ बड़े-बड़े जहाज़ ठहर सकते है। यही कारण है कि यहाँ के निवासी यूरोप के लोगों की तरह कभी बड़े मल्लाह नहीं हुए।

भारत का ऐश्वर्य—भारत बड़ा रमणीक देश है। इसके प्राकृतिक सौन्दर्य का हम पहले वर्णन कर चुके है। इसमें अनेक पहाड़ों की श्रेणियाँ, नदी-नद, धन-धान्य से भरे हुए मैदान, अथाह समुद्र और मरुस्थल है। यदि एक तरफ रेगिस्तान है जहाँ गर्मी के

मारे शरीर झुलस जाता है तो दूसरी तरफ़ ऐसे भी स्थान हैं जहं मनुष्य को अनुपम शीतलता और शान्ति मिलती है। शिमला, दार्जलिङ्ग, नैनीताल, आबू के पहाड़ बड़े सुन्दर हैं। यहाँ लोग हवा खाने जाते हैं। इन स्थानों में वनस्पति तथा अद्भुत फल-फूल मिलते हैं जो इनकी शोभा को बढ़ाते हैं।

प्राकृतिक सौन्दर्य के अलावा इस देश में धन-दौलत की कमी कभी नहीं रही। इसकी ज़मीन स्वाभाविक रीति से ही उपजाऊ है। भारत-भूमि रत्नों का खज़ाना है। यहाँ धान, जूट, चाय, गेहूँ, कपास, टसर, ऊन बहुतायत से पैदा होते हैं। हीरा, सोना, चाँदी, लोहा, कोयला, ताँबा इत्यादि की भी खान पाई जाती हैं। और भी अनेक प्रकार के क़ीमती पत्थर और मोती आदि मिलते हैं। इसी दौलत की वजह से किसी समय भारतवर्ष संसार के बड़े देशों में गिना जाता था। इसी के लालच से विदेशियों ने भारत पर बार-बार हमले किये और लूट-मार की। खाने-पीने की चीजों की यहाँ हमेशा सुविधा थी। इसलिए लोगों ने धर्म, ज्ञान, शिल्प और वाणिज्य की बड़ी उन्नति की। यही कारण है कि भारत को संसार के देशों में श्रेष्ठ स्थान मिला है।

कुछ लोगों का कहना है कि अनायास जीविका मिलने के कारण भारतवासी आलसी और दुर्बल हो गये और इसी लिए उन्हें विदेशियों ने जीत लिया। परन्तु यह बात ठीक नहीं। भारतीय सिपाही लड़ने में संसार की किसी जाति से कम न थे। परन्तु उनमें एकता न थी। इसी लिए वे देश की स्वाधीनता की रक्षा न कर सके।

भारत की एकता—यह सच है कि भारतवर्ष में अनेक धर्म, जाति, मत और सम्प्रदायों के लोग रहते हैं और जुदे-जुदे

भाषायें बोलते हैं। परन्तु तब भी इस भेद-भाव के होते हुए भारत के लोगों में एकता मौजूद है। हिन्दुओं के प्राचीन धर्म-ग्रन्थों में भारत एक ही देश माना गया है। वेद, पुराण देश भर में धार्मिक ग्रन्थ माने जाते हैं और श्रद्धा-भक्ति से पढ़े जाते हैं। हिन्दुओं के तीर्थ सभी प्रान्तों में मिलते हैं। बद्रिकाश्रम, रुद्रप्रयाग, हरिद्वार, जगन्नाथ, द्वारिका, रामेश्वरम आदि तीर्थ देश भर में फैले हुए हैं और प्राचीन समय से आज तक हिन्दू इनके दर्शन के लिए जाते हैं। गङ्गा, गोदावरी, हिमालय का सब जगह नाम लिया जाता है। जिन देवी-देवताओं की उत्तर में पूजा होती है उनका दक्षिण में भी बड़ा मान है। दिवाली, होली, जन्माष्टमी और दूसरे हिन्दुओं के त्योहार देश के भिन्न-भिन्न भागों में एक ही तरह मनाये जाते हैं। गृहस्थों के रिवाज, आचार-विचार में भी अधिक भेद नहीं है। दक्षिण में इतनी जातियाँ नहीं हैं जितनी उत्तरी भारत में, परन्तु तब भी यह मानना पड़ेगा कि वर्णाश्रम धर्म का प्रचार वहाँ भी काफी है।

शासन-प्रबन्ध के लिए भी प्राचीन समय में देश एक ही माना गया है। चन्द्रगुप्त, अशोक, समुद्रगुप्त आदि राजाओं को इतिहास में सम्राट् की उपाधि दी गई है। इनके राज्य में भारत का बहुत-सा भाग शामिल था और अनेक राजा इन्हें अपना अधीश्वर मानते थे। मुग़ल बादशाहों के समय में भी एकता का बिलकुल अभाव न था। अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ को भारत के अधिकांश लोग अपना सम्राट् मानते थे। आजकल यह एकता का भाव पहले से अधिक है। शिक्षा, रेल, तार और अंगरेज़ी शासन ने इसके बढ़ाने में बड़ी मदद की है।

अभ्यास

१—हमारे देश का नाम भारतवर्ष क्यों पड़ा? भारतवासी हि
क्यों कहलाते हैं?

२—आबहवा का मनुष्य पर क्या प्रभाव पड़ता है?

३—भारतवर्ष की भौगोलिक स्थिति का इतिहास पर प्रभा
बताओ।

४—भारत के तीन प्राकृतिक भाग कौन-कौन से हैं?

५—क्या कारण है कि जितने बाहरी हमले हिन्दुस्तान पर हु
वे सब दोआब में ही हुए?

६—दक्षिण में आर्य्य-सभ्यता का उतना प्रचार क्यों नहीं हुआ
जितना उत्तर में?

७—हमारे इतिहास पर समुद्र का क्या प्रभाव पड़ा है?

८—भारतवर्ष में मौलिक एकता पाई जाती है। इस कथन
की उदाहरण देकर व्याख्या करो।

अध्याय २

भारत के प्राचीन निवासी

प्राचीन इतिहास—भारत का प्राचीन इतिहास आर्य्यों के आने से आरम्भ होता है। परन्तु इससे यह न समझना चाहिए कि आर्य्यों के पहले यहाँ कोई रहता ही न था और न कोई सभ्यता थी। आजकल पुरानी चीजों की खोज हो रही है, जिससे पता लगता है कि आर्य्यों के आने से पहले भी हमारे देश में द्रविड़ जाति के लोग रहते थे। वे सभ्य थे और उनका जीवन इतिहास में वर्णन करने के योग्य है। उनका हाल हम तुम्हें आगे चलकर बतायेंगे।

पाषाण-काल—मनुष्य एकदम सभ्य नहीं हो गया है। वह अपनी वर्तमान दशा को धीरे-धीरे पहुँचा है। द्रविड़ भारत के आदि-निवासी नहीं थे। उनके पहले भी यहाँ ऐसे लोग रहते थे, जो सभ्य नहीं थे। ये मनुष्य पाषाण (पत्थर) काल के मनुष्य कहलाते हैं। इनका रंग काला, क़द छोटा, शरीर पर ऊन जैसे बाल थे। ये जङ्गलों में कन्द, मूल, फल खाकर रहते थे और मछली आदि दूसरे जानवरों का शिकार कर जीवन-निर्वाह करते थे। खेती-बारी का उन्हें ज्ञान नहीं था। धातु का प्रयोग वे नहीं जानते थे। उनके औजार पत्थर के होते थे। इसलिए उन्हें पाषाण-युग के मनुष्य कहते हैं। वे आग पैदा करना भी नहीं जानते थे।

उत्तर पाषाण-काल—इन प्राचीन निवासियों पर बाहर से आनेवाले कुछ और लोगों ने हमला किया जिन्हें हम उत्तर पाषाण-काल यानी दूसरे पत्थर-काल के मनुष्य कहते हैं। ये लोग भी पत्थर के ही औज़ार काम में लाते थे। परन्तु उन्हें काट-छाँटकर चिकने और सुन्दर बनाते थे। वे तीर-कमान चलाना जानते थे और बर्छी, भाला भी चला सकते थे। वे चाक के ज़रिये से मिट्टी के बर्तन बनाते थे और कुछ-कुछ धातु का भी ज्ञान रखते थे। इनकी भाषा जुदी थी। मध्यप्रदेश की संथाल, कोल, मुंडा आदि जातियाँ आसाम के खासी और अंडमन, नीकोबार द्वीपों के निवासी भी ऐसी ही बोली बोलते हैं।

द्रविड़-जाति—कुछ समय के बाद एक दूसरी जाति जिसे द्रविड़ कहते हैं भारत में आई। ये लोग कहाँ से आये इस प[illegible] विद्वानों में मतभेद है। कुछ लोगों का कहना है कि वे समुद्र [illegible] तरफ़ से आये और सिन्धु नदी तक फैल गये। दूसरी राय यह कि वे उत्तर-पश्चिम के दर्रों से आये होंगे क्योंकि अभी तक बिलो-चिस्तान में कुछ लोग ऐसी भाषा बोलते हैं जो द्रविड़ भाषाओं से बहुत कुछ मिलती-जुलती है। द्रविड़ों ने यहाँ के निवासियों को जीत-कर देश में अपना अधिकार जमा लिया। कुछ भी हो, इतना ज़रूर मानना पड़ेगा कि किसी समय सारे देश में द्रविड़ों का ही दौर-दौरा था।

उत्तरी भारत में जब आर्य्यों ने द्रविड़ों को लड़ाई में हरा दिया तब वे दक्खिन की ओर चले गये। मद्रास, बम्बई और तामिल देश में अभी तक द्रविड़-जाति के लोग रहते हैं। मध्यप्रदेश में [illegible]ना,

छोटानागपुर में जो संथाल गोंड आदि जातियाँ हैं वे द्राविड़ों की सन्तान हैं। दक्षिण में द्राविड़ों का दबदबा बहुत दिन तक रहा। यही कारण है कि द्राविड़-सभ्यता का प्रभाव वहां आज तक मौजूद है। दक्षिण की भाषाएं तामिल, तेलगू, कनाड़ा, द्राविड़-जाति की भाषा से बहुत मिलती-जुलती हैं।

द्राविड़-सभ्यता—द्राविड़-जाति के लोग जंगली नहीं थे। वे सभ्य थे। वे धातु का प्रयोग करते थे और मकान, क़िले बनाना भी जानते थे। वे तांबे के अस्त्र-शस्त्र बनाते और सोने-चाँदी के आभूषण पहनते थे और तांबे के सिक्के भी चलाते थे। उन्हें नावें बनाना आता था। इन्हीं में बैठकर वे समुद्रों को पार करते थे। व्यापार में भी वे बढ़े-चढ़े थे। वे लिखना-पढ़ना भी जानते थे परन्तु उनके अक्षर आजकल के-से नहीं थे। वे चित्र अथवा चिह्नों द्वारा अपने मन का भाव प्रकट करते थे। उनके देवी-देवता भी थे जिनकी वे पूजा करते थे। आर्य्यों की तरह वे अपने मुर्दों को जलाते नहीं थे। ज़मीन में गाड़ देते थे और शव के साथ ही मृत पुरुष अथवा स्त्री के गहने, अस्त्र-शस्त्र और भोजन की सामग्री भी गाड़ देते थे।

धीरे-धीरे द्राविड़-जाति सारे देश में फैल गई। भारत के प्राचीन निवासियों के साथ मिल जाने और गर्मी के कारण उनका रंग काला हो गया। परन्तु उनकी सभ्यता का प्रचार देश भर में हो गया। उनकी भाषा, आचार-विचार, रीति-रिवाज लोगों ने ग्रहण कर लिये।

जातियों का हेल-मेल—आजकल भारतवर्ष के लोग हिन्दुस्तानी कहलाते हैं। परन्तु यह न समझना चाहिए कि ये सब एक ही

जाति के हैं। कालान्तर में बहुत-सी जातियाँ हिन्दुस्तान में आईं और मिल-जुलकर एक हो गईं। साधारण तौर पर हम हिन्दुस्तान के लोगों को तीन जातियों में विभाजित कर सकते हैं। एक तो वे लम्बे, गोरे, सुडौल लोग जो आर्य्यों के नाम से प्रसिद्ध हैं और जिनके वंशज उच्च श्रेणी के हिन्दुओं में कश्मीर, पंजाब आदि देशों में पाये जाते हैं। दूसरे वे काले, कुरूप, चपटी नाकवाले जो द्रविड़ों की सन्तान हैं और जंगल में पाये जाते हैं। बंगाल, दक्षिण, छोटा नागपुर आदि प्रदेशों में अब भी बहुत-से ऐसे लोग हैं जो द्रविड़ों की सन्तान हैं। तीसरे पीले रंग के लोग जो ब्रह्मा, तिब्बत, भूटान, नैपाल और हिमालय की तराई में पाये जाते हैं। ये मंगोल जाति के वंशज हैं। जैसे-जैसे समय बीतता गया ये जातियाँ एक दूसरी से मिल गईं। आर्य्यों का द्रविड़ों के साथ सम्पर्क होने पर आर्य्य-सभ्यता का भी उन लोगों पर प्रभाव पड़ा। परन्तु दक्षिण में द्रविड़ों का प्रभाव बहुत रहा। अब भी उत्तरी भारत और दक्षिण के लोगों के रीति-रवाज में बहुत बड़ा अन्तर दिखाई देता है।

हिन्दुस्तान में आर्य्यों के बाद और भी अनेक जातियाँ बाहर से आईं। जैसे शक, कुशान, श्वेतहूण आदि, जो आर्य्यों में खप गईं और जिन्होंने हिन्दू-धर्म स्वीकार कर लिया। मुसलमान सैमीटिक जाति के थे। परन्तु भारत में आने पर उनका भी अन्य जातियों के साथ बहुत कुछ सम्मिश्रण हो गया।

हरप्पा और मोहिनजोदड़ो की खोज—हरप्पा और मोहिन-जोदड़ो में जो खुदाई हुई है उसने हमारे इतिहास पर एक नया प्रकाश डाला है। हरप्पा पंजाब के माँटगोमरी ज़िले में लाहौर और

मोहिंजोदड़ो के खंडहर

موہن جو دڑو کے کھنڈر
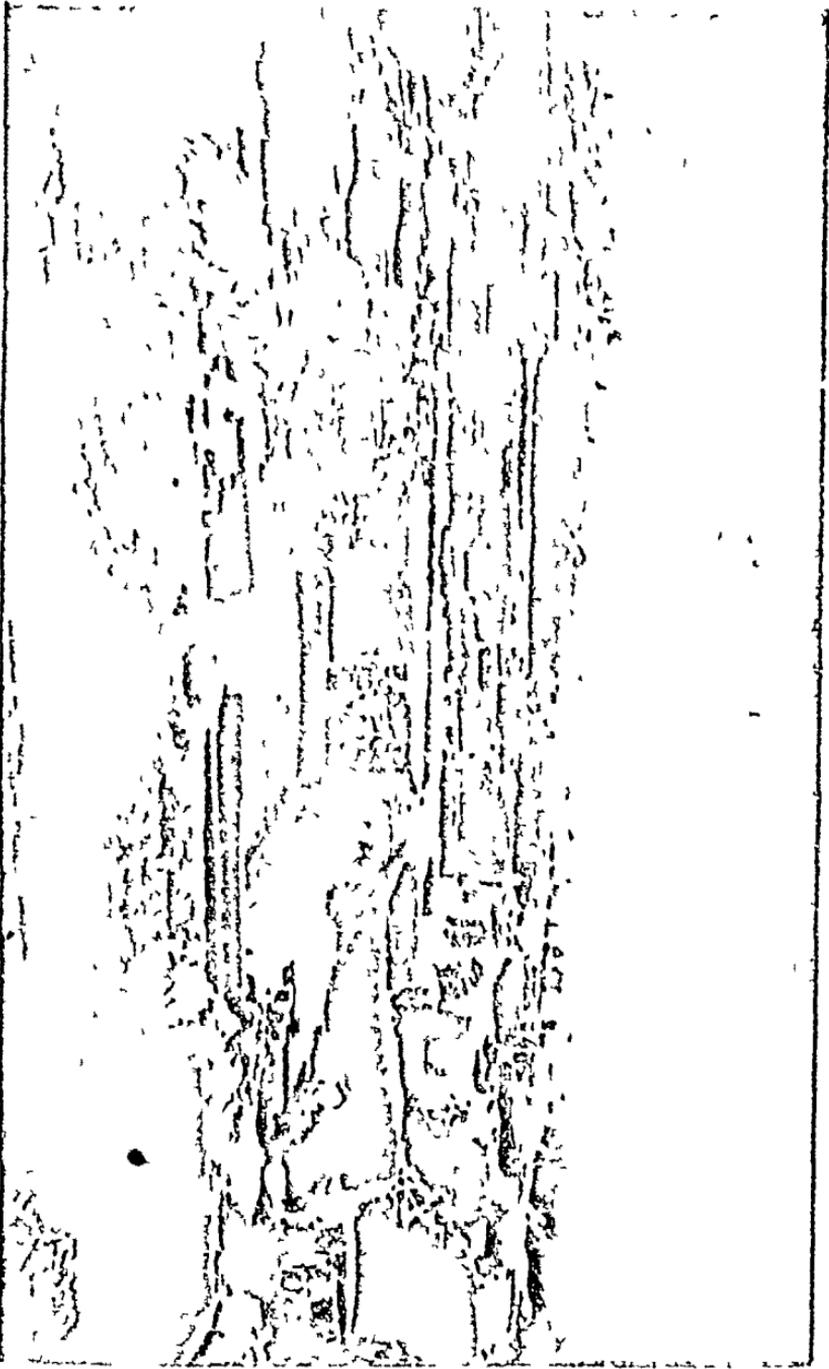
भारत के मूलनिवासियों के अस्त्र-शस्त्र
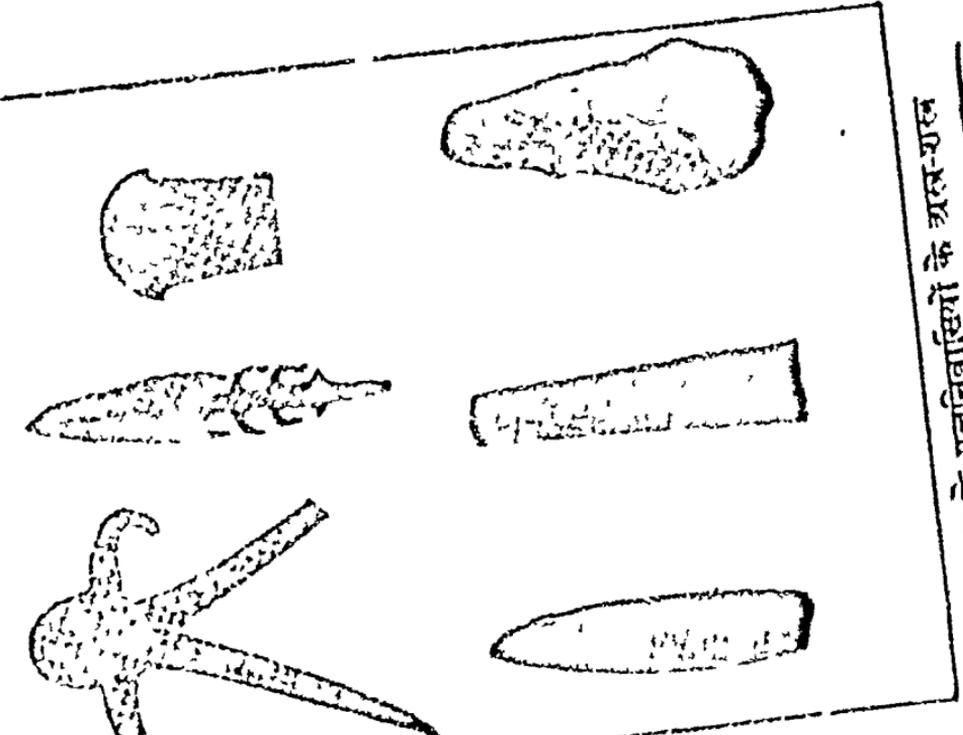
मुलतान के बीच रेलवे लाइन के पास एक गाँव है। मोहिनजोदड़ो सिन्ध मे लारकाना जिले मे एक स्थान है। यह हरप्पा से ४५० मील के लगभग है। सिन्धी भाषा मे इसका अर्थ है "मोहिन का टीला"। इन दोनो स्थानो पर थोड़े दिन हुए कई नगर खोदकर निकाले गये है। इस खुदाई मे जो चीजे मिली हैं उनसे अनुमान किया जाता है कि आज से ५ हजार वर्ष पहले भी मुलतान और सिन्ध मे सभ्य मनुष्य बड़े-बड़े नगर, सुन्दर मकान, तालाब, सड़के, मन्दिर बनाकर रहते थे और सुख से अपना जीवन व्यतीत करते थे। यूरोप के विद्वानो की राय है कि ऐसे नगर प्राचीन मिस्र और बाबुल (बेबीलन) देशो में भी न थे।

मोहिनजोदड़ो में जो नगर खोदने से मिले हैं उनमें पक्की ईंटों के मकान बने हुए हैं। मन्दिरो के चिह्न भी पाये जाते हैं। ढकी हुई नालियाँ मिलती है जिनके ज़रिये से शहर का पानी बाहर निकाला जाता होगा। एक तालाब मिला है जो ३९ फ़ुट लम्बा और २३ फ़ुट चौड़ा है। उसके चारों तरफ़ दालान हैं और नीचे उतरने के लिए सीढ़ियाँ हैं। मकानो और दूकानों के भी काफ़ी निशान मौजूद हैं, जिनसे अनुमान होता है कि इन नगरो मे रहनेवाले धनी थे।

हरप्पा में भी ऐसी ही चीज़े देखने में आती हैं। ऐसा मालूम पड़ता है कि यहाँ जो लोग रहते थे उनकी पोशाक सादी थी। उच्च श्रेणी के मनुष्य केवल दो कपड़े पहनते थे। एक धोती और दूसरा दुशाला जिसे वे सीधी बाँह के नीचे होकर बायें कन्धे पर डालते थे, छोटी जातियो के लोग क़रीब-क़रीब नंगे रहते थे। स्त्रियाँ एक छोटी-सी धोती पहनती थीं। आदमी छोटी दाढ़ी रखते थे और कभी-कभी

मूँछों को बिलकुल साफ करा देते थे। जेवर पहनने का स्त्री-पुरु सबको शौक था। अमीरों के गहने सोने, चाँदी के होते थे, गरीबं के सीप के। ये लोग अपने मुर्दों को जलाते थे और राख औ हड्डियों को ज़मीन में गाड़कर उनके ऊपर समाधि बना देते थे। मन्दिरों के देखने से पता लगता है कि इन लोगों के देवी-देवता भी थे जिनकी वे पूजा करते थे।

यहाँ खेती होती थी। गाय, भैंस, घोड़ा, ऊँट आदि जानवर पाले जाते थे। दस्तकारी भी इन नगरों के लोग जानते थे। यहाँ जो चरखे मिले हैं उनसे प्रकट होता है कि लोग कातना बुनना भी जानते थे। धातु का भी ये लोग प्रयोग करते थे। हथियार इन नगरों में कम पाये जाते हैं। शायद इनमें रहनेवालों को लड़ने-भिड़ने का शौक़ नहीं था।

हरप्पा में लगभग एक हजार के मुहरें मिली हैं, जिन पर अक्षर बने हुए हैं। इससे जान पड़ता है कि इन नगरों के लोग लिखना भी जानते थे। इनका लिखने का तरीक़ा हिन्दी की तरह बाईं तरफ से सीधी ओर को था। विद्वान् लोग इस बात की खोज कर रहे हैं कि इन नगरों के निवासी कौन थे, क्या हुए और उनका धर्म क्या था? सम्भव है इस खोज से यह पता लगे कि हमारे देश की सभ्यता और भी प्राचीन है।

अभ्यास

१—भारत का इतिहास कब से आरम्भ होता है?

२—क्या यह कहना ठीक है कि आर्यों के आने से पहले भारतवर्ष के लोग सभ्य नहीं थे?

३—पाषाणयुग का क्या अर्थ है ? उत्तर पाषाण-काल के मनुष्यों की विशेषता का वर्णन करो।

४—द्रविड लोग भारत मे कहाँ से आये ? उनकी सभ्यता का वर्णन करो।

५—भारत की मुख्य तीन जातियाँ कौन-सी है ? इन जातियों के लोग कहाँ-कहाँ पाये जाते है ?

६—हरप्पा और मोहिनजोदडो कहाँ है ? इनमे जो खुदाई हुई है उससे हमें क्या नई बात मालम होती है ?

७—जो नगर यहाँ खोदकर निका
रहन-सहन के विषय मे तुम

अध्याय ३

आर्य्यों का भारत में आना और उनकी सभ्यता

आर्य्य कौन थे—साधारण तौर पर हमारे देश का इतिहास आर्य्यों के आने पर आरम्भ होता है। इस बात को आज से लगभग चार-पाँच हज़ार वर्ष हुए होंगे। ये आर्य्य वही गोरे, सुडौल, सभ्य मनुष्य हैं जिनका हम पहले अध्याय में वर्णन कर चुके हैं।

आर्य्य लोग उसी जाति के थे जिसमें कि ग्रीक, रोमन, अँगरेज़, फ़्रांसीसी, जर्मन आदि यूरोप-वासियों के पूर्वजों की गिनती होती है। एक समय ऐसा ज़रूर था, जब कि इन सबके पूर्वज एक ही जगह रहते थे और एक ही भाषा बोलते थे। इस विषय पर विद्वानों में बड़ा मतभेद है। कोई-कोई कहते हैं कि आर्य्यों का आदि-स्थान मध्य एशिया में था। वहाँ से वे यूरोप और एशिया के अन्य भागों में फैल गये। कोई कहता है कि वे उत्तर में मानसरोवर झील की तरफ़ से आये थे। कुछ विद्वानों की राय है कि वे आस्ट्रिया में डैन्यूब नदी के आस-पास रहते थे और वहाँ से दुनिया में फैल गये। इनके अलावा और लोग हैं जिनका कहना है कि उनका आदि-स्थान उत्तरी ध्रुव के पास था। इस लम्बी-चौड़ी बहस में न पड़कर एक बात याद रखने योग्य है। वह यह कि अधिकांश विद्वान् अभी यही मानते हैं कि आर्य्यों का आदि-स्थान मध्य एशिया में ही था। वहाँ से चलकर वे यूरोप और एशिया के अन्य देशों में

बस गये। जो एशिया के देशों की तरफ चल पड़े उनमें से कुछ फारस में रह गये और उनके लक्षण बहुत-से अभी तक पारसियों में पाये जाते हैं। कुछ हिन्दूकुश के दर्रों में होकर पञ्जाब की तरफ चले आये और वहीं रहने लगे।

आर्य्य भारत में आने से पहले ही सभ्य थे। वे छोटे-छोटे गाँवों में मकान बनाकर रहते थे, खेती करते थे और गाय, बैल, घोड़ा, भेड़, बकरी आदि पशुओं को पालते थे। उन्हें कपड़ा बुनना भी आता था और वे धातु का प्रयोग भी जानते थे। वे लड़ने-भिड़ने में कुशल थे और अस्त्र-शस्त्र बनाना जानते थे। वे रथ और नाव भी बना सकते थे। जब उनकी संख्या बढ़ गई और रहने के लिए आदि-स्थान में जगह नहीं मिली तब उन्होंने दूसरे देशों की तरफ कूच किया।

आर्य्यों का विस्तार—आर्य्यों ने भारत में खैबर की घाटी से प्रवेश किया। परन्तु यह न समझना चाहिए कि वे एकदम इस देश में घुस आये। वे कई दलों में विभाजित थे। यही दल एक-एक करके आते गये और पञ्जाब में बस गये। इनमें से कुछ सिन्ध, गुजरात होते हुए मालवा तक पहुँच गये। परन्तु विन्ध्याचल पर्वत के कारण वे दक्षिण की ओर न बढ़ सके। कुछ हिमालय पर्वत के नीचे-नीचे चलकर संयुक्त-प्रदेश आगरा अवध और बिहार में पहुँच गये। गंगा-यमुना के बीच के देश में रहनेवाले आर्य्य शक्तिशाली हो गये और धीरे-धीरे उन्होंने अपने स्वाधीन राज्य स्थापित कर लिये। इन राज्यों का हम आगे चलकर वर्णन करेंगे।

आर्य्यों और अनार्य्यों का युद्ध—आर्य्यों को अपनी बस्तियाँ बनाने में बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा। उन्हें

द्रविड़ जाति के लोगों के साथ युद्ध करना पड़ा। आर्य्य गौर वर्ण और सुन्दर थे। उन्हें अपने रूप-रंग पर गर्व था। इसलिए वे अनार्य्यों को घृणा की दृष्टि से देखते थे और उनके लिए दस्यु (दास, गुलाम) आदि शब्दों का प्रयोग करते थे। अनार्य्य बिलकुल जंगली नहीं थे। उनके पास धन-धान्य की कमी न थी। वे विदेशों के साथ व्यापार करते थे और लकड़ी, मसाले, मोती, कपड़ा आदि बाहर भेजते थे। लड़ना-भिड़ना भी वे लोग खूब जानते थे। उनके राजा पत्थर के क़िलों में शान-शौकत से रहते थे। राज-सभा में सब लोग बैठकर राज्य के मामलों पर विचार करते थे, परन्तु अन्तिम निर्णय राजा ही करता था। आर्य्यों को अनार्य्यों के साथ जोर की लड़ाई करनी पड़ी। कभी-कभी तो ऐसा होता था कि दोनों ओर से बड़ी-बड़ी सेनायें एक दूसरे का सामना करती थीं और खूब मार-काट होती थी। सुदास नामक अनार्य्यों के योद्धा ने युद्ध में कई बार लोहा लिया और आर्य्यों के छक्के छुड़ा दिये। अन्त में आर्य्यों ने उनके किले नष्ट कर दिये, मकान गिरवा दिये और उन्हें जीतकर गुलाम बना डाला। लाचार होकर अनार्य्यों ने आर्य्यों की अधीनता स्वीकार कर ली। वे दास कहलाने लगे। बहुत-से दक्षिण की तरफ भाग गये और बहुत-से पहाड़ों में जा छिपे। कोल, भील, गोंड और हिमालय की अन्य जातियाँ इन्हीं लोगों की सन्तान हैं।

आर्य्यों के लिए अनार्य्यों से बिलकुल अलग रहना कठिन था। धीरे-धीरे उनमें मेल-मेल हो गया। परस्पर खान-पान, विवाह

आदि भी होने लगे। परिणाम यह हुआ कि आर्य्यों के रङ्ग-रूप, रहन-सहन में फ़र्क आगया और धीरे-धीरे बहुत-सी नई जातियाँ बन गईं।

वेद क्या है—आर्य्यों के सबसे प्राचीन ग्रन्थ वेद हैं। इन्हीं के द्वारा हमें आर्य्य-सभ्यता का हाल मालूम होता है। वेद शब्द का अर्थ है 'ज्ञान'। वेद चार है। ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद। ऋग्वेद सबमें प्राचीन है। विद्वानों की राय है कि यह ईसा से दो-ढाई हजार वर्ष पहले रचा गया होगा। इसमें १,००० से ऊपर मंत्र हैं। आर्य्यों और अनार्य्यों के युद्ध का भी ऋग्वेद में वर्णन है। वेद को 'श्रुति' अर्थात् 'सुना हुआ' भी कहते हैं। अधिकांश हिन्दुओं की धारणा है कि वेद भी अपौरुषेय हैं। अर्थात् मनुष्य के बनाये हुए नहीं हैं।

वेद एक ग्रंथ का नाम नहीं है—वेद एक साहित्य का नाम है जिनके चार भाग हैं। हर एक वेद के मन्त्रवाले भाग को **संहिता** कहते हैं। मंत्रों के अर्थ गद्य में हैं जिनमें यज्ञ करने के तरीके बतलाये गये हैं। इनका नाम **'ब्राह्मण'** है। इनके अलावा **आरण्यक** और **उपनिषद्** भी हैं, जिनमें ईश्वर, जीव, संसार के सम्बन्ध में विचार हैं। 'आरण्यक' ऐसे पवित्र समझे गये हैं कि उनका केवल जङ्गलों में ही मनन हो सकता है। आरण्यक और उपनिषदों का दर्जा भी किसी प्रकार वेदों से कम नहीं है।

वेदों को लोग प्राचीन समय में कंठ याद कर लेते थे। गुरु अपने शिष्यों को और फिर शिष्य अपने शिष्यों को बतलाते थे। इसी प्रकार वेदों का अध्ययन होता था। वेदों के मन्त्र देवताओं की स्तुति

के लिए रचे गये थे। इनके बनानेवाले वशिष्ठ, विश्वामित्र, अत्रि, अगस्त आदि ऋषि थे।

आर्य्यों का जीवन—वेदों के पढ़ने से हमें आर्य्यों की रहन-सहन का पता लगता है। वे कई दलों में विभक्त थे और लकड़ी के मकान और झोंपड़े बनाकर रहते थे। घर में जो सबसे बड़ा होता था वही मालिक समझा जाता था। उसी का सब कहना मानते थे। लोग बहुधा एक ही विवाह करते थे। बाल विवाह की भी प्रथा नहीं थी। स्त्री-पुरुष प्रेम से रहते थे और गृहस्थी के कामों में एक दूसरे का हाथ बटाते थे। लोग दो-तीन से अधिक कपड़े नहीं पहनते थे। रंग-बिरंगे कपड़े और ज़ेवर पहनने का स्त्री-पुरुष सबको शौक था। सोने के हार, कुण्डल, कड़े स्त्रियाँ भी पहनती थीं और पुरुष भी। बालों को लोग काढ़ते थे और उनमें तेल डालते थे। मर्द बहुधा दाढ़ी रखते थे और सिर के बीच में चोटी रखते थे। भोजन आर्य्यों का साधारण था। वे घी, चावल, दाल-रोटी, दूध, मक्खन, फल, तरकारी आदि खूब खाते थे। इनके अलावा वे मांस भी खाते थे और एक प्रकार का रस भी पीते थे जिसका नाम सोम था। यह बेल के डंठल को कुचलकर निकाला जाता था। वेदों में सुरा (शराब) का भी वर्णन है परन्तु उसका पीना पाप समझा जाता था। अपने मनो-विनोद के लिए लोग नाचना-गाना भी जानते थे। वे रथों में चढ़कर घूमते और हाथी, शेर, हिरन का शिकार भी करते थे। उत्सवों के समय खूब गाना-बजाना होता था और स्त्री-पुरुष आनन्द से अपना जीवन व्यतीत करते थे। आर्य्यों को अपने कर्त्तव्य का बड़ा खयाल था। प्रत्येक गृहस्थ अतिथि-सत्कार करना अपना धर्म समझता था।

वैदिक धर्म—वैदिक काल का धर्म आजकल का-सा नहीं था। न मन्दिर थे और न मूर्ति-पूजा। देवताओं की पूजा, स्तुति यज्ञ-द्वारा ही होती थी। आर्य्यों के देवता थे—द्यौस् (आकाश), इन्द्र, वरुण, उषा, वायु, अग्नि, सविता आदि। देवता सब बराबर समझे जाते थे। उनमें छोटे-बड़े का भेद न था। यज्ञ करने के नियम बने हुए थे। यज्ञ के समय मामूली अन्न, घी इत्यादि अग्नि में डाले जाते थे और ऐसा जान पड़ता है कि कभी-कभी पशुओं का भी बलिदान होता था। धीरे-धीरे बुद्धिमान् आर्य्यों ने इस बात का अनुभव किया कि ऐसी कोई शक्ति अवश्य है जिसने बिजली, मेघ, सूर्य, चन्द्रमा आदि बनाये हैं। वे उसके अस्तित्व पर विचार करने लगे। इस प्रकार उन्हें ईश्वर का ज्ञान हुआ और वे उसकी उपासना करने लगे। आर्य्यों को अपने देवताओं पर पूरा विश्वास था और उन्हें प्रसन्न करने के लिए वे सदाचारी बनने का प्रयत्न करते थे। भविष्य को उत्तम बनाने की आशा और इस लोक तथा परलोक में सुख पाने की इच्छा उन्हें बुरे मार्ग में जाने से रोकती थी।

वर्ण-व्यवस्था—वेदों के समय में आजकल का-सा जाति-भेद नहीं था। जब आर्य्य भारत में आये तो उन्हें यहाँ काले रङ्ग के लोग मिले। इसलिए 'वर्ण' अथवा रङ्ग का भेद होने लगा। गोरे मनुष्य कालों को घृणा की दृष्टि से देखने लगे और उन्हें दास अथवा शूद्र कहने लगे। पहले प्रत्येक मनुष्य खेती, युद्ध और पूजा करता था। परन्तु जब आर्य्यों की संख्या बढ़ गई और उन्हें युद्ध करना पड़ा तब उन्होंने काम बाटना प्रारम्भ किया। इस प्रकार चार वर्ण बन गये। जो शास्त्र पढ़ते, पूजा-पाठ करते थे वे ब्राह्मण कहलाये।

जो युद्ध और शासन करते थे, वे क्षत्रिय कहलाये। जो कृषि, शिल्प तथा वाणिज्य करते थे वे वैश्य कहलाये। इसके अलावा जो समाज की सेवा करते थे वे शूद्र कहलाने लगे। इन चार वर्णों मे ब्राह्मण-क्षत्रियो का अधिक जोर रहा। आजकल की जातियो की तरह इन वर्णों मे खान-पान, विवाह आदि की रोक-टोक नहीं थी। ब्राह्मण कहलाने का केवल उसी को अधिकार था जो वेद-शास्त्रो को पढ़ता था और यज्ञ कराने मे निपुण होता था। शूद्रो के साथ विवाह करना अच्छा नही समझा जाता था, परन्तु इसका निषेध नही था।

अभ्यास

१—आर्य्य हिन्दुस्तान मे कब और क्यों आये? उनका आदि-स्थान कहाँ पर बतलाया जाता है?

२—आर्य्यो ने भारत मे किस मार्ग से प्रवेश किया? उनके विस्तार का वर्णन करो।

३—आर्य्यो को इस देश मे अपनी बस्तियाँ बनाने मे क्या कठिनाई हुई? अनार्य्य कौन थे? उनके विषय मे क्या जानते हो?

४—वेद शब्द का क्या अर्थ है? वेद कितने है? सब वेदों मे प्राचीन वेद कौन-सा है?

५—वैदिक काल के आर्य्यो का जीवन कैसा था? वैदिक समाज मे स्त्रियो की क्या दशा थी? सक्षेप से वर्णन करो।

६—वेदों के समय के आर्य्य किस प्रकार शासन-प्रबन्ध करते थे? क्या उस समय के राजा स्वेच्छाचारी होते थे?

७—वैदिक धर्म सरल और पवित्र था। उसमे कोई मिथ्या पाखण्ड अथवा आडम्बर नही पाया जाता था। इस कथन की व्याख्या करो।

८—वर्ण और जाति मे क्या भेद है? वेदों के समय मे जातियाँ थी या नही? यदि थी तो किस प्रकार की?

अध्याय ४

उत्तर वैदिक काल में समाज की दशा

उत्तर वैदिक काल—वैदिक काल का अन्त होने पर उत्तर वैदिक काल आरम्भ होता है। वैदिक काल से यह भिन्न है। इस काल में आर्य्यों ने उत्तरी भारत में अपने राज्य स्थापित किये और उनके रीति-रवाज, रहन-सहन और धर्म-सम्बन्धी विचारों में बहुत कुछ फेर-फार हो गया। यह काम दस-बीस वर्ष का नहीं था। इसमें सैकड़ो वर्ष लगे होंगे। इसलिए इसका अलग वर्णन करना ही उचित समझा गया।

धर्म—तुम पहले पढ़ चुके हो कि वेद संस्कृत भाषा में थे और लोग उनके मन्त्रों को कंठ याद कर लेते थे। साधारण मनुष्य अब संस्कृत को भूलने लगे। उनकी एक नई भाषा बन गई। इसका नतीजा यह हुआ कि वेदों को पढ़ाने के लिए ब्राह्मणो की अधिक आवश्यकता पड़ने लगी। वैदिक धर्म मे भी अदल-बदल हो गया। पहले देवता पुराने पड़ गये और कुछ नये देवताओ की पूजा होने लगी। अब कर्म-काण्ड की धूम हो गई। ब्राह्मणों ने मनुष्य के गर्भ में आते समय से लेकर मृत्यु तक ४० संस्कार बना दिये और इसी तरह और भी बहुत-से आचार-विचार माने जाने लगे। यज्ञ तो होते ही थे। परन्तु इस काल के यज्ञों में दो विशेष ध्यान देने योग्य है। एक राजसूय, दूसरा अश्वमेध। राजसूय यज्ञ राजा के गद्दी पर बैठने के समय होता

था। अश्वमेध यज्ञ में एक घोड़ा छोड़ा जाता था। इस घोड़े के साथ १०० घोड़े और भी छोड़े जाते थे। उनकी रक्षा के लिए राजा के योद्धा साथ रहते थे। घोड़े को केवल वही पकड़ सकता था जो छोड़नेवाले से ज़बरदस्त हो। राजा अपनी रानी और मंत्रियो के साथ धूम-धाम से एक वर्ष तक यज्ञ करता था। इसके बाद घोड़ा वापस लाया जाता था और मारा जाता था। यह इस बात का प्रमाण था कि दूसरे राजाओ ने यज्ञ करनेवाले का आधिपत्य स्वीकार कर लिया है।

यज्ञ ही केवल मोक्ष-प्राप्ति का साधन न था। इसके अलावा ऋषियो ने यह भी बतलाया कि तपस्या से मनुष्य के सारे काम सिद्ध हो सकते हैं और उसे स्वर्ग का सुख मिल सकता है। लोग जंगलो में जाकर एकान्तवास करने लगे और जप-तप में लग गये। यज्ञो की जगह अब तपस्या का अधिक रवाज हो गया।

इसी समय कुछ लोग ऐसे भी थे जो कहते थे कि ज्ञान-द्वारा भी मनुष्य मोक्ष पा सकता है। इन्होने ब्रह्म जीव, संसार, जन्म, मृत्यु पर गम्भीर विचार किया। आरण्यक और उपनिषदों में ऐसे ही गूढ़ प्रश्नो पर ऋषियो के विचार हैं। ये भी इसी काल के बने हुए हैं।

आर्य्यों के चार आश्रम—प्राचीन ऋषियों ने मनुष्य की आयु के चार भाग किये थे। प्रत्येक भाग का नाम आश्रम है। ये हैं—ब्रह्मचर्याश्रम, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थाश्रम, संन्यासाश्रम। ब्रह्मचर्य आश्रम में विद्यार्थी गुरु के घर रहकर २५ वर्ष की अवस्था तक विद्या पढ़ता था। इसके बाद यदि वह चाहता तो गृहस्थाश्रम मे प्रवेश करता और जीविका कमाकर अपने परिवार का भरण-पोषण करता

था। इसके बाद वानप्रस्थाश्रम आरम्भ होता था जिसमें घर-बार छोड़कर वन मे रहकर मनुष्य आत्मा की खोज में तत्पर हो जाता था। इस आश्रम में जानेवाले कभी-कभी अपनी स्त्रियों को भी साथ ले जाते थे। ये लोग कम बोलते थे, देश में घूमते थे और भिक्षा माँगकर जीवन-निर्वाह करते थे। चौथा आश्रम संन्यास का था। इसमें मनुष्य वन में रहकर तपस्या करते थे। संन्यासियों को गाँव में भीतर जाने की आज्ञा न थी। वे कपड़ो की जगह चमड़ा अथवा वृक्षों की छाल से अपने शरीर को ढक लेते थे और कन्द-मूल-फल खाकर जीवन-निर्वाह करते थे।

ब्रह्मचर्य आश्रम के समाप्त होने पर मनुष्य को अधिकार था कि वह चाहे जिस आश्रम में जाय परन्तु मनुष्य एक के बाद दूसरे आश्रम में प्रवेश करते थे।

जातियों का विकास—पहले कह चुके हैं कि वैदिक काल में भी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र चार वर्ण थे। परन्तु उनमे विवाह अथवा खान-पान होता था। किसी प्रकार की रोक-टोक नहीं थी। मनुष्य अपना वर्ण बदल भी सकते थे। परन्तु कुछ समय के बाद शूद्रो का दर्जा छोटा हो गया। लोग उनसे घृणा करने लगे और विवाह आदि के कड़े नियम बनने लगे। यज्ञों में शामिल होने का उन्हे अधिकार नहीं रहा यहाँ तक कि अग्नि पर चढ़ाने के लिए गाय का दूध दुहने की भी उन्हे आज्ञा न रही। वर्ण-भेद बढ़ने लगा और धीरे-धीरे रंग, रूप, व्यवसाय के अनुसार बहुत-सी नई जातियाँ बन गईं। इनमें खान-पान, विवाह आदि का कुछ भी सम्बन्ध न रहा और एक जाति के लोग दूसरे जातिवालो से अपने को अलग समझने लगे। जाति की संस्था

भारत में एक विचित्र चीज़ है। इतनी जातियाँ दुनिया के किसी दूसरे देश मे नहीं पाई जातीं।

जाति-भेद ने हमारे देश की उन्नति में बड़ी बाधा डाली है। एकता का अभाव इसी का परिणाम है। लोग अपनी जाति के हित का ख़याल करते है; देश का नहीं। प्रत्येक जाति का पेशा अर्थात् कारबार नियत है। जो मनुष्य जिस जाति मे पैदा हुआ है वह उसी के काम को करता है। यही कारण है कि बहुत-से योग्य मनुष्य जिस दशा मे है उसी मे रह जाते है और उन्नति नही कर पाते। जाति के बन्धन के कारण लोग व्यापार अथवा विद्या पढ़ने के लिए विदेशो में नहीं जा सकते और अपनी बुद्धि का जौहर नहीं दिखा सकते।

समाज की दशा—जैसा पहले कह चुके हैं आर्यों के धर्म में अदल-बदल हो गया था। कई नये देवताओं की पूजा होने लगी थी। जातियो की संख्या बढ़ने लगी और उनका बन्धन भी कठिन हो गया। वेदो का पढ़ना ब्राह्मणो के ही हाथ मे था इसलिए वे ही समाज में बड़े समझे जाने लगे। शूद्रो की दशा पहले से ख़राब हो गई। वे नीचे समझे जाने लगे।

स्त्रियो का दर्जा पहले से ऊँचा हो गया। शिक्षा का भी उनमे खूब प्रचार था। गार्गी, मैत्रेयी जैसी विदुषी स्त्रियाँ ऋषियों के साथ सभा मे बैठकर शास्त्रार्थ करती थी और उनके गूढ़ प्रश्नो का उत्तर देती थीं।

आर्यों ने खेती मे भी उन्नति की। वे अनेक प्रकार के अनाज पैदा करने लगे और दस्तकारी की तरफ भी उन्होने ध्यान दिया। सोने-चाँदी के जेवर, मिट्टी के बर्तन, रथ, नाव, रङ्ग, कपड़े तरह-तरह

के बनने लगे और लोगों ने जीविका कमाने के लिए बहुत-से नये रोजगार निकाल लिये। गोश्त खाना और शराब पीना बुरा समझा जाने लगा।

राजाओं की शक्ति इस काल में अधिक हो गई। वे बड़े-बड़े साम्राज्य बनाने की इच्छा करने लगे जैसा कि राजसूय और अश्वमेध यज्ञों से प्रकट होता है।

विद्या की उन्नति—इस काल में विद्या की बड़ी उन्नति हुई। सूत्र इसी समय बने। पाणिनि ने व्याकरण का अष्टाध्यायी नामक ग्रन्थ बनाया जो आज तक हमारी संस्कृत की पाठशालाओं में पढ़ाया जाता है। रामायण और महाभारत के मूल ग्रन्थ भी इसी काल में रचे गये। गणित में शून्य का आविष्कार आर्य्यों ने किया और उनसे अरबवालों ने सीखा। यज्ञ की वेदियाँ बनाते-बनाते आर्य्यों को वर्ग-क्षेत्र, वृत्त, त्रिभुज आदि का भी ज्ञान हुआ।

रोगों की उत्पत्ति पर भी उन्होंने विचार किया और चिकित्सा के उपाय निकाले। गाने-बजाने में वे पहले ही से निपुण थे। सामवेद के मंत्र यज्ञ के समय गाये जाते थे और साथ-साथ बाजा भी बजाया जाता था।

अभ्यास

१—उत्तर वैदिक काल किसे कहते हैं ?
२—इस काल में वैदिक धर्म में क्या अन्तर हो गया था ?
३—राजसूय और अश्वमेध यज्ञों के करने का क्या अभिप्राय था ?
४—आर्यों के चार आश्रम कौन-कौन से हैं ? उनका वर्णन करो।
५—भारतवर्ष में इतनी जातियाँ कैसे बनीं ? इनके बढ़ने से क्या हानि हुई है ?
६—उत्तर वैदिक काल में समाज की क्या दशा थी ?
७—इस काल में आर्य्यों ने विद्या में क्या उन्नति की ? उनके बनाये हुए प्रसिद्ध ग्रन्थों के नाम बताओ।

अध्याय ५

आर्य्यों का विस्तार—रामायण और महाभारत

आर्य्यों का विस्तार—उत्तर वैदिक काल मे जिसका वर्णन पिछले अध्याय में कर चुके है आर्य्य लोग उत्तर दक्षिण में फैल गये। पंजाब से चलकर वे अब हिमालय से विन्ध्याचल पर्वत तक सारे उत्तरी हिन्दुस्तान मे वस गये और उन्होने अपने राज्य स्थापित कर लिये। ये राज्य थे कुरु, पांचाल, काशी कोशल, विदेह। वास्तव में ये नाम उन क्षत्रिय वंशों के है जिन्होंने ये राज्य वनाये। परन्तु राज्य भी इन्ही नामो से पुकारे जाते है। देश के मूलनिवासी युद्ध में हार गये और उन्होने भी आर्य्य-सभ्यता स्वीकार कर ली। पंजाब अब पीछे पड़ गया और सरस्वती और गंगा के बीच का देश सभ्यता का केन्द्र हो गया। इस प्रदेश के आर्य्य पंजावी आर्य्यों को छोटे दर्जे का समझने लगे।

इन राज्य स्थापित करनेवालों मे कुरु, पांचाल और कोशल वंश अधिक प्रसिद्ध है। इनमे बहुत दिन तक मेल-जोल रहा। परन्तु अन्त में वे अपनी-अपनी शक्ति बढ़ाने के लिए आपस में लड़ने लगे और जो जवर्दस्त था वह दूसरो को दबाने की चेष्टा करने लगा। महाभारत मे इसी आपस की लड़ाई का वर्णन है।

महाभारत और रामायण कब बने—महाभारत और रामायण हिन्दुओ के दो प्राचीन ग्रन्थ है। महाभारत को हिन्दू पाँचवाँ

वेद कहते है। इसके वनानेवाले वदव्यास मुनि कहे जाते है। महाभारत के मूल ग्रन्थ मे तो २४ हज़ार श्लोक थे परन्तु कालान्तर मे विद्वान् इनकी संख्या वढ़ाते गये यहाँ तक कि अव उसमे १ लाख श्लोक से भी अधिक है। यह ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता कि ये दोनो ग्रन्थ कव वने। परन्तु हिन्दू लोग यह मानते है कि रामायण महाभारत से पहले का है। यूरोप के विद्वानो का कहना है कि महाभारत का मूल ग्रन्थ ईसा के ५०० वर्ष पहले रचा गया होगा और ईसा की मृत्यु के ४००-५०० वर्ष वाद तक विद्वान इसे वरावर वढ़ाते रहे। महाभारत मे कौरव और पाण्डवो के महायुद्ध का वर्णन है।

रामायण भी हिन्दुओ का एक आदरणीय ग्रन्थ है। इसके रचयिता वाल्मीकि ऋषि कहे जाते है। इसमे प्राचीन आर्य्यों के आदर्शो का वर्णन है। इसका रचना-काल भी यूरोप के विद्वान् ईसा के ५०० वर्ष पहले से सन् ५०० ईसवी तक मानते है। रामायण मे जिस समाज का चित्र है वह महाभारत के समाज से कहीं अच्छा है। यदि रामायण में धर्म, कर्त्तव्यपालन और भक्ति का वर्णन है तो महाभारत मे ईर्ष्या, द्वेष, कलह, कपट और भीषण युद्ध का। रामायण की एक पुस्तक हिन्दी मे भी है जिसे रामचरितमानस कहते है। इसको गोस्वामी तुलसीदास जी ने अकवर वादशाह के समय मे वनाया था।

महाभारत की कथा—आधुनिक दिल्ली के पास प्राचीन समय मे हस्तिनापुर नाम का राज्य था। यहाँ चन्द्रवंशीय क्षत्रिय राजा राज्य करते थे। इन्ही मे एक राजा विचित्रवीर्य हुए जिनके दो पुत्र थे—धृतराष्ट्र और पाण्डु। धृतराष्ट्र वड़े और जन्म के अन्धे थे, इसलिए पाण्डु ही हस्तिनापुर के राजा वनाये गये। पाण्डु के पाँच

क्षेत्र की लड़ाई

वन-पथ पर

جنگل کے راستے پر

पुत्र थे—युधिष्टिर. भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव। युधिष्टिर सबसे बड़े थे और सत्यवादी थे। भीम और अर्जुन अपनी वीरता के लिए प्रसिद्ध थे। धृतराष्ट्र के सौ पुत्र थे। दुर्योधन सबमें बड़ा था। पाण्डु के बेटे पाण्डव और धृतराष्ट्र के कौरव कहलाते थे। बचपन में सब भाइयो ने साथ-साथ शिक्षा पाई, परन्तु आपस में ईर्ष्या-द्वेष का भी आरम्भ हो गया।

धृतराष्ट्र का बड़ा लड़का दुर्योधन पाण्डवो से द्वेप रखता था और सदा उन्हे नीचा दिखाने का उपाय सोचा करता था। उसने एक बार पाण्डवो को लाख के मकान में ठहराकर जला देने की कोशिश की परन्तु उन्हे पहले ही से इसका पता लग गया और वे बाहर निकल कर चले गये।

जब पाण्डव जंगल मे घूम रहे थे उन्हें खबर मिली कि पांचाल देश के राजा द्रुपद की बेटी द्रौपदी का स्वयंवर होनेवाला है। राजा द्रुपद ने प्रण किया था कि जो बॉस क ऊपर नाचती हुई मछली को नीचे तेल में परछाइं देखकर मारेगा उसी के साथ अपनी बेटी का विवाह कर दूंगा। अर्जुन ने निशाना मार दिया और द्रौपदी के साथ उसका विवाह हो गया। जब पाण्डव घर लौटे तो धृतराष्ट्र ने उन्हे आधा राज्य दे दिया और वे इन्द्रप्रस्थ में रहने लगे।

युधिष्टिर ने राजसूय यज्ञ किया परन्तु दुर्योधन यह सब कैसे सह सकता था। उसने अपने मामा शकुनि की सलाह से युधिष्ठर को जुआ खेलने के लिए बुलाया। जुए में युधिष्टिर अपना राज-पाट, धन-धाम सब कुछ हार गये। शर्त के अनुसार उन्हे भाइयो के साथ १३ वर्ष वन मे रहना पड़ा।

तेरह वर्ष बीतने पर जब घर लौटे तो पाण्डवों ने दुर्योधन से अपना राज्य माँगा। परन्तु उसने उत्तर दिया कि युद्ध किये बिना तो सुई की नोक के बराबर भी ज़मीन नहीं दूँगा। श्रीकृष्ण ने उसे बहुत समझाया परन्तु उसने एक न सुनी। अन्त में थानेश्वर के पास कुरुक्षेत्र के मैदान में १८ दिन तक भीषण संग्राम हुआ जिसमें सारे भारतवर्ष के राजा सम्मिलित हुए। कौरवों के लाखो योद्धा मारे गये और उनका सर्वनाश हो गया।

युधिष्ठिर हस्तिनापुर के राजा ही गये परन्तु थोड़े दिन बाद वे भी अपने भाइयों के साथ हिमालय की तरफ़ बर्फ में गलने चले गये।

भगवद्गीता—भगवद्गीता का तुमने ज़रूर नाम सुना होगा। जब कौरवों-पाण्डवो में युद्ध शुरू होनेवाला था, तब अर्जुन को एकाएक मोह उत्पन्न हुआ और उसने श्रीकृष्ण से कहा कि अपने कुटुम्बियों को मारकर राज्य लेने से तो भिक्षा करना अच्छा है। मैं नहीं लड़ सकता। इस पर कृष्ण ने उसे समझाया कि आत्मा अजर-अमर है। इसके लिए सोच करना वृथा है। धर्म के लिए युद्ध करना पाप नहीं है। गीता में यही सब उपदेश हैं।

रामायण की कथा—तुम पहले पढ़ चुके हो कि आर्य्यों के प्राचीन राज्यों में एक कोशल राज्य था। यह राज्य सरयू नदी के आस-पास के देश में था और अयोध्या नगर इसकी राजधानी थी। यहाँ इक्ष्वाकु वंश के राजा राज्य करते थे। इसी वंश में एक दशरथ नाम के राजा हुए। उनके तीन रानियाँ थीं— कौशिल्या सुमित्रा, कैकेयी। इन तीन रानियों से चार पुत्र उत्पन्न हुए—कौशिल्या के गर्भ से रामचन्द्रजी,

सुमित्रा के गर्भ से लक्ष्मण और शत्रुघ्न और कैकेयी के गर्भ से भरत।

रामचन्द्रजी बड़े धर्मात्मा और बुद्धिमान् थे। उनका मिथिला के राजा जनक की बेटी सीताजी के साथ विवाह हुआ था। जब राजा दशरथ ने वृद्धावस्था के कारण रामचन्द्रजी को युवराज बनाना चाहा तब कैकेयी ने बड़ा विघ्न डाला। उसने किसी समय राजा से दो वर देने का वादा करा लिया था। अब उसने दोनों वर माँगे—एक वर से अपने बेटे भरत के लिए राजगद्दी और दूसरे वर से रामचन्द्र के लिए १४ वर्ष का वनवास।

राजा दशरथ सत्यवादी थे। वे अपनी बात किस प्रकार लौट सकते थे। इधर रामचन्द्रजी भी इस बात को सहन नहीं कर सकते थे कि पिता का वचन झूठ हो। राज-पाट को तिलाञ्जलि दे वे अपने भाई लक्ष्मण और सीताजी के साथ वन को चले गये।

वन में लङ्का का राजा रावण ज़बर्दस्ती सीताजी को हर ले गया। इस पर लड़ाई छिड़ गई। रामचन्द्रजी ने लङ्का पर चढ़ाई की और वानरों की सहायता से राक्षसों को युद्ध में पराजित किया। रावण और उसकी सेना का नाश हो गया। रामचन्द्रजी उसके भाई विभीषण को लङ्का का राज्य देकर अयोध्या लौटे।

इधर भरतजी राज्य का काम चलाते रहे थे। उन्होंने बड़े प्रेम से रामचन्द्रजी का स्वागत किया और उनका राज्य उन्हें सौंप दिया। रामचन्द्रजी ने बहुत काल तक सुख से राज्य किया। उनके राज्य में प्रजा ऐसी सुखी थी कि लोग राम-राज्य की अब तक प्रशंसा करते हैं।

रामायण से पता लगता है कि आर्य्य-सभ्यता किस प्रकार दक्षिण में फैली। इसमें हिन्दू-जाति के उच्च आदर्शों का वर्णन है। पितृ-भक्ति भ्रातृस्नेह, दम्पति-प्रेम, स्वामि-भक्ति के इसमें अनेक उत्तम दृष्टान्त हैं।

महाकाव्यों का समाज—रामायण, महाभारत के पढ़ने से हमें हिन्दू-समाज का बहुत कुछ हाल मालूम होता है। आर्य्यों के रहन-सहन, रीति-रवाज अब वैदिक काल के-से न थे। जाति का भेद पहले से मजबूत हो गया। ब्राह्मणों का सम्मान अधिक होने लगा। परन्तु महाभारत में ऐसा भी लिखा है कि यदि ब्राह्मण अपने धर्म का पालन न करे तो उसकी गिनती शूद्रों में होनी चाहिए। जातियों में परस्पर विवाह बिलकुल बन्द न था, परन्तु अपनी जाति में विवाह करना अच्छा समझा जाता था। शूद्रों के साथ विवाह करना लोग बुरा समझते थे। यदि कोई बड़ी जाति का मनुष्य शूद्र स्त्री के साथ विवाह करता तो उसकी सन्तान छोटे दर्जे की समझी जाती थी। पहले लोग शूद्रों का बनाया भोजन खाते थे परन्तु अब यह रवाज कम होने लगा। चाण्डाल नगर अथवा गाँव के बाहर रहते थे और उन्हें छूना तो दूर रहा उनकी छाया पड़ना भी बुरा समझा जाता था। बहु-विवाह की प्रथा थी। परन्तु बाल-विवाह नहीं होता था। स्वयंवर का रवाज था जैसा कि रामचन्द्रजी और अर्जुन के विवाह से प्रकट होता है। स्त्रियाँ पतिव्रता होती थीं और उन्हें शिक्षा भी दी जाती थी। परन्तु ऐसा मालूम होता है कि सती का रवाज था और पर्दे का आरम्भ हो रहा था।

धर्म में भी बहुत कुछ अन्तर पाया जाता है। वैदिक काल की तरह लोग प्रकृति की उपासना नहीं करते थे। अब ब्रह्मा, विष्णु, शिव,

की पूजा होने लगी। यज्ञ करने की प्रथा जारी थी। रामायण, महाभारत मे अश्वमेध और राजसूय यज्ञों का वर्णन है। महाभारत के समय के लोगो के आदर्श कुछ बिगड़ रहे थे। भरत ने रामचन्द्रजी के वन चले जाने पर राजगद्दी नहीं स्वीकार की परन्तु दुर्योधन ने पाण्डवो को विना युद्ध के एक सुई की नोक के बराबर भी जमीन देने से इनकार कर दिया। भीष्म, द्रोण, कर्ण आदि ने भी उसी के पक्ष का समर्थन किया और धर्म तथा न्याय की कुछ भी पर्वाह न की। जुआ खेलने की प्रथा और द्रौपदी के साथ जो अत्याचार हुआ था उससे प्रकट होता है कि समाज की दशा अच्छी न थी। परन्तु महाभारत के काल में कला-कौशल की अच्छी उन्नति हुई। अनेक प्रकार के सुन्दर आभूषण बनने लगे। व्यापार भी उन्नत हुआ और लोग विदेशो में जाने लगे। युद्ध-विद्या का ज्ञान बढ़ा। सेना में हाथी, घोड़े, रथ लड़ाई के समय काम आने लगे। सेना के सङ्गठन पर विशेष ध्यान दिया गया। नये-नये अस्त्र-शस्त्र चल गये और युद्ध करने के नये तरीके निकल आये।

अभ्यास

१—आर्य्यों के प्राचीन राज्यों के नाम बताओ। ये राज्य कहाँ पर थे ?

२—महाभारत और रामायण कब बने ? इस विषय मे हिन्दुओं की क्या धारणा है ?

३—महाभारत की कथा का सक्षेप से वर्णन करो।

४—भगवद्गीता मे क्या उपदेश है ?

५—रामायण को हिन्दू क्यों एक पवित्र ग्रन्थ समझते हैं ? रामराज्य की क्यों अब तक प्रशंसा होती है ?

६—रामायण-महाभारत के समय के और वैदिक काल के धर्म मे क्या अन्तर है ?

७—इन कार्व्यो मे जिस हिन्दू-समाज का वर्णन है वह कैसा है ? सक्षेप से बताओ।

अध्याय ६

जैन और बौद्ध-धर्म

नये धर्मों की उत्पत्ति—यद्यपि वैदिक धर्म उत्तरी भारत में फैल गया था परन्तु तो भी कुछ लोग अभी ऐसे थे जो इस धर्म को नहीं मानते थे। कहीं-कहीं पर अभी तक द्रविड़ों का धर्म माना जाता था। वैदिक धर्म का प्रचार करनेवाले अधिकतर ब्राह्मण थे जो विद्या पढ़ते-पढ़ाते, यज्ञ करते और वर्णाश्रम धर्म को मानते थे। ये ही लोग समाज में सबसे श्रेष्ठ समझे जाते थे। परन्तु अब कुछ लोग ऐसे हुए जो इनका विरोध करने लगे। ये वन में रहकर भजन-ध्यान में मग्न रहते और अपने शिष्यों को धर्म का उपदेश करते थे। इनमें कुछ ऐसे भी थे जो नगर-नगर घूमकर जनता को शिक्षा देते थे और प्रचलित वैदिक धर्म का विरोध करते थे। इनका न वेदों पर विश्वास था और न यज्ञों में और न ये जाति-पाँति के भेद को मानते थे। ऐसे ही महात्माओं में महावीर स्वामी और गौतम बुद्ध की गिनती है। इनके चलाये हुए धर्म अभी तक भारत में मौजूद हैं। अब हम तुम्हें इनका हाल बतलायंगे।

महावीर स्वामी—जैन-धर्म—जैनों के धर्म-ग्रन्थों में लिखा है कि जैन-धर्म बौद्ध-धर्म से प्राचीन है और यूरोप के विद्वान् भी अब इस बात को मानते हैं। जैन लोगों का कहना है कि महावीर स्वामी उनके २४ वें तीर्थङ्कर थे और उनसे पहले २३ तीर्थङ्कर और

हो चुके हैं। २३ वे तीर्थङ्कर पार्श्वनाथजी थे जिनका देहान्त महावीर स्वामी से दो सौ-ढाई सौ वर्ष पहले हुआ था। महावीर स्वामी का जन्म लिच्छवि-वंश के क्षत्रिय राजकुल में वैशाली* नगर मे हुआ था। उनका बचपन का नाम वर्धमान था। तीस वर्ष की अवस्था में उन्होंने घर-बार छोड़कर सन्यास ले लिया और अपने धर्म का प्रचार करना आरम्भ कर दिया। १२ वर्ष तक उन्होने बड़ी कड़ी तपस्या की। तब उन्हे ज्ञान प्राप्त हुआ और वे अरहत् अथवा जिन (इन्द्रियों का जीतनेवाला) हो गये। इसके बाद उन्होने विहार में भ्रमण किया और लोगों को उपदेश किया। मगध का राजा बिम्बिसार और उसका बेटा अजातशत्रु दोनो उनसे मिले और उनका बड़ा सम्मान किया। ७२ वर्ष की अवस्था में पावा नामक स्थान में ईसा के ४६८ वर्ष पहले उनका देहान्त हो गया।

महावीर स्वामी की शिक्षा—महावीर स्वामी की शिक्षा थी कि (१) सच बोलो। (२) किसी जीव को न सताओ। (३) चोरी न करो। (४) धन-दौलत जमा न करो। (५) ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करो। उनका कहना था कि तप, दया, ज्ञान और सदाचार से मोक्ष मिल सकता है। कर्म के फल से मनुष्य नहीं बच सकता, इसलिए सत्कर्म करना आवश्यक है। बहुत-से लोग महावीर स्वामी के अनुयायी हो गये। उनकी मृत्यु के बाद जैनों में दो दल हो गये—दिगम्बर और श्वेताम्बर। महावीर स्वामी ने अपने

---

*वैशाली विहार के मुजफ्फरपुर जिले मे पटना से २७ मील उत्तर की ओर है। महावीर स्वामी की जन्म-तिथि ईसा के ५४० वर्ष पहले और मृत्यु की तिथि ईसा के ४६८ वर्ष पूर्व कही जाती है।

प्राचीन भारतवर्ष

गान्धार

सिन्ध न०

कौशल

अवन्ती

मगध

अरब सागर

बंगाल की खाड़ी

शिष्यों को नग्न रहने की आज्ञा दी थी. इसलिए वे दिगम्बर कहलाने लगे और दूसरे दल के लोग सफेद कपड़े पहनने के कारण श्वेताम्बर के नाम से प्रसिद्ध हुए।

जैन-धर्म का प्रभाव—जैन लोग जीवो पर बड़ी दया करते है। अहिंसा उनके धर्म का मूल मन्त्र है। वे छोटे-छोटे जीवो को मारना भी पाप समझते है। वे रात में भोजन नहीं करते और पानी तक छानकर पीते है। जैन साधु कठिन तप करते है, जीवो पर दया करते है और अधिकांश उनमें ऐसे है जो किसी प्रकार की सवारी से नहीं बैठते। पैदल ही यात्रा करते हैं। मनुष्यो की चिकित्सा और जानवरो की रक्षा के लिए उनके प्रयत्न से देश में अनेक औषधालय खुल गये है जहाँ दवा मुफ्त दी जाती है। जैन लोग बहुधा धनी व्यापारी हैं। उन्होंने जनता के उपकार के लिए बड़े-बड़े नगरों और तीर्थस्थानों में मन्दिर और धर्मशालाये बना दी हैं। आजकल जैनो की संख्या भारतवर्ष मे लगभग १५ लाख है।

जैन-धर्म को प्राचीन काल में कई राजाओं ने स्वीकार किया था। उनके राज्य मे प्रजा सुख और शान्ति से रही। दक्षिण और गुजरात में कई प्रसिद्ध जैन राजा हुए जिन्होंने खूब युद्ध किये, विद्वानो को आश्रय दिया और बड़ी सुन्दर इमारते बनवाई। आबू के पहाड़ का जैन-मन्दिर भारतवर्ष की प्रसिद्ध इमारतों में से है।

गौतम बुद्ध—जैन-धर्म से मिलता-जुलता बौद्ध-धर्म है। इस धर्म के माननेवाले अब भी लंका, चीन, जापान, ब्रह्मा आदि देशों मे पाये जाते हैं। गौतम बुद्ध इस धर्म की नीव डालनेवाले थे।

गौतम का जन्म कपिलवस्तु* में शाक्यवंश के क्षत्रिय राजा शुद्धोदन के यहाँ हुआ था। पैदा होने के सात दिन बाद ही उनकी माता का देहान्त हो गया। बालक का नाम गौतम सिद्धार्थ रक्खा गया। पिता ने बालक को उत्तम शिक्षा दी और १६ वर्ष की अवस्था में यशोधरा नाम की एक रूपवती कन्या के साथ विवाह कर दिया। राजकुमार महल में रहने लगे। कुछ समय के बाद उनके एक पुत्र हुआ जिसका नाम राहुल रक्खा गया।

गौतम के लिए उनके पिता ने सुख का सारा सामान एकत्र कर दिया था परन्तु उन्हें कुछ भी अच्छा न लगता था। वे बहुधा एकान्त मे बैठकर यही सोचा करते थे कि संसार का दुख किस प्रकार दूर हो सकता है। जब वे शिकार को जाते तो भोले-भाले निर्दोष हिरणो को देखकर उन्हे दया आ जाती और तरकस में तीर रखकर घर लौट आते। एक बार वसन्त-ऋतु मे पिता-पुत्र दोनों सैर के लिए बाहर निकले परन्तु गौतम की दृष्टि एक मनुष्य पर पड़ी जो अपने बूढ़े बैल को मार रहा था। यह देखकर गौतम को बड़ा दुख हुआ। कुछ समय के बाद उन्होंने एक वृद्ध मनुष्य को देखा जिसकी खाल सिकुड़ गई थी, कमर झुकी हुई थी और आँखों से भी कम दिखाई देता था। उसको ऐसी दशा में देखकर कुमार ने कहा, धिक्कार है इस यौवन को जिसे थोड़े दिन में बुढ़ापा आ दबावेगा। मनुष्य का शरीर अनित्य है। आज है कल नहीं।

---

* कपिलवस्तु नैपाल की तराई में है। गौतम बुद्ध का जन्म ईसा से ५६३ वर्ष पूर्व में हुआ और मृत्यु लगभग ४८० वर्ष पूर्व में हुई।

अब उन्हें यही चिन्ता रहने लगी कि रोग, शोक, बुढ़ापा, मृत्यु से बचने का क्या उपाय हो सकता है।

गौतम की अवस्था इस समय ३० वर्ष की थी। उन्हें संसार छोड़ने की प्रबल इच्छा होने लगी। एक दिन रात को जब सब लोग सो रहे थे व चुपके से उठे और उस कमरे में गये जहाँ उनकी स्त्री अपने बच्चे के साथ सो रही थी। यह देखकर कि इसके जगाने से जाने मे बाधा पड़ेगी उन्होने उसे नहीं जगाया और देखकर लौट आये। फिर घोड़े पर चढ़कर कपिलवस्तु के बाहर निकल गये और संन्यास ले लिया। घूमते-फिरते वे मगध की राजधानी राजगृह मे पहुँचे। राजा बिम्बिसार ने उनका स्वागत किया और सारा राज्य भेंट करने को कहा। परन्तु गौतम ने उत्तर दिया कि मैं ज्ञान चाहता हूँ राज्य नहीं। यहीं पर उन्होने ब्राह्मणों से शास्त्र पढ़े परन्तु मुक्ति का मार्ग न मिला। फिर बड़ी घोर तपस्या की, शरीर को कष्ट दिया परन्तु तब भी शान्ति न प्राप्त हुई। इसके बाद वे गया के पास पीपल के वृक्ष के नीचे समाधि लगाकर बैठ गये। यहीं पर उन्हे ज्ञान प्राप्त हुआ और वे बुद्ध अर्थात् ज्ञानी कहलाने लगे। जिस वृक्ष के नीचे उन्हे ज्ञान-लाभ हुआ था उसका नाम बोधि वृक्ष पड़ा। बहुत-से लोग अब गौतम बुद्ध का उपदेश सुनने लगे और उनके शिष्य हो गये।

इसी प्रकार धर्म का प्रचार करते-करते ८० वर्ष की अवस्था में कुशीनारा नामक स्थान में बुद्धदेव का देहान्त हो गया।

बौद्ध-धर्म की शिक्षा—बुद्धदेव की शिक्षा थी कि यदि मनुष्य अच्छे मार्ग पर चले, जीवों पर दया करे और हिंसा न करे तो उसे

सुख मिल सकता है। अहिंसा सब धर्मों का सार है। यज्ञ, तप
सब निष्फल हैं जब तक मन शुद्ध न हो। कर्म बलवान है। मनुष्य
कर्म के फल से नहीं बच सकता। जो जैसा बोयेगा वैसा काटेगा।
मोक्ष अर्थात् "**निर्वाण**" मनुष्य के कर्म पर निर्भर है। मनुष्य बार-
बार जन्म लेता और मरता है। केवल सत्कर्म-द्वारा ही वह इस
आवागमन के बन्धन से मुक्त हो सकता है।

यही नहीं बुद्ध भगवान् ने सदाचार पर बड़ा ज़ोर दिया। वे कहते
थे कि मनुष्य को मन, वाणी, कर्म से पवित्र होना चाहिए, सच
बोलना चाहिए और ईर्ष्या, द्वेष, चोरी, व्यभिचार आदि पापों से
बचना चाहिए। बुद्ध जी के शिष्य दो प्रकार के थे—एक तो उपासक
जो गृहस्थ बनकर रहते थे, दूसरे भिक्षु जो संन्यास ले लेते थे। कुछ
समय के बाद स्त्रियों को भी संन्यास लेने की आज्ञा मिल गई थी
और वे भिक्षुणी कहलाती थीं।

गौतम बुद्ध की सफलता—बुद्धदेव को अपने धर्म का प्रचार
करने में बड़ी सफलता हुई। इसके कई कारण हैं। उन्होंने बतलाया
कि जाति-पाँति का भेद व्यर्थ है। जाति मनुष्य को मोक्ष मिलने में
बाधक नहीं हो सकती। इसका उन जातियों पर बहुत प्रभाव पड़ा
जिन्हें ब्राह्मणों ने अपने धर्म से अलग रखा था। दूसरे महात्मा बुद्ध
ने अपना उपदेश साधारण लोगों की भाषा में दिया जिसे सब कोई
समझ सकता था। तीसरे, बौद्धधर्म में अधिक आडम्बर नहीं था।
उसकी सादगी ने उसके प्रचार में बहुत मदद की. चौथे भिक्षु
भिक्षुणी बड़े उत्साह और भक्ति के साथ धर्म-प्रचार का काम
करते थे।

(सारनाथ) गौतम बुद्ध گوتم بدھ (سارناتھ

बोधि वृक्ष के नीचे गौतम बुद्ध

بودھی پیڑ کے نیچے گوتم بدھ

जैन और बौद्ध-धर्म एक नहीं है—जैन और बौद्ध-धर्म की बहुत-सी बातें एक-सी हैं। इसलिए देखने में दो धर्म एक ही मालूम होते हैं। परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। दोनों धर्मों में अहिंसा, कर्म, सदाचार पर ज़ोर दिया गया है और वैराग्य का उपदेश है। दोनों धर्मों की शिक्षा साधारण मनुष्यों की भाषा में हुई है और दोनों ने जाति-भेद को व्यर्थ बताया है। दोनों यज्ञ करना व्यर्थ समझते हैं और वेदों के महत्त्व को नहीं स्वीकार करते। दोनों धर्मों ने भिक्षु-भिक्षुणियों के संघ बनाये जिन्होंने धर्म का प्रचार किया।

परन्तु यह सब होते हुए भी जैन और बौद्ध-धर्मों में भेद है। दोनों में मोक्ष प्राप्त करने के साधन अलग-अलग हैं। जैन-धर्म तप, वैराग्य और शरीर को कष्ट देने का आदेश करता है; परन्तु बौद्ध-धर्म इन्हें इतना आवश्यक नहीं समझता। जैन-धर्म अहिंसा पर अधिक जोर देता है, यहाँ तक कि इस धर्म के माननेवाले छोटे-छोटे कीड़ों को मारना भी पाप समझते हैं। बौद्ध-धर्म में ऐसा नहीं है। चीन, जापान, ब्रह्मा आदि देशों के बौद्ध तो मांस खाना भी बुरा नहीं समझते।

बौद्ध-धर्म का प्रचार—बौद्ध-धर्म का हमारे देश में ख़ूब प्रचार हुआ। बुद्ध की मृत्यु के समय उनके अनुयायियों की संख्या अधिक न थी परन्तु अशोक और कनिष्क आदि राजाओं ने इसकी उन्नति के लिए बड़ा प्रयत्न किया। इसका हम आगे चलकर वर्णन करेंगे। इन्हीं के प्रयत्न से बौद्ध-धर्म लङ्का, तिब्बत, चीन, ब्रह्मा, हिन्द-चीन, अफ़ग़ानिस्तान आदि देशों में फैला। भारतवर्ष में तो एक समय

ऐसा ज़ोर बँधा कि हिमालय से कुमारी अन्तरीप तक बौद्ध-धर्म की ही तूती बोलने लगी। किन्तु आश्चर्य की बात है कि ऐसा विश्वव्यापी धर्म जिसकी बड़े-बड़े राजा, महाराजा, आचार्य मदद करते वाले थे, कई शताब्दियों के बाद इस देश से करीब-करीब लुप्त हो गया। आजकल लङ्का और ब्रह्मा को छोड़कर भारत में बौद्ध-धर्म के माननेवाले कहीं नहीं पाये जाते। इस पतन का कारण हम आगे चलकर बतलायेंगे।

जिस समय देश में बौद्ध-धर्म का दौरदौरा था, वैदिक धर्म कुछ ढीला पड़ गया था। परन्तु समय के हेर-फेर से जब बौद्ध-धर्म की शक्ति कुछ कम हुई तो हिन्दू-धर्म ने फिर अपनी धाक जमा ली। ब्राह्मणों का फिर गौरव बढ़ा परन्तु उन्हें भी बौद्ध-धर्म की कई बातें माननी पड़ीं। जाति-पाँति का भेद पहले से कम हो गया। यज्ञों की प्रथा जाती रही। अहिंसा के सिद्धान्त को भी हिन्दू-धर्म ने अपना लिया और मांस खाने का प्रचार कम होने लगा। ब्राह्मणों ने गौतम बुद्ध को भी अपने २४ अवतारों में शामिल कर लिया। वैदिक धर्म के माननेवाले संन्यासी, महात्मा बौद्ध भिक्षुओं की तरह मठों में रह कर धर्म का प्रचार करने लगे।

बुद्ध के समय का राजनैतिक भारत—जिस समय गौतम बुद्ध जीवित थे भारत में मगध, कोशल, अवन्ति, कौशाम्बी आदि बड़े बड़े राज्य थे*। इन राज्यों में शक्तिशाली राजा राज्य करते

---

* मगध (विहार), कोशल (अवध), अवन्ति (मालवा), कौशाम्बी (इलाहाबाद)।

थे। परन्तु इनके अलावा कई छोटे-छोटे स्वाधीन प्रजातंत्र राज्य भी थे, जिनका प्रबन्ध प्रजा के चुने हुए सभासद् ही करते थे। इन राज्यों मे शाक्य, कुशीनारा, मल्ल, मोरिय, लिच्छवि, विदेह अधिक प्रसिद्ध है। कपिलवस्तु जहाँ गौतम बुद्ध पैदा हुए थे कोई बड़ा राज्य नहीं था। वह भी एक छोटा-सा स्वाधीन प्रजातंत्र राज्य था। इन राज्यो में राजा नहीं होते थे। प्रजागण अपनी सभा मे एक मनुष्य को मुखिया चुन लेते थे। वही सभा की मदद से शासन करता था। शहरो मे सभागृह बने हुए थे जहाँ बैठकर राज्य का काम होता था। लोगों की जीविका धान की खेती से चलती थी। गाँव झोपड़ो के बने होते थे और एक दूसरे से अलग होते थे। गाँवो मे जीवन शान्तिमय था और लोग जुर्म बहुत कम करते थे।

अभ्यास

१—जैन और बौद्ध-धर्मो की किस प्रकार उत्पत्ति हुई ?
२—जैन और बौद्ध-धर्मो में कौन-सा प्राचीन है ?
३—महावीर स्वामी के जीवन-चरित्र का सक्षेप से वर्णन करो।
४—जैन-धर्म के मुख्य सिद्धान्त क्या है ? जैनों के दो सम्प्रदाय कौन-से है ? उनकी विशेषता का वर्णन करो।
५—जैन-धर्म के अनुयायियों के आचार-विचार के विषय मे क्या जानते हो ?
६—गौतम बुद्ध के जीवन-चरित्र का संक्षेप से वर्णन करो।
७—गौतम बुद्ध को वैराग्य कैसे हुआ ? वे बुद्ध क्यों कहलाये ?
८—बौद्ध-धर्म का सिद्धान्त क्या है ? बौद्ध और जैन-धर्मो के सिद्धान्तों में क्या अन्तर है ?

९—गौतम बुद्ध की सफलता के क्या कारण थे

१०—"जैन और बौद्ध-धर्म देखने मे एक मालूम होते हैं परन्तु वास्तव मे ऐसा नहीं है।" इस कथन की व्याख्या करो।

११—बौद्ध-धर्म का संसार में इतना प्रचार क्यों हुआ? कारण बताओ।

१२—गौतम बुद्ध के समय में भारत में दो प्रकार के कौन-से राष्ट्र थे? उनके नाम बताओ। इन राज्यों का शासन-प्रबन्ध किस प्रकार होता था?

अध्याय ७

मगध-राज्य—सिकन्दर का आक्रमण

मगध-राज्य—ईसा से ६०० वर्ष पहले से हमे भारतीय इतिहास का हाल अधिक व्यवस्थित रूप मे मिलता है। जैसा पहले कह चुके हैं इस समय हमारे देश में कई राज्य थे। इन राज्यों में मगध (आधुनिक विहार) शक्तिशाली राज्य था। यहाँ शिशुनाग-वंश के लोग राज्य करते थे। विम्बिसार और अजातशत्रु का हाल तुम पहले पढ़ चुके हो। ये मगध के प्रभावशाली राजाओं में गिने जाते हैं। ये दोनों महात्मा गौतम बुद्ध के समय में मौजूद थे। जब विम्बिसार वृद्ध हो गया तब उसने राजकार्य अपने बेटे अजातशत्रु को सौंप दिया। परन्तु वह ठहर न सका। उसने पिता को मार डाला और स्वयं राजा बन बैठा। अजातशत्रु वीर राजा था। उसने कोशल-राज्य पर चढ़ाई की। कोशल-नरेश ने विवश होकर अपनी बेटी का उसके साथ विवाह कर दिया और काशी-राज्य दहेज में दे दिया। अजातशत्रु ने गंगा और सोन के संगम पर पाटली नामक नगर बसाया जिसका नाम पीछे से पाटलिपुत्र हुआ और यह आज-कल पटना कहलाता है। अजातशत्रु की मृत्यु के बाद शिशुनाग-वंश के कई राजाओं ने राज्य किया। परन्तु उनकी शक्ति दिन पर दिन घटने लगी। इस वंश का अन्तिम राजा महानन्दिन् था। उसने एक शूद्र स्त्री से विवाह किया जिसके गर्भ से एक बालक उत्पन्न हुआ जो महापद्मनन्द के नाम से मगध का राजा हुआ। नन्दवंश का

पहला राजा था। इसने कोशल, कौशाम्बी, अवन्ति आदि देशों के
ाओं को युद्ध में हराकर एक बड़ा राज्य बनाया जिसमें काश्मीर,
ाब, सिन्ध को छोड़कर सारा उत्तरी भारत शामिल था। महा-
नन्द के पास एक बड़ी सेना थी। दूर-दूर के राजा उसका रोब
ानते थे। उसी के समय में सिकन्दर ने हमारे देश पर आक्रमण
िया और कहते हैं कि महापद्मनन्द के भय से ही उसने पंजाब से
आगे बढ़ने का साहस न किया। यह सिकन्दर कौन था और किस
प्रकार हिन्दुस्तान में आया ?

सिकन्दर का आक्रमण (३२६ ई० पू०*)—यूरोप के
दक्षिण में यूनान (ग्रीस) नामक एक देश है। यहाँ मेसीडन नाम का
एक छोटा-सा राज्य था। वहाँ का राजा फ़िलिप बड़ा प्रतापी था। दूर-
दूर के राजा उसका प्रभुत्व मानते थे। उसका बेटा सिकन्दर
(अलेक्ज़ंडर) उससे बढ़कर वीर और प्रतापी हुआ। उसने अपने
पराक्रम से अनेक देश जीते और एक विशाल साम्राज्य बनाया।
जिस समय सिकन्दर मेसीडन में राज्य करता था एशिया में फ़ारस
नाम का एक बड़ा शक्तिशाली राज्य था। हिन्दुस्तान के उत्तर-
पश्चिम के सरहद्दी सूबे फ़ारस का आधिपत्य मानते थे। फ़ारस
और यूनान में हमेशा लड़ाई रहती थी। एक दूसरे को हड़प कर
जाना चाहता था। जब सिकन्दर ने अपनी शक्ति खूब बढ़ा ली तब
उसने फ़ारस पर आक्रमण किया और वहाँ के सम्राट् दारा तृतीय
को लड़ाई में हराया। इसके बाद वह अफ़ग़ानिस्तान की तरफ़ बढ़ा।
कई सर्दारों ने उसकी अधीनता स्वीकार कर ली। उसके लिए आगे

---

* ई० पू० का अर्थ है ईसा मसीह से पहले।

पाटलिपुत्र के खँडहर   پاٹلی پتر کے کھنڈر

साँची का स्तूप سانچی کا استوپ

ारनाथ का स्तूप سارناتھ کا مندر

सिकन्दर का मार्ग
मीलों का माप-दण्ड
काबुल नदी
जलालाबाद
मलाकन्द घाटी
स्वात नदी
कुनार नदी
डक्का
खैबर घाटी
पेशावर
अटक
तक्षशिला
रावलपिण्डी
सिन्धु नदी
झेलम
झेलम नदी
युद्ध-भूमि
चनाब नदी
स्यालकोट
रावी नदी
व्यास नदी
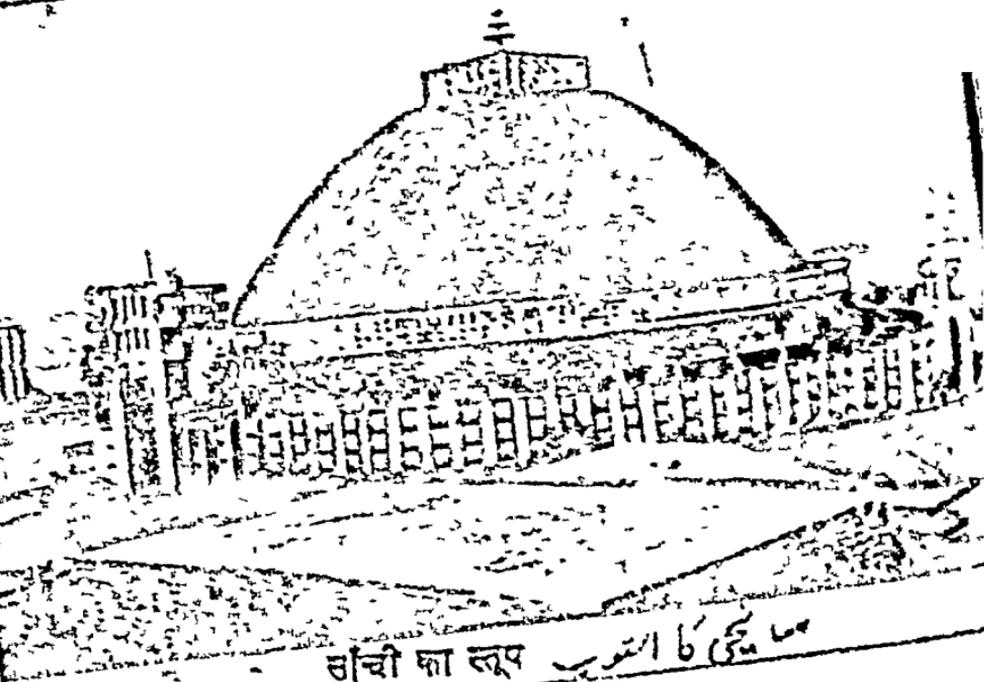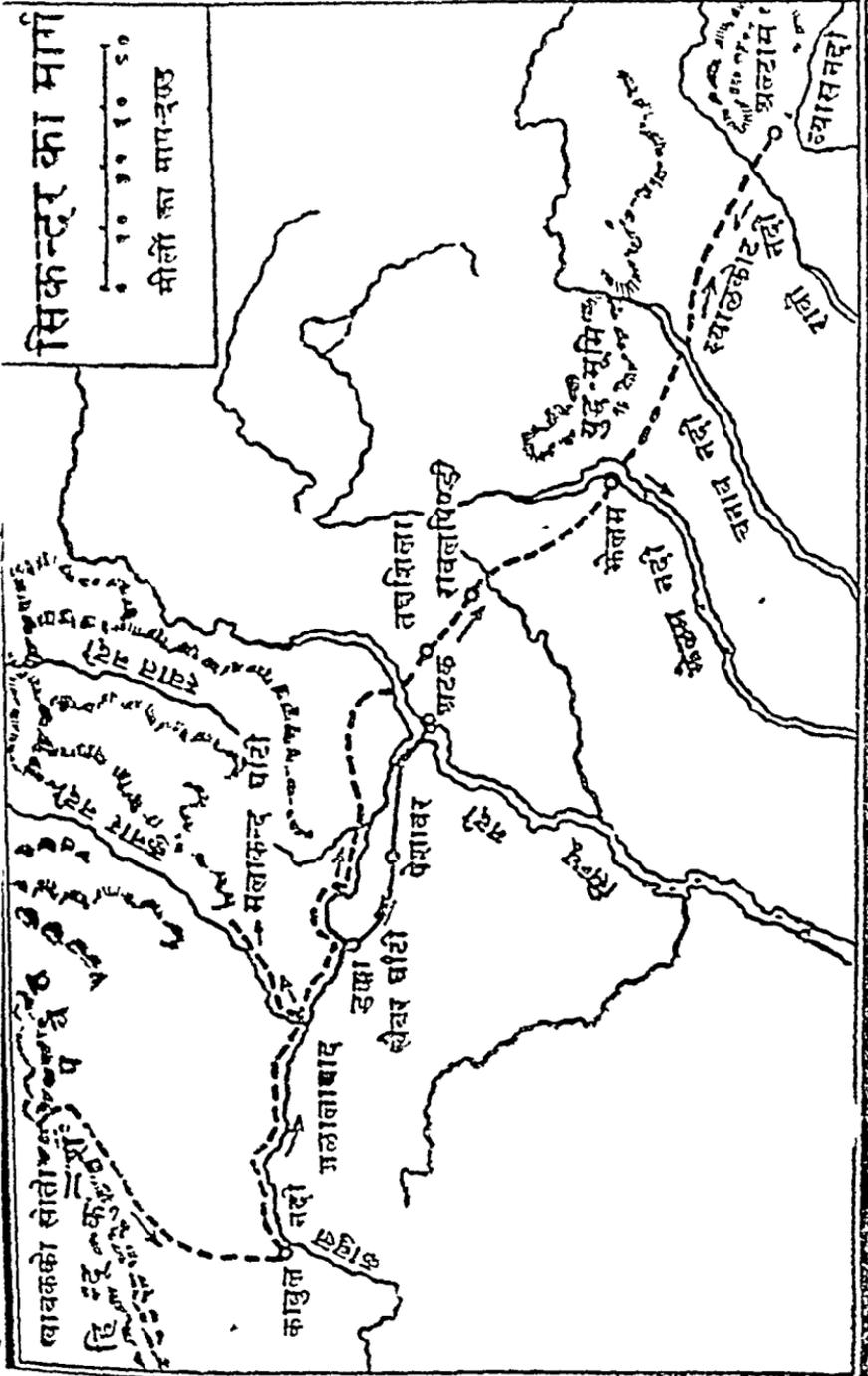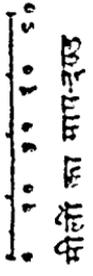
ना कठिन था। परन्तु पंजाब की दशा इस समय अच्छी न थी। यहाँ छोटे-छोटे कई राज्य थे जो आपस में हमेशा लड़ा करते थे। किसी में इतना बल न था कि सिकन्दर का सामना करता। ईसा से ३२७ वर्ष पहले सिकन्दर ने खैबर की घाटी में होकर पंजाब में प्रवेश किया। पंजाब के पश्चिमी भाग में इस समय दो राज्य थे—एक तो तक्षशिला और दूसरा पुरुराज्य। तक्षशिला के राजा ने सिकन्दर का स्वागत किया और उसको अपना सम्राट् मान लिया। परन्तु राजा पुरु ने यूनानियों से खूब लोहा लिया। वह ३०,००० पैदल, ४,००० सवार, ३०० रथ और २०० हाथी लेकर झेलम नदी के किनारे आ डटा। घमासान युद्ध के बाद पुरु की हार हुई। बहुत-से योधा घायल हुए और मारे गये। पुरु बड़े डील-डौलवाला वीर योधा था। उसके नौ घाव लगे परन्तु तो भी उसने लड़ाई के मैदान से भागने की कोशिश नहीं की। जब सिपाही उसे पकड़कर सिकन्दर के सामने ले गये तो उससे पूछा गया कि तुम्हारे साथ कैसा बर्ताव होना चाहिए। वीर पुरु ने शीघ्र उत्तर दिया कि जैसा राजा राजाओं के साथ करते हैं। सिकन्दर इस उत्तर से बहुत प्रसन्न हुआ और उसने पुरु का राज्य उसे वापस लौटा दिया। पुरु के युद्ध में हारने के तीन कारण थे—एक तो आपस की फूट। भारत के दूसरे राजाओं ने विदेशी आक्रमण को रोकने में पुरु की मदद नहीं की। तक्षशिला का राजा तो पुरु के विरुद्ध यूनानियों के साथ लड़ रहा था। दूसरे, लड़ाई के समय पुरु के हाथी बिगड़ गये और भागने लगे। तीसरे, सिकन्दर स्वयं बड़ा वीर था। उसके सवार लड़ने में बहुत कुशल थे। उनके सामने भारतीय धीरन्दाजों का

ठहरना कठिन था। सिकन्दर और पुरु की लड़ाई ईसा से ३२६ वर्ष पहले हुई थी।

सिकन्दर का लौटना—इस विजय के बाद सिकन्दर व्यास नदी के किनारे तक पहुंचा। परन्तु उसके यूनानी सिपाही लड़ते-लड़ते थक गये थे और घर जाने के इच्छुक थे। उन्होंने आगे जाने से इनकार कर दिया। पुरु की लड़ाई को देखकर उन्होंने यह भी समझ लिया था कि हिन्दुस्तान को जीतना कोई खेल नहीं है। सिकन्दर को उनकी बात माननी पड़ी। झेलम नदी के मार्ग से वह चला परन्तु यहाँ भी उसे कई लड़ाइयाँ लड़नी पड़ीं। एक बार तो वह स्वयं मरते-मरते बचा। अन्त में सन् ३२५ ई० पू० में उसने अपनी सेना को जहाज़ो में बिठलाकर वापस भेजा और स्वयं बिलोचिस्तान के रेगिस्तान में होकर चल दिया। परन्तु दुर्भाग्यवश स्वदेश में न पहुँचने पाया। ३२३ ई० पू० में बेबिलन नामक नगर में केवल ३३ वर्ष की अवस्था में उसकी मृत्यु हो गई।

आक्रमण का परिणाम—सिकन्दर के आक्रमण के समय देश में बड़ा अत्याचार हुआ। यूनानियों ने लोगों के साथ निर्दयता का बर्ताव किया। हज़ारों स्त्री पुरुष मार डाले गये, हज़ारों क़ैद हुए और ग़ुलाम बना दिये गये। जिस जगह सिकन्दर घायल हुआ था वहाँ के सब लोगों को उसने मरवा डाला। जहाँ-जहाँ होकर यूनानी सेना निकली थी वहाँ लोगों को घोर कष्ट हुआ। उनका माल लूटा गया और प्राण भी गये। यह सब होते हुए भी सिकन्दर का आक्रमण भारत की किसी स्थायी चीज़ का नाश न कर सका। एक वर्ष के भीतर आक्रमण का चिह्न भी न रहा। सिकन्दर की मृत्यु के बाद उसके

सेनापतियों ने राज्य आपस में बाँट लिया। पश्चिमोत्तर प्रदेश का राज्य उसके एक फौजी अफसर सिल्यूकस को मिला। परन्तु इतना मानना पड़ेगा कि इस आक्रमण की बदौलत संसार की दो सभ्य जातियाँ एक दूसरे से मिलीं। आइन्दा के हेल मेल के लिए मार्ग खुल गया। उत्तर-पश्चिम में यूनानी राज्य स्थापित होने के कारण यह परस्पर का सम्बन्ध आगे चलकर अधिक हो गया। भारतवर्ष उस समय भी अपनी विद्या के लिए प्रसिद्ध था। यूनानियों ने बहुत-सी बातें भारतवासियों से सीखीं। इधर भारतीय निर्माण-कला पर यूनानी विचारों का बड़ा प्रभाव पड़ा। सिकन्दर के आक्रमण का एक और परिणाम हुआ। वह यह कि उत्तरी भारत के छोटे-छोटे राज्य बहुत कमज़ोर हो गये थे जिससे चन्द्रगुप्त मौर्य को अपना साम्राज्य बनाने में अधिक कठिनाई न हुई। बहुत-से राज्यों की जगह एक शक्तिशाली साम्राज्य बन गया जिसके द्वारा देश में एकता का भाव पैदा हुआ।

अभ्यास

१—मगध का राज्य कहाँ था? बुद्धदेव के समय में वहाँ कौन राजा था?

२—नन्दवंश का राज्य किस प्रकार स्थापित हुआ? इस वंश में सबसे प्रतापी राजा कौन हुआ उसके विषय में क्या जानते हो?

३—सिकन्दर का हमला पंजाब पर कब हुआ? राजा पुरु की लड़ाई का वर्णन करो।

४—सिकन्दर की विजय के क्या कारण थे।

५—राजा पुरु के अलावा और किसने उसका सामना किया था?

६—सिकन्दर झेलम की लड़ाई के बाद आगे क्यों नहीं बढ़ा। एक नक्शा खींचकर उसके आने और लौटने का मार्ग दिखाओ

७—"सिकन्दर निर्दयता में तैमूर और नादिरशाह से कम न था।" क्या यह कथन सत्य है?

८—सिकन्दर के हमले का भारत पर क्या प्रभाव पड़ा?

९—सिकन्दर की मृत्यु के बाद उसके भारतीय राज्य का क्या हुआ?

अध्याय ८

मौर्य-साम्राज्य का उत्कर्ष और पतन

नन्दवंश का नाश और चन्द्रगुप्त का मगध का राजा होना (३२२ ई० पू०)—तुम पिछले अध्याय में पढ़ चुके हो कि जिस समय सिकन्दर ने भारत पर हमला किया था नन्दवंश का राजा महापद्मनन्द मगध में राज्य करता था। नन्दवंश के राजा अत्याचारी शासक थे, इसलिए उनकी प्रजा अप्रसन्न हो गई और अन्त में विष्णुगुप्त (चाणक्य) नामक ब्राह्मण की सहायता से इस वंश के अन्तिम राजा को उसके सेनापति चन्द्रगुप्त मौर्य्य ने ३२२ ई० पू० में गद्दी से उतार दिया और स्वयं राजा बन बैठा। कहते हैं चन्द्रगुप्त की माता मुरा नाम की एक शूद्रा स्त्री थी। इसलिए वह मौर्य्य कहलाया। परन्तु अब विद्वान् लोग इस बात को नहीं मानते। चन्द्रगुप्त मोरिय नामक क्षत्रिय-वंश में से था। इस वंश के लोग हिमालय के आस-पास के देश में राज्य करते थे और शाक्यों के सम्बन्धी थे। मोरिय क्षत्रिय होने के कारण चन्द्रगुप्त मौर्य्य कहलाया और इसी लिए उसका साम्राज्य मौर्य्य साम्राज्य के नाम से प्रसिद्ध हुआ। चन्द्रगुप्त बड़ा वीर और प्रतापी राजा था। थोड़े ही दिनों में उत्तरी भारत में उसकी धाक बैठ गई।

सिल्यूकस के साथ युद्ध—सिकन्दर की मृत्यु के बाद उसके राज्य के हिन्दुस्तानी सूबे पर उसके सेनापति सिल्यूकस

ने अपना अधिकार स्थापित कर लिया था। सिल्यूकस सिकन्दर के बाप के एक वीर योद्धा का लड़का था। वह पञ्जाब को जीतने की इच्छा से ३०४ ई० पू० में आगे बढ़ा परन्तु यहाँ चन्द्रगुप्त की सेना से उसकी मुठभेड़ हुई। यूनानी युद्ध में हार गये और अन्त में दोनों दलों में सन्धि हो गई। सिल्यूकस ने अपने राज्य का पूर्वी भाग चन्द्रगुप्त को दे दिया जिसमें हिरात, क़न्धार, काबुल, बिलोचिस्तान शामिल थे। कहते हैं कि सिल्यूकस ने सन्धि को मज़बूत करने के लिए अपनी बेटी का विवाह चन्द्रगुप्त के साथ कर दिया। चन्द्रगुप्त ने भी ५०० हाथी यूनानी नरेश को भेंट किये। कुछ भी हो इस विजय से चन्द्रगुप्त को बड़ा लाभ हुआ। अब वह भारतवर्ष का सम्राट् हो गया। सिल्यूकस ने अपने राजदूत मेगास्थनीज़ को मगध के दर्बार में रहने को भेजा। उसने मगध-साम्राज्य और भारत का बहुत-सा हाल लिखा है जिसका आगे चलकर वर्णन करेंगे।

साम्राज्य का विस्तार—चन्द्रगुप्त के राज्य का विस्तार उत्तर में हिन्दूकुश पर्वत तक था। अफ़ग़ानिस्तान, बिलोचिस्तान, मेकरान आदि प्रदेश इसमें शामिल थे। उत्तरी भारत का बहुत-सा भाग सिन्धु नदी से लेकर पूर्व में बङ्गाल तक और दक्षिण में उज्जैन और सौराष्ट्र तक उसके अधिकार में था। पश्चिमी तट का भी थोड़ा-सा भाग जो आजकल बम्बई हाते में सम्मिलित है साम्राज्य के अन्दर था।

चन्द्रगुप्त का राज्य-प्रबन्ध—चन्द्रगुप्त बड़ा बुद्धिमान् शासक था। यूनानियों के लेखों से मालूम होता है कि उसका राज्य-प्रबन्ध अच्छा था। राजा स्वयं हर एक बात की देख-भाल करता था और उसके मंत्री उसकी सहायता करते थे। अधिकांश मनुष्य आजकल

की तरह खेती करते थे। खेतो की सिंचाई के लिए नहर और तालाव बने हुए थे। क़ानून कठोर था। छोटे-छोटे अपराधो के लिए भी कड़ी सज़ा दी जाती थी। यदि कोई किसी कारीगर अथवा दस्तकार का हाथ तोड़ देता या आँख फोड़ देता, तो उसे फाँसी का दण्ड दिया जाता था। राजा को सदा वग़ावत का डर रहता था। इसलिए गुप्तचरों की संख्या अधिक थी। यदि कोई राज्य का अफ़सर अन्याय अथवा अत्याचार करता तो वे उसकी भी खबर राजा को देते थे।

चन्द्रगुप्त के पास एक बड़ी सेना थी। इसके चार भाग थे—(१) हाथी, (२) रथ, (३) घोड़े, (४) पैदल। हाथियों की संख्या ९,०००, रथो की ८,०००, घोड़ों की ३०,००० और पैदलो की ६ लाख थी। सेना की संख्या लगभग ७ लाख थी। इतनी बड़ी सेना का प्रबन्ध करना कठिन काम था। इसलिए इसका प्रबन्ध एक मराहल यानी कमेटी के अधिकार में था। इस कमेटी के नीचे ६ और छोटी कमेटियाँ थीं जो सेना के भिन्न-भिन्न भागों की देख-रेख करती थीं। स्थल-सेना के अलावा जल-सेना भी थी। युद्ध के समय शत्रु के साथ भी अनुचित वर्ताव नहीं किया जाता था।

स्थानीय स्वराज्य—शहरों और देहात का प्रबन्ध— पाटलिपुत्र भारत का सबसे बड़ा नगर था। यह ९ मील लम्बा और १½ मील चौड़ा था। इसके चारो तरफ लकड़ी की दीवार थी जिसमें ६४ फाटक थे और ५७० बुर्जियाँ थीं। इस नगर का प्रबन्ध ६ कमेटियो-द्वारा होता था। एक कमेटी दस्तकारी, उद्योग-धन्धो, और कारीगरो की देख-भाल करती थी। दूसरी विदेशियो की देख-रेख

करती थी। जो विदेशी यात्री या व्यापारी देश में आते थे उनके आराम का प्रबन्ध करती थी। तीसरी कमेटी का काम जन्म-मरण का हिसाब रखना था। चौथी कमेटी व्यापार की निगरानी करती थी। पाँचवी कारखानों में बनी हुई चीज़ों की देख-भाल करती और छठी बिकी हुई चीजों पर सरकारी महसूल (दसवाँ भाग) वसूल करती थी। सम्भव है दूसरे नगरों का प्रबन्ध भी इसी तरह होता हो।

देहातों में एक तरह से स्वराज्य था। हर एक गाँव में मुखिया (ग्रामिक) होता था। और आपस के झगड़ों को वहीं गाँव के बुज़ुर्गों की सलाह से तय करता था। मुखिया को गाँववाले स्वयं चुनते थे। मुखिया के ऊपर और अफ़सर होते थे जिनके अधिकार में बहुत-से गाँव होते थे।

मेगास्थनीज़ का विवरण—मेगास्थनीज़ लिखता है कि भारतवर्ष के लोग सादगी से रहते हैं। देश में चोरी नहीं होती। घरों में ताले नहीं लगाये जाते। लोग सरलहृदय हैं, उनका व्यवहार सचाई का है। इसलिए वे कचहरी नहीं जाते और न मुकदमाबाज़ी करते हैं। वे ईमानदार इतने हैं कि जब कोई किसी के यहाँ धरोहर रखता है तो न गवाहों की ज़रूरत पड़ती है, न लिखा-पढ़ी की। घर में सब मिल-जुलकर रहते हैं। स्त्रियों का देश में आदर है। यदि कोई उनके साथ अनुचित व्यवहार करता है तो उसे दण्ड मिलता है। परन्तु सती की प्रथा पाई जाती है। धर्म के विषय में मेगास्थनीज़ लिखता है कि विष्णु और शिव की सारे देश में पूजा होती है और गङ्गा को लोग पवित्र मानते हैं।

मेगास्थनीज़ का लेख है कि देश में धन-दौलत की कमी नहीं है। व्यापार ख़ूब होता है। दस्तकारी भी उन्नत दशा में है। चाँदी, सोने की चीज़ें और मसाले देश के दूसरे भागो से यहाँ आते है। विदेशो के साथ भी व्यापार होता है। विधवा और अनाथ स्त्रियो के लिए राज्य की ओर से आश्रम बने है जहाँ वे सूत कातकर अपनी जीविका कमाती हैं। बाज़ार-प्रबन्ध भी अच्छा है। व्यापारी अपने इच्छा-नुसार चीज़ों का निर्ख घटा-बढ़ा नहीं सकते। मामूली चीज़ो का भाव नियत है। बाटों की जाँच राज्य के अफ़सर करते है। यदि कोई इन नियमो को तोड़ता है तो उसे दण्ड दिया जाता है।

चन्द्रगुप्त की मृत्यु—२४ वर्ष तक राज्य करने के बाद २९८-९७ ई० पू० मे चन्द्रगुप्त का देहान्त हो गया। कहते है चन्द्रगुप्त पहले शैव था परन्तु बुढ़ापे में उसने जैन-धर्म स्वीकार कर लिया था। कुछ भी हो जब तक वह जीवित रहा, उसने शान-शौकत से राज्य किया। यूनानियों को उसने देश के बाहर भगा दिया और उनके राज्य का कुछ भाग भी ले लिया। अपनी बुद्धिमत्ता और पराक्रम से ही उसने उत्तरी भारत को अपने अधिकार में कर एक विशाल साम्राज्य बनाया और उसका उत्तम प्रबन्ध किया। उसकी धाक ऐसी बैठ गई थी कि दो पीढ़ी तक कोई भीतरी या बाहरी शत्रु मौर्य्य राज्य को हिला न सका।

बिन्दुसार—(२९७-२७३ ई० पू०) चन्द्रगुप्त की मृत्यु के बाद उसका बेटा बिन्दुसार गद्दी पर बैठा। उसने २४ वर्ष तक शान्तिपूर्वक राज्य किया। उसके तीन लड़के थे। परन्तु इनमे मॅझला लड़का अशोक जो उज्जयिनी (उज्जैन) का हाकिम था सबसे

प्रतापी था। जब भाइयों में राजसिंहासन के लिए युद्ध हुआ तो अशोक की जीत हुई और वह मगध का राजा हो गया। कहते हैं उसने अपने भाइयों का सर्वनाश कर दिया, परन्तु इसका कोई प्रमाण नहीं है। अशोक ने मौर्य्य-साम्राज्य को उन्नति के शिखर पर पहुँचाया और देश में धर्म-राज्य स्थापित किया। इसी लिए उसकी गिनती भारत के ही नहीं बल्कि संसार के बड़े सम्राटों में की जाती है।

अशोक की विलक्षणता—अशोक हमारे देश के विलक्षण राजाओं में से है। उसने चन्द्रगुप्त की नीति को बदल दिया और धर्मानुसार शासन किया। उसका जीवन ऐसा पवित्र और शान्ति-प्रिय था कि यदि उसे महात्मा कहें तो अनुचित न होगा। उसने प्रजा की उसी तरह रक्षा की जैसे बाप अपने बेटों की करता है। उसने तलवार की जगह दया, धर्म, शान्ति से काम लिया और युद्ध करना बन्द कर दिया। मौर्य्य-साम्राज्य नष्ट हो गया परन्तु अशोक की कीर्ति अब तक मौजूद है। जब तक इतिहास पढ़ा जायगा उसका नाम अजर-अमर रहेगा।

कलिंग-युद्ध—राज्याभिषेक होने के कुछ समय बाद सम्राट् अशोक को एक भीषण युद्ध करना पड़ा। मगध-राज्य के दक्षिण पूर्व में कलिङ्ग नामक एक शक्तिशाली राज्य था। आधुनिक उड़ीस उत्तरी सरकार के जिले और हैदराबाद की रियासत के पूर्वी भाग मिलाने से इस राज्य के विस्तार का अनुमान किया जा सकता है कलिङ्ग देश के लोग द्रविड़ थे। वे जहाजों पर चढ़ते थे, दूर-दूर देशों के साथ व्यापार करते थे। जावा, सुमात्रा आदि

में इन्हीं लोगों ने भारतीय सभ्यता फैलाई थी, अशोक ने इनके राज्य को जीतने की इच्छा की। बड़ा घोर संग्राम हुआ, खून की नदियां बहने लगीं। कलिङ्गवासियों ने अपूर्व देशभक्ति तथा वीरता दिखलाई परन्तु उनकी हार हुई। एक लाख स्त्री-पुरुष, बच्चे मारे गये और लगभग डेढ़ लाख कैद हुए। कलिङ्ग देश तो अशोक ने जीत लिया परन्तु उसके हृदय को गहरी चोट लगी। उसने सोचा कि अपने लाभ के लिए निर्दोष मनुष्यों की हत्या करना महापाप है। वह बड़ा लज्जित हुआ। उसने प्रतिज्ञा की कि अब राज्य को बढ़ाने की इच्छा से कभी युद्ध न करूंगा।

अशोक के राज्य का विस्तार—अशोक के समय में साम्राज्य का विस्तार पहले से अधिक हो गया। राज्य की उत्तरी सीमा हिन्दुकुश पर्वत तक थी जिसमें काश्मीर, नैपाल, अफगानिस्तान, बिलोचिस्तान आदि देश शामिल थे। पूर्वी सीमा, कलिङ्ग और बङ्गाल तक और पश्चिमी सीमा सौराष्ट्र, काठियावाड़ तक थी। चोल, पाण्ड्य, केरल आदि प्रदेशों को छोड़कर दक्षिण का बहुत-सा भाग अशोक के अधीन था।

अशोक का बौद्ध-धर्म स्वीकार करना—कलिंग की विजय के बाद अशोक ने बौद्ध-धर्म स्वीकार कर लिया, परन्तु यह कहना ठीक न होगा कि वह इस युद्ध के कारण ही बौद्ध हो गया। दया की लहर उसके हृदय में पहले ही से उमड़ रही थी और बौद्ध-धर्म की तरफ उसका ध्यान आकृष्ट हो चुका था। कलिंग-युद्ध की मारकाट को देखकर उसे बड़ा दुःख हुआ और बौद्ध-धर्म में उसकी श्रद्धा बढ़ने लगी। उपगुप्त नामक बौद्ध-भिक्षु के उपदेश का भी

अशोक का साम्राज
काबुल
गज़्नी
पेशावर
तक्षशिला
गान्धार
यवनराज्य
सिल्यूकस का दिया हुआ
मूलस्थानपुर
टोपरा
मेरठ
इन्द्रप्रस्थ
मथुरा
श्रावस्ती
कपिलवस्तु
पाटलिपुत्र
प्रयाग
काशी
कौशाम्बी
सहसराम
मगध
विदिशा
रूपनाथ
उज्जैन
सांची
ताम्रलिप्ति
पुलिंद
सौराष्ट्र
गिरनार
भोज
सोपारा
राष्ट्रिक
तोसाली
जौगढ़
कलिंग
मस्की
स्वर्ण गिरि
सिद्धपुर
अरब सागर
बंगाल की खाड़ी
तंजोर
मदुरा
सिंहल (लंका)
शिलालेख

उस पर बहुत प्रभाव पड़ा। बौद्ध होने के बाद अशोक ने कई नियम जारी किये। पहले महल में हज़ारों जानवर मारे जाते थे। अब उसने हुक्म दिया कि रसोईघर में हत्या न की जाय और न राजधानी में पशुओं का बलिदान हो। शराब पीना और मांस खाना भी बन्द हो गया। प्रजा को उपदेश करने के लिए उसने स्वयं राज्य में दौरा करना आरम्भ किया, बौद्ध-तीर्थों के दर्शन किये, और बहुत-से मठ, मन्दिर और स्तूप बनवाये। ऐसे खेल-तमाशे जिनमें जीव-हत्या होती थी बिलकुल बन्द करा दिये।

अशोक की शिक्षा (धम्म)—अशोक यों तो बौद्ध था, परन्तु वह सब धर्मों का आदर करता था। विद्वान् ब्राह्मणों का भी वह उतना ही सम्मान करता था जितना बौद्ध-भिक्षुओं का। वह कहता था कि जो दूसरों के धर्म की निन्दा करता है, वह अपने धर्म को बड़ी हानि पहुँचाता है और धर्म के असली तत्त्व को नहीं समझता। धर्म के मुख्य अंग चार है—(१) दया, (२) दान, (३) सत्य, (४) शौच। इन्हीं पर उसने जोर दिया और लोगों को सच्चरित्र बनाने का प्रयत्न किया। उसका उपदेश था—जीवों पर दया करो, माता-पिता की आज्ञा मानो, बड़ों की सेवा और भाई-बन्धुओं के प्रति प्रेम करो।

इन उपदेशों को अशोक ने शिलाओं और स्तम्भों पर खुदवाया जिससे लोग उन्हें पढ़ सकें। ये शिलाएँ और स्तम्भ भारतवर्ष के प्रत्येक भाग में पाये जाते हैं। हमारे प्रान्त में इलाहाबाद के किले में अशोक का ऐसा ही एक स्तम्भ है जिस पर उसका लेख खुदा हुआ है।

धर्म-प्रचार—अशोक ने बौद्ध-धर्म के प्रचार के लिए बड़ा
त्न किया। उसने यश की इच्छा से ऐसा नहीं किया, वरन् प्रजा
हित के लिए। बौद्धों के भेद-भाव को मिटाने के लिए उसने
टलिपुत्र में एक सभा की जिसमें अनेक विद्वान् उपस्थित हुए।
गों को यह बतलाने के लिए कि धम्म (धर्म) क्या चीज़ है उसने
लाओं और स्तम्भों पर बहुत-से लेख खुदवाये जो अब तक मौजूद
। इसके अलावा उसने एक प्रकार के अफसर नियत किये जिन्हें
महामात्र कहते हैं। इनका कर्त्तव्य प्रजा को धर्म की शिक्षा देना था।
यदि कोई मनुष्य धर्म के विरुद्ध आचरण करता तो ये लोग उसे
रोकते थे।

इतना ही नहीं अशोक ने अपने बेटे महेन्द्र और बेटी संघमित्रा
को लङ्का में धर्म का प्रचार करने भेजा। उसका कहना था कि धर्म
की विजय सबसे बड़ी है। इसी लिए उसने चीन, तिब्बत, श्याम,
मिस्र, मेसीडन, अफ्रीका आदि देशों में अपने उपदेशक भेजे। बुढ़ापे
में अशोक स्वयं संन्यासी हो गया और जङ्गल में रहकर भजन,
ध्यान में अपना समय व्यतीत करने लगा। अशोक की बदौलत ही
बौद्ध-धर्म सारे संसार में फैल गया।

अशोक का शासन-प्रबन्ध—अशोक का शासन-प्रबन्ध एक
नई तरह का था। वह फौज, पुलिस, कानून की अपेक्षा प्रेम, दया,
धर्म पर अधिक भरोसा करता था। उसका कहना था कि प्रजा मेरे
बेटों के समान है। जिस प्रकार मैं चाहता हूँ कि मेरे बेटे सुखी और
सम्पत्तिवान् बनें, उसी तरह मेरी इच्छा है कि मेरी प्रजा भी सुखी
रहे। अशोक ने हमेशा इसी आदर्श को अपने सामने रक्खा। उसने

हुक्म दिया कि लोग बिना कारण जेल न भेजे जायँ, राजकार्य शीघ्रता से किया जाय, और दीन, अनाथ और विधवाओं पर दया की जाय।

अशोक का राज्य धर्म-राज्य था। प्रजा के हित के लिए उसने सड़कों पर आध-आध कोस के फ़ासले पर आम के वृक्ष लगवाये, कुएँ खुदवाये, धर्मशालाएं बनवाईं और मनुष्यों तथा जानवरों के लिए प्याऊ बिठला दी। मनुष्यों और जानवरों की चिकित्सा के लिए अस्पताल खोल दिये और हिंसा करनेवालों को दण्ड देने के लिए क़ानून बना दिये।

प्रजा का दुःख-दर्द सुनने के लिए अशोक हमेशा तैयार रहता था। उसका हुक्म था कि चाहे मैं व्यायामशाला में रहूँ, बगीचे में, पलटन के मैदान या रनिवास में, प्रजा के दुख-सुख की खबर मुझे शीघ्र मिलनी चाहिए।

हमारे समय का एक अँगरेज़ विद्वान् लिखता है कि हज़ारों बाद-शाहों में जिनके नाम इतिहास में पाये जाते हैं केवल अशोक का नाम ही एक उज्जवल तारे की तरह अब तक जगमगा रहा है।

अशोक के समय का समाज—कहावत है यथा राजा तथा प्रजा। धर्मात्मा अशोक की प्रजा भी धर्मात्मा हो गई। लोग शान्ति-प्रिय हो गये और उनकी धार्मिक कट्टरता जाती रही। कुछ यवन (यूनानी) भी ऐसे थे जो हिन्दू-धर्म को मानने लगे थे और ऐसा लेख है कि एक यवन तो हिन्दू हो गया था। शिक्षा का प्रचार किसी किसी सूबे में आज-कल से भी अधिक था जैसा कि अशोक के लेखों से प्रकट होता है। मांस खाने का रवाज बराबर कम हो रहा था। यज्ञ बन्द

ही हो चुके थे। अधिकांश मनुष्य गृहस्थी के जंजाल को छो
संन्यास लेकर अपना जीवन व्यतीत करना चाहते थे।

मौर्य्यकाल का कला-कौशल—मौर्य्यकाल सुख और शांति
का समय था। इसलिए कला-कौशल की भी अच्छी उन्नति हुई।
अशोक की बनाई हुई बहुत-सी इमारतें नष्ट हो गई हैं परन्तु जो कुछ
मौजूद है हम उनसे उस समय की कारीगरी का अनुमान कर सकते
हैं। साँची और भारहुत के स्तूप ईंट-पत्थर के बने हुए अभी तक प्रसिद्ध
हैं। साँची के स्तूप के चारों तरफ़ पत्थर का घेरा है जो बिलकुल
लकड़ी के घेरे की तरह मालूम होता है जिस पर सुन्दर काम बना है।

इनके अलावा पहाड़ों और चट्टानों में गुफाये बनी हुई हैं जिनसे
मौर्य्यकाल की शिल्पकला का हाल मालूम होता है। इन गुफाओं के
भीतर बड़े-बड़े कमरे हैं जिनमें साधुओं, भिक्षुओं की सभायें हुआ
करती थीं। इस समय का संगतराशी का काम भी ऊँचे दर्जे का है।
पत्थर को चिकना, साफ़ कर ऊँचे-ऊँचे सुन्दर स्तम्भ खड़े करना मामूली
बात न थी। इन स्तम्भों को देखकर आज-कल के इञ्जीनियर भी
चकित रह जाते हैं। अशोक के समय की और भी पत्थर की चीज़ें
मिलती हैं जिन्हे देखकर आश्चर्य होता है। सारनाथ में पत्थर के
सिंहों की जो मूर्ति मिली है वह विचित्र है। इससे प्रकट होता है
कि पत्थर की गढ़ाई उस समय के कारीगर ख़ूब जानते थे।

अशोक के महल का वर्णन करता हुआ चीनी यात्री
फ़ाह्यान लिखता है कि वह ऐसा सुन्दर और विशाल था मानो
देवों ने बनाया हो। मनुष्य के लिए ऐसी कारीगरी दिखाना
असम्भव है।

मौर्य्य-साम्राज्य का पतन—ईसा से २३२ वर्ष पहले ४१ वर्ष राज्य करने के बाद अशोक की मृत्यु हो गई। उसके मरते ही मौर्य्य-साम्राज्य का पतन आरम्भ हो गया। इसके कई कारण हैं। अशोक के उत्तराधिकारियो में कोई ऐसा वीर अथवा प्रतापी नहीं था जो विदेशी आक्रमणो से राज्य को बचाता। अशोक की नीति ने भी साम्राज्य को हानि पहुँचाई। उसने तलवार उठाकर रख दी और युद्ध बिलकुल बन्द कर दिया था। इसका परिणाम यह हुआ कि सेना निकम्मी हो गई और लोग लड़ने-भिड़ने से दूर भागने लगे। जब बाहरी आक्रमण हुए और देश में विद्रोह हुआ तब उसके बेटे, पोते कुछ न कर सके। प्रान्तों में शासकों के अत्याचार के कारण विद्रोह खड़ा हो गया। विन्ध्याचल के दक्षिण का सारा देश साम्राज्य से अलग हो गया और उत्तरी सीमा के आस-पास के सूबे यूनानी राजा ने हड़प लिये। ऐसी दशा में मौर्य्य-वंश के अन्तिम सम्राट् बृहद्रथ को उसके सेनापति पुष्यमित्र ने (१८४ ई० पू०) मार डाला और राज्य पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। उसने एक नये वंश की नींव डाली जिसे शुंग-वंश कहते हैं।

अभ्यास

१—चन्द्रगुप्त को मौर्य्य क्यों कहते हैं? उसने मगध का राज्य किस प्रकार पाया था?

२—सिल्यूकस के साथ चन्द्रगुप्त की क्यों लड़ाई हुई और उसका क्या नतीजा हुआ?

३—चन्द्रगुप्त के राज्य की सीमा कहाँ तक थी? नकशा खींचकर दिखलाओ।

४—मौर्य्य-साम्राज्य में सेना का सगठन किस प्रकार हुआ था ?

५—चन्द्रगुप्त के शासन-प्रवन्ध का वर्णन करो।

६—मेगास्थनीज ने भारतीय समाज के विषय में क्या लिखा है ?

७—अ ोक की क्या विलक्षणता है ? उसके चरित्र की चन्द्रगुप्त के साथ तुलना करो।

८—कलिङ्ग देश कहाँ है ? अशोक के कलिङ्ग-युद्ध का वर्णन करो।

९—अशोक ने वौद्ध-धर्म क्यों स्वीकार किया ? वौद्ध-धर्म प्रचार के लिए उसने क्या किया ?

१०—'अशोक का राज्य धर्म-राज्य था'। इस कथन की पुष्टि करो

११—अशोक के सिद्धान्तो का समाज पर क्या प्रभाव पडा ?

१२—मौर्य्यकाल में शिल्प-कला की वड़ी उन्नति हुई। इस कथन की प्रमाण देकर व्याख्या करो।

१३—मौर्य-साम्राज्य के पतन के क्या कारण थे ?

१४—अशोक के राज्य का विस्तार नक्शा खींचकर दिखाओ।

——

अध्याय ६

शुंग, कान्व, शातवाहनवंशों के राज्य और विदेशी आक्रमण

शुंग-वंश—ब्राह्मण-साम्राज्य—तुम पहले पढ़ चुके हो कि मगध के अन्तिम राजा बृहद्रथ को उसके सेनापति पुष्यमित्र ने क़त्ल कर राज्य पर अपना अधिकार कर लिया था। पुष्यमित्र ब्राह्मण था। उसके समय में कलिङ्ग के राजा खारवेल ने मगध पर आक्रमण किया और पुष्यमित्र को पाटलिपुत्र से भगा दिया। बैक्ट्रिया के यूनानी राजा डिमीट्रिअस और मैनेण्डर (मिलिन्द) ने भी हमले किये। बड़े ज़ोर की लड़ाई हुई जिसमे पुष्यमित्र की विजय हुई। पुष्यमित्र ने अश्वमेध यज्ञ किया और वैदिक धर्म को अपनाया। यज्ञ होने लगे, संस्कृत भाषा का प्रचार हुआ। सुप्रसिद्ध वैयाकरण पाणिनि के ग्रंथ का भाष्य पतञ्जलि ने इसी समय लिखा।

यह सब होते हुए भी साम्राज्य छिन्न-भिन्न होने लगा और नये नये स्वाधीन राज्य बनने लगे। मगध का पहला-सा दबदबा न रहा। पुष्यमित्र की मृत्यु (१४९ ई० पू०) के बाद उसका बेटा अग्निमित्र राजगद्दी पर बैठा। परन्तु वह भी साम्राज्य की दशा को न संभाल सका। शुंग-वंश का अन्तिम राजा देवभूमि चरित्रहीन पुरुष था। उसके ब्राह्मण मन्त्री वासुदेव कान्व ने उसे मार डाला और स्वयं मगध का राजा बन बैठा। इसी ने कान्व-वंश की नींव डाली।

कान्व-वंश—वासुदेव कान्व ७२ ई० पू० में मगध का राजा हुआ। इस वंश में सब मिलाकर ४ राजा हुए और उन्होंने ४५ वर्ष तक राज्य किया। परन्तु ये ब्राह्मण राजा बिलकुल निकम्मे निकले। इन्होंने ऐसा कोई काम नहीं किया जिससे इनका इतिहास में नाम होता। कान्व-वंश का राज्य केवल मगध देश ही में था। साम्राज्य के अन्य भाग स्वाधीन हो चुके थे। कान्व-वंश के चतुर्थ राजा सुशर्मा को मार कर २७ ई० पू० के लगभग शातवाहन-वंश के राजा ने मगध-राज्य को अपने अधीन कर लिया। शातवाहन-वंशीय राजा इस समय दक्षिण में बलवान् हो रहे थे। उनके राज्य का विस्तार हिमालय से लेकर दक्षिण में तुंगभद्रा नदी तक था। शातवाहन-वंश के राजाओं के समय में भारतवर्ष में शिल्प, वाणिज्य, विद्या की खूब उन्नति हुई। भारतीय व्यापारी जहाज़ों पर सवार होकर अरब, फ़ारस, अफ़्रीका आदि देशों में व्यापार के लिए जाते थे। व्यापार की उन्नति होने के कारण कल्याण, सूरत, भड़ोंच आदि बन्दरगाह भी बन गये।

विदेशी आक्रमण—सिल्यूकस की मृत्यु के बाद बैक्ट्रिया (बल्ख) और पार्थिया (खुरासान) दोनों स्वाधीन हो गये थे। डिमीट्रिअस और मैनेण्डर* (मिलिन्द) जिनके हमलों का हाल तुम पहले पढ़ चुके हो बैक्ट्रिया के राजा थे; जब आपस के झगड़े

---

* बौद्ध-ग्रन्थों में यूनानी राजा मैनण्डर का नाम मिलिन्द लिखा है। यह राजा बौद्ध था। साकल (आधुनिक स्यालकोट) उसकी राजधानी थी।

के कारण वैक्ट्रिया का राज्य दुर्बल हो गया तो उसे पार्थिया के राजा मिथ्रेडेटीज ने (१५० ई० पू०) जीत लिया।

परन्तु यूनानी इस राज्य को बहुत दिन तक अपने अधिकार में न रख सके। उनके ऊपर एक ऐसी आपत्ति आई जिसने उन्हें नष्ट कर दिया। यह आपत्ति शक-जाति का हमला था।

शक कौन थे और कहाँ से आये?—शक मध्य एशिया की एक घूमने-फिरनेवाली जाति के लोग थे। इन्होंने यूनानियों को वैक्ट्रिया से निकाल दिया। धीरे धीरे वे हिन्दुकुश को पार कर भारत में घुस आये और उत्तर-पश्चिम के देशों को जीतकर उन्होंने अपना शक्तिशाली साम्राज्य बना लिया। शकों के दो राज्य उत्तर में थे और तक्षशिला, मथुरा उनकी राजधानियाँ थीं। तीसरा राज्य सौराष्ट्र (काठियावाड़) में था। शकों ने शातवाहन-वंश के राजाओं को युद्ध में हराकर कृष्णा नदी तक उनका सारा देश छीन लिया। सन् २२५ ईसवी तक शातवाहन-साम्राज्य का अन्त हो गया।

परन्तु शकों की प्रभुता भी अधिक काल तक न रही। मध्य एशिया की एक दूसरी जाति ने जिसका नाम यूची था आमू नदी से आगे बढ़ना शुरू किया। इन्हीं यूचियों की एक शाखा कुशान थी। कुशानदल के सर्दारों ने अपना संगठन कर भारत में प्रवेश किया और यूनानी अथवा शक-राज्यों को जीतकर अपना साम्राज्य बनाया। उत्तरी भारत में कुशान वंश का राज्य बनारस तक फैल गया। कुशान-वंश में कनिष्क सबसे प्रतापी राजा हुआ। इसका हाल आगे चलकर वर्णन करेंगे।

अभ्यास

१—शुङ्गवंश का राज्य किसने और कब स्थापित किया? इस वंश के प्रथम राजा के विषय में क्या जानते हो?

२—खारवेल कौन था? उसका पुष्यमित्र के साथ क्या सम्बन्ध था?

३—शुङ्गवंश का किस प्रकार अन्त हुआ?

४—कान्ववंश का राज्य कहाँ से कहाँ तक था? कान्ववंश के पतन के क्या कारण थे?

५—शक कौन थे और कहाँ से आये?

६—शकों के तीन प्रसिद्ध राज्य भारत में कौन कौन-से थे?

७—शकों को किसने पराजित किया?

अध्याय १०

कुशान-साम्राज्य—सम्राट् कनिष्क

कनिष्क का राजा होना—कनिष्क कुशान-वंश का सबसे प्रसिद्ध राजा है। इसके राजसिंहासन पर बैठने की तिथि के सम्बन्ध मे मतभेद है। अंगरेज़ विद्वान् कहते है कि वह १२० ईसवी मे राजा हुआ। परन्तु भारतीय विद्वानो का कहना है कि वह ७८ ई० में गद्दी पर बैठा और इसी समय से उसने शाक-संवत् चलाया।

कनिष्क की विजय—कनिष्क वीर योद्धा था। उसकी देश जीतने की प्रबल इच्छा थी। उसने मगध को जीत लिया और पूर्व के सूबों मे अपना सूबेदार नियत किया। मालवा भी उसके अधीन हो गया। वहाँ भी उसका हाकिम रहने लगा। कहते है कनिष्क ने पार्थिया और चीनवालो को युद्ध में हराया और काशगर, यारकन्द, ख़ुतन को भी जीत लिया। कुछ भी हो कनिष्क ने एक बड़ा साम्राज्य बनाया और चीन के सम्राट् की तरह देवपुत्र की उपाधि ली। बुढ़ापे मे उसने चीन पर फिर चढ़ाई की परन्तु उसके चार मन्त्रियो ने उसे मार डाला।

साम्राज्य का विस्तार—कनिष्क का साम्राज्य मध्य एशिया तक फैला हुआ था। उत्तर मे अल्ताइ पर्वत से लेकर दक्षिण में नर्मदा नदी तक सारे देश उसके अधीन थे। भारतीय राज्य की

कनिष्क के समय में बौद्ध-शिल्पकला की बड़ी उन्नति हुई। अनेक सुन्दर इमारते बनीं और पत्थर पर मूर्तियाँ खोदने में भी कारीगरों ने अद्‌भुत कौशल दिखलाया। मूर्ति बनाने में एक खास प्रकार की शैली से काम लिया गया जिसे गान्धार-शैली कहते हैं। इस शैली में यूनानी नमूनों का अनुकरण किया गया है। इस समय यूनानी देश में सब जगह इमारतें बनाते थे। कनिष्क ने अपना पेशा- वर का स्तूप बनाने के लिए एक यूनानी कारोगर को रक्खा था। कनिष्क के बनाये हुए कई सुन्दर मन्दिर और मकान टूटी-फूटी दशा में अभी तक मथुरा, तक्षशिला में पाये जाते है। मथुरा के अजायबघर में कनिष्क की एक विशाल मूर्ति रक्खी हुई है जिसमें सिर नहीं है।

कनिष्क के उत्तराधिकारी—कुशान-साम्राज्य का अन्त—कनिष्क के दो बेटे थे—वाशिष्क और हुविष्क। पिता की मृत्यु के बाद दोनो भाई एक दूसरे के बाद राजसिंहासन पर बैठे। हुविष्क ने काश्मीर में एक नगर बसाया जिसका नाम हुविष्कपुर रक्खा गया। मथुरा में उसने एक सुन्दर विहार (मठ) बनवाया जो महमूद ग़ज़नवी के हमले के समय मौजूद था। हुविष्क के बाद कुशान-वंश में कई राजा हुए। परन्तु साम्राज्य की हालत खराब होने लगी। सूबों के हाकिम स्वाधीन हो गये और उन्होंने अपने राज्य बना लिये।

अभ्यास

१—कनिष्क के राजगद्दी पर बैठने की कौन तिथि है ?

२—कनिष्क की विजयों का वर्णन करो और नक्शा खींचकर उसके राज्य का विस्तार दिखाओ।

खुजराहो का शिवमन्दिर

کھجراہو کا شیو مندر

३—कनिष्क ने बौद्ध-धर्म के लिए क्या किया ?

४—'कनिष्क के समय में देश की बड़ी उन्नति हुई।'—इस कथन की व्याख्या करो।

५—कनिष्क के समय की शिल्प-कला की उन्नति का वर्णन करो।

६—गाधार-शैली क्या चीज है ? उससे तुम क्या समझते हो ?

७—कुशान-साम्राज्य का पतन क्यों हुवा ?

अध्याय ११

गुप्त-साम्राज्य—वैदिक धर्म और साहित्य की उन्नति

गुप्त राज्य का स्थापित होना—तुम शातवाहन और कुशान राज्यों का हाल पहले पढ़ चुके हो। इनके पतन के बाद हमारे देश में कोई शक्तिशाली राज्य न बन सका। लगभग १०० वर्ष तक का इतिहास अन्धकार में है। इस काल में अशोक या कनिष्क की तरह कोई ऐसा सम्राट् न हुआ जो सारे देश को अपने अधीन कर अच्छा प्रबन्ध करता। छोटे-छोटे कई राज्य बन गये जो आपस में लड़ते-भिड़ते रहते थे। किन्तु चौथी शताब्दी ईसवी में गुप्तवंश के लोगों ने मगध में अपना एक छोटा-सा राज्य स्थापित किया। जब इस वंश के राजकुमार चन्द्रगुप्त ने लिच्छवि-वंश की राजकुमारी के साथ विवाह किया, तब उसे लिच्छवियों से अपना राज्य बढ़ाने में बड़ी मदद मिली। यह चन्द्रगुप्त सन् ३२० ई० में मगध का राजा हो गया। यह ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता कि इसके राज्य का विस्तार कहाँ तक था परन्तु ऐसा मालूम होता है कि पश्चिम में प्रयाग तक के देश उसे अपना राजा मानते थे।

चन्द्रगुप्त ने सन् ३२० ई० से अपना एक नया संवत् चलाया जो गुप्त-संवत् के नाम से प्रसिद्ध है। २० वर्ष राज्य करने के बाद सन् ३४० ई० में चन्द्रगुप्त (प्रथम) की मृत्यु हो गई। उसके बाद उसका बेटा समुद्रगुप्त राजसिंहासन पर बैठा।

समुद्रगुप्त की दिग्विजय—समुद्रगुप्त के समान वीर योद्धा कोई राजा नहीं हुआ। उसने दिग्विजय करने की इच्छा की। इसलिए उसका अधिकांश समय युद्ध करने मे बीता। उसने अनेक देश जीते और अपने साम्राज्य मे मिला लिये। पहले उसने उत्तरी भारत में अपने शत्रुओ को पराजित किया और उन्हे क़ैद कर लिया। इसके बाद वह चम्बल की तरफ बढ़ा और उसने आस-पास के देश को जीत लिया। बंगाल, आसाम, नैपाल के राजाओ ने उसे अपना सम्राट् माना और कर देना स्वीकार किया। उसकी ऐसी धाक बैठ गई कि अफग़ानिस्तान और गुजरात के राजा भी उससे डरने लगे। उत्तर के देशो को जीतकर समुद्रगुप्त ने दक्षिण पर चढ़ाई की। मध्य प्रदेश के घने जंगलो में होता हुआ वह उड़ीसा की खाड़ी के किनारे-किनारे गंजाम, विजगापट्टम होता हुआ काँची (कॉजीवरम्) पहुँच गया। दक्षिण के राजाओ को उसने युद्ध में हराया, परन्तु उनका देश उन्हें लौटा दिया। इसके बाद समुद्रगुप्त अपनी राजधानी को लौट आया। समुद्रगुप्त की विजयो का वर्णन इलाहाबाद के क़िले मे जो अशोक का स्तम्भ है उस पर खुदा हुआ है। इससे मालूम होता है कि उसका राज्य उत्तर मे हिमालय और काश्मीर से लेकर दक्षिण में नर्मदा तक और पश्चिम मे पंजाब से पूर्व मे ब्रह्मपुत्र नदी तक था। इतना ही नहीं लंका, काबुल, गांधार तक के राजा उसका रोब मानते थे।

समुद्रगुप्त निर्दयी विजेता न था। उसने बहुत-से पराजित शत्रुओं को उनका राज्य वापिस दे दिया। ऐसा करने मे उसने बुद्धिमानी की क्योंकि इतने बड़े साम्राज्य का प्रबन्ध करना असम्भव-सा ही था।

चरित्र—समुद्रगुप्त ने महाराजाधिराज की उपाधि ली और अश्वमेध यज्ञ किया। उसने ब्राह्मणों को देने के लिए सोने के सिक्के बनवाये जो अभी तक पाये जाते हैं। समुद्रगुप्त केवल योद्धा ही नहीं था। वह बड़ा गुणी, कवि और गायक भी था। वह स्वयं विद्वान था और विद्वानों का आदर करता था। वह वीणा बजाने में निपुण था। इसका उसे यहाँ तक शौक़ था कि उसने अपने सिक्कों पर भी वीणा की तसवीर खुदवाई थी। राजा स्वयं वैष्णव था, परन्तु दूसरे धर्मों का आदर करता था। लंका के बौद्ध राजा को उसने बोधगया में यात्रियों की सुविधा के लिए मठ बनाने की आज्ञा दे दी थी।

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य (३८०—४१२ ई०)—यह ठीक तौर पर नहीं कहा जा सकता कि समुद्रगुप्त की मृत्यु कब हुई। परन्तु अनुमान किया जाता है कि उसने लगभग ५० वर्ष तक राज्य किया होगा। समुद्रगुप्त के बाद उसका पुत्र रामगुप्त राजगद्दी पर बैठा। परन्तु उसे मथुरा के शक राजा के साथ लड़ाई करनी पड़ी। इस लड़ाई में उसके छोटे भाई चन्द्रगुप्त ने बड़ी वीरता दिखाई और वह उत्तरी भारत का सम्राट् हो गया। सम्भव है रामगुप्त को चन्द्रगुप्त ने मार डाला हो या गद्दी से उतार दिया हो।

चन्द्रगुप्त भी अपने बाप की तरह शूरवीर था। उसने मालवा, गुजरात, काठियावाड़ के शक राजाओं को युद्ध में पराजित किया और उनके राज्य छीन लिये। इसलिए उसे शकारि (शकों का शत्रु) कहते हैं। उसने चाँदी के सिक्के चलाये और विक्रमादित्य (वीरता का सूर्य) की उपाधि ली। चन्द्रगुप्त वैष्णव था। उसके

फनिष्क के सिक्के

کنشک کے سکے

समुद्रगुप्त का सिक्का

سمدرگپت کے سکے

चन्द्रगुप्त के सिक्के

چندرگپت کے سکے
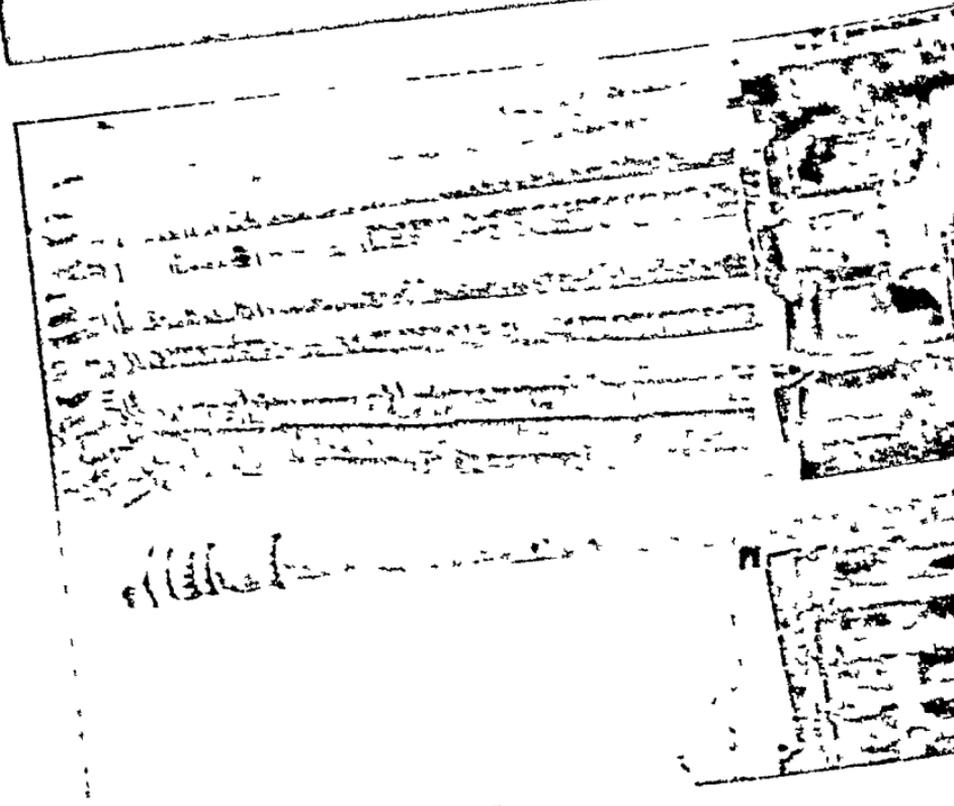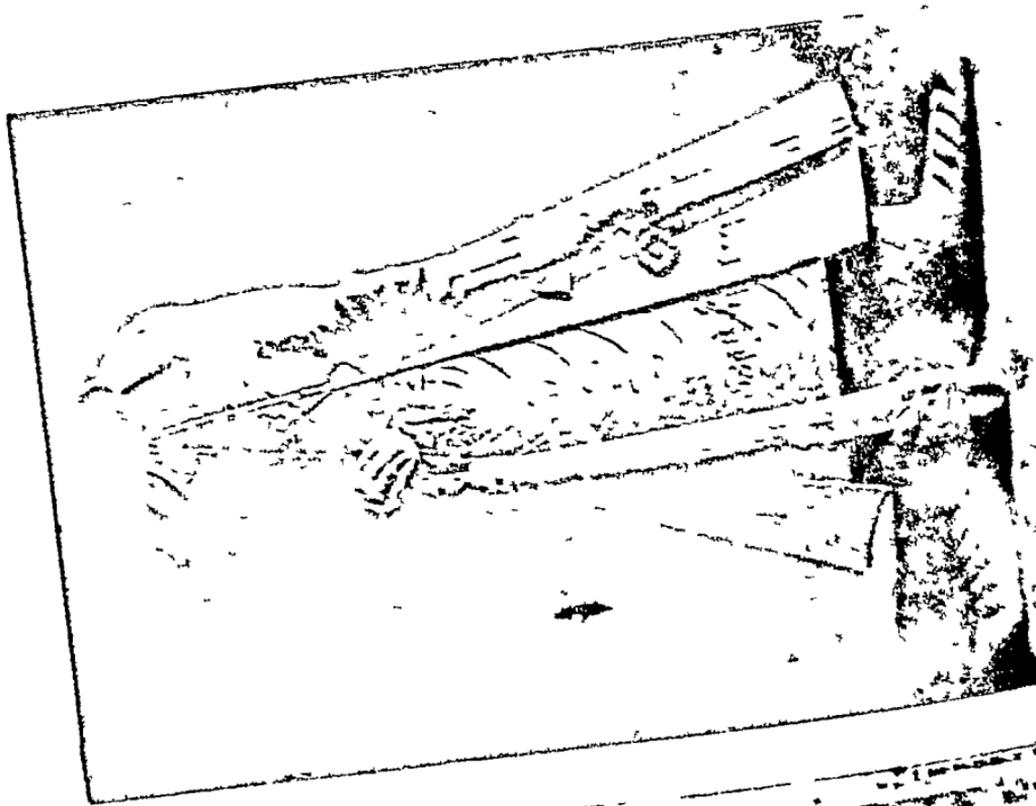
समय में वैदिक धर्म फिर उन्नत हुआ। ब्राह्मणों का प्रभाव बढ़ा और यज्ञ भी होने लगे। चन्द्रगुप्त का राज्य हिमालय से नर्मदा तक और बंगाल से पंजाब और सिन्ध तक था।

चन्द्रगुप्त का विद्याप्रेम—चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य विद्याप्रेमी था। उसके दर्बार में अनेक विद्वान् रहते थे जिनका वह आदर करता था। संस्कृत के कवियों में कालिदास ने कई काव्य बनाये जिनमें शकुन्तला, मेघदूत, कुमारसम्भव, रघुवंश सबसे श्रेष्ठ समझे जाते हैं। यूरोप के विद्वान् भी शकुन्तला की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करते हैं।

विक्रम-संवत्—विक्रम-संवत् जो आज-कल हमारे देश में प्रचलित है ईसा के ५७ वर्ष पहले से आरम्भ होता है। यह ठीक तौर पर नहीं कहा जा सकता कि यह संवत् किसने चलाया। साधारण मनुष्यों की धारणा है कि यह उज्जैन के किसी राजा विक्रमादित्य का चलाया हुआ है। परन्तु इतिहास में इस विक्रमादित्य का कोई पता नहीं लगता। कुछ लोग कहते हैं कि इसे उज्जैन के ज्योतिषियों ने चलाया होगा। किसी समय यह संवत् मालव-संवत् के नाम से भी प्रसिद्ध था। अधिकतर विद्वानों की राय है कि यह संवत—मालव नाम की जाति के लोगों का चलाया हुआ है, जो सिकन्दर के आक्रमण के समय पंजाब मे रहते थे। कुछ समय के बाद ये लोग इधर-उधर फैल गये और जिस देश में वे बसे वह मालव कहलाने लगा। बहुत-से नर्मदा और अरावली पहाड़ के बीच में बस गये। यह देश मालवा कहलाने लगा। छठी शताब्दी ईसवी के बाद यह संवत् विक्रमी संवत् के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

गुप्त सा

गुजरात

मालवा

धार

महाकोशल

सोमनाथ

बंगाल की खा

अरब सागर

सिंहल या ताम्रपर्णी

समुद्र गुप्त की दिग्विजय

फ़ाह्यान—चन्द्रगुप्त के समय में चीनी यात्री फाह्यान बौद्ध-ग्रन्थों को खोज करने भारतवर्ष में आया। हमारा देश बौद्ध-धर्म का जन्मस्थान है। इसलिए प्राचीन समय में बहुत-से चीनी विद्वान् यहाँ यात्रा करने और धर्म-सम्बन्धी ग्रन्थ पढ़ने आते थे। फाह्यान ६ वर्ष तक चन्द्रगुप्त के राज्य में रहा। उसने अपनी यात्रा का विवरण लिखा है जिससे उस समय के शासन, समाज का हाल मालूम होता है। वह लिखता है कि प्रजा सुखी थी। कर अधिक नहीं लिये जाते थे। राज्य का प्रबन्ध अच्छा था। लोग बेखटक एक जगह से दूसरी जगह आ-जा सकते थे। कानून नरम था। मामूली अपराधों का दण्ड केवल जुर्माना था। फाँसी बहुत कम दी जाती थी और अंगभंग का दण्ड केवल राजद्रोहियों, डाकुओं अथवा लुटेरों को दिया जाता था। यात्रियों की सुविधा के लिए सड़कों के किनारे धर्मशालायें बनी हुई थीं। पाटलिपुत्र बड़ा शहर था। अशोक का महल अभी तक मौजूद था। नगर में एक अस्पताल था जहाँ दीन, अनाथों को मुफ़्त दवा दी जाती थी और भोजन भी मिलता था। बीच के देश में जहाँ ब्राह्मणों का प्रभाव अधिक था वहाँ न कोई जीवहिंसा करता था, न शराब पीता था और न प्याज खाता था। गोश्त और शराब बेचनेवालों की दूकानें नगर के बाहर होती थीं। देश खूब मालामाल था। मन्दिर और मठों की भरमार थी। विद्या पढ़ने और धर्म-चर्चा करने में ब्राह्मण लोग अपना समय बिताते थे और पवित्रता से रहते थे। धर्म के मामलों में प्रजा को पूर्ण स्वतन्त्रता थी। प्रत्येक मनुष्य बे-रोकटोक अपने धर्म का पालन कर सकता था।

कला-कौशल—गुप्त राजा कला के प्रेमी थे। समुद्रगुप्त स्वयं कवि था और वीणा बजाने में प्रवीण था। मूर्तिपूजा के प्रचार का कला-कौशल पर बहुत प्रभाव पड़ा। अनेक सुन्दर मन्दिर बने। पत्थर पर मूर्तियाँ खोदी गईं और चित्रकारी भी हुई। इस काल की इमारतों में कानपुर ज़िले में भीतर गाँव और ललितपुर में देवगढ़ के मन्दिरों से उस समय की कारीगरी का पता लगता है। राजा चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य का बनवाया हुआ लोहे का स्तम्भ जो दिल्ली में है, धातु के काम का उत्तम नमूना है। चित्रकला में भी गुप्तकाल के कारीगर निपुण थे जैसा कि अजन्ता की गुफाओं के चित्रों से प्रकट होता है। गुप्तकाल की पत्थर की खुदाई और मूर्तियाँ इतनी बढ़िया थीं, कि उनकी सारे देश में नक़ल की जाती थी।

अभ्यास

१—गुप्त-राज्य किस प्रकार स्थापित हुआ? चन्द्रगुप्त प्रथम ने किस तरह अपनी शक्ति को बढ़ाया?

२—समुद्रगुप्त की दिग्विजय का वर्णन करो और नक्शा खींचकर उसके साम्राज्य का विस्तार दिखाओ।

३—चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य को शकारि क्यों कहते हैं? उसके समय में साहित्य, कला की जो उन्नति हुई उसका वर्णन करो।

४—विक्रमीय संवत् किसने प्रचलित किया?

५—फाहियान ने चन्द्रगुप्त के (१) शासन-प्रबन्ध और (२) भारतीय समाज के विषय में क्या लिखा है?

६—गुप्त राजाओं के समय में हिन्दू-धर्म की उन्नति क्यों हुई?

७—गुप्त-साम्राज्य के पतन का कारण बताओ।

इलोरा का कैलाश मन्दिर

الورہ کا کیلاش مندر
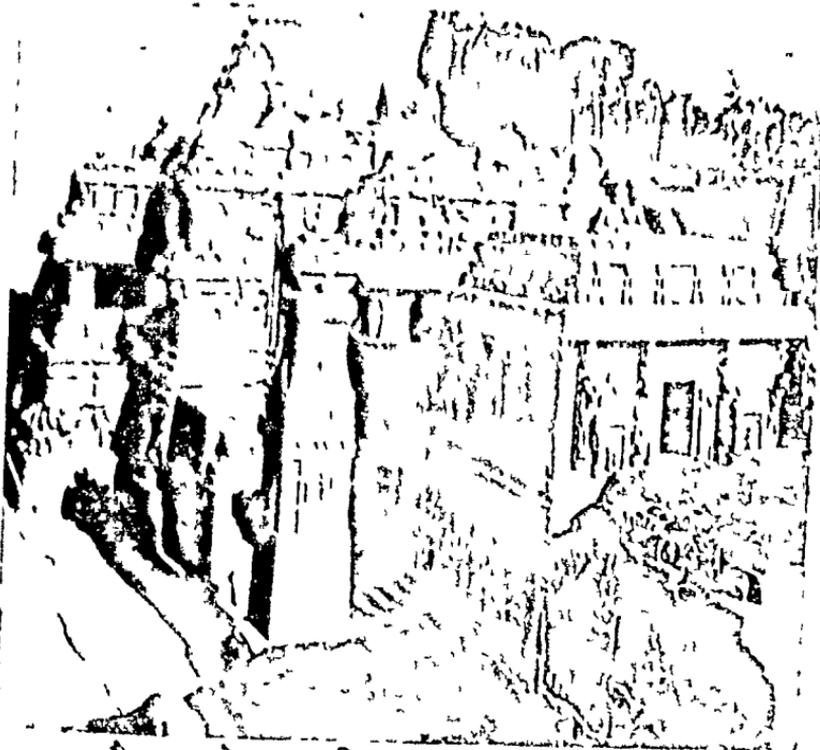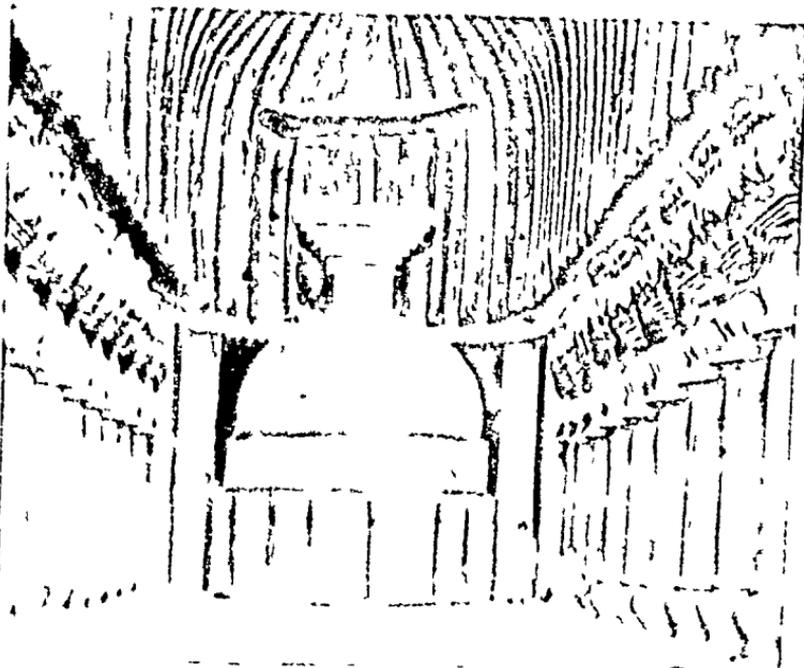
कार्ली के मन्दिर का भीतरी दृश्य

کارلی مندر کے بھیتر

अध्याय १२

हूणों का पतन—हर्षवर्धन अथवा शीलादित्य

हूण—तुम हूणों का हाल पहले पढ़ चुके हो। इन्होंने गुप्त-साम्राज्य को नष्ट कर दिया और बार बार पंजाब, राजपूताना पर हमले किये। मालवा को जीतकर वहाँ उन्होंने अपना राज्य स्थापित कर लिया। परन्तु उनका वैभव बहुत दिन तक न रह सका। जहाँ आजकल संयुक्त-प्रान्त है वहाँ मौखरी नामक वंश का राज्य था। इस वंश के राजाओं ने हूणों से ख़ूब टक्कर ली। हूण-राज्य योरप, एशिया में दूर तक फैला हुआ था। भारतवर्ष में भी साकल (स्यालकोट) उनकी राजधानी थी। तोरमाण और उसका बेटा मिहिरकुल हूणों के दो वीर योद्धा हुए हैं। जब मौखरी-वंश के राजा हूणों को भगाने के प्रयत्न में लगे थे मालवा के वीर यशोधर्मन ने मगध-नरेश बालादित्य की मदद से सन् ५२८ ईसवी में मिहिरकुल को युद्ध में बुरी तरह हराया और उसे काश्मीर की तरफ़ भगा दिया। यशोधर्मन मालवा देश का ही एक राजा था। वीर और प्रतापी तो था ही। थोड़े ही दिनों में उसने उत्तरी भारत को जीतकर अपना साम्राज्य स्थापित कर लिया। परन्तु यह साम्राज्य अधिक दिन तक न रहा। जिस शीघ्रता से वह बना था उसी तरह नष्ट हो गया।

थानेश्वर का राज्य—गुप्त-साम्राज्य के छिन्न-भिन्न होने पर हमारे देश में जो राज्य बने उनमें तीन अधिक प्रसिद्ध हैं :—(१) मौखरी-वंश का राज्य जो उस देश में था जहाँ आज-कल

संयुक्त-प्रदेश, आगरा व अवध का सूबा है, (२) दूसरा मगध का राज्य जहाँ अभी तक गुप्तवंश के राजा राज्य करते थे; (३) तीसरा थानेश्वर का राज्य जो पंजाब के पूर्व में था। थानेश्वर में प्रभाकरवर्धन नामक एक बड़ा प्रतापी राजा हुआ। उसके दो बेटे थे—राज्यवर्द्धन और हर्षवर्धन और एक बेटी थी जिसका नाम राज्यश्री था। उसका विवाह मौखरी-वंश के राजा गृहवर्मन के साथ हुआ था। सन् ६०४ ईसवी में प्रभाकरवर्धन का देहान्त हो गया और उसका बड़ा लड़का राज्यवर्धन गद्दी पर बैठा।

इसी समय मालवा-नरेश ने गृहवर्मन पर चढ़ाई की और उसे मार डाला और उसकी रानी राज्यश्री को क़ैदखाने में डाल दिया। राज्य-वर्धन यह ख़बर पाकर आगबबूला हो गया। वह अपनी सेना लेकर गया और उसने मालवा-नरेश को युद्ध में पराजित किया। परन्तु राज्यश्री को न छुड़ा सका। इतने में बङ्गाल के राजा ने राज्यवर्द्धन पर हमला किया और उसे मार डाला। बड़े भाई की मृत्यु के बाद राजमन्त्रियों के कहने-सुनने से सन् ६०६ ई० में हर्ष ने राजसिंहासन पर बैठना स्वीकार किया।

हर्षवर्धन की विजय—हर्ष ने राजगद्दी पर बैठते ही अपनी बहन को छुड़ाने की फ़िक्र की। इसी समय ख़बर मिली कि मालवा-नरेश ने राज्यश्री को क़ैदखाने से छोड़ दिया है और वह विन्ध्याचल पर्वत के जङ्गलों में चली गई है। हर्ष ने बड़ी कठिनता से उसका पता लगाया और उसे वापिस ले आया।

इसके बाद उसने अपने भाई के खून का बदला लेने के लिए बङ्गाल पर चढ़ाई की। राजा भाग गया और बङ्गाल का देश हर्ष के हाथ आगया। हर्ष ने अब अपनी सेना का संगठन किया और पञ्जाब, राजपूताना को छोड़कर सारे उत्तरी भारत पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। दक्षिण-पश्चिम की तरफ़ गुजरात, काठियावाड़, मालवा भी उसके अधीन हो गये। कन्नौज को हर्ष ने अपनी राजधानी बनाया और उसे सुन्दर महलों और मन्दिरों से सुशोभित किया।

हर्ष उत्तरी भारत को जीतकर ही सन्तुष्ट न हुआ। उसने दक्षिण पर भी चढ़ाई की। परन्तु चालुक्य राजा पुलकेशी द्वितीय ने ६२० ई० के लगभग उसका वीरता से सामना किया और उसे आगे बढ़ने से रोक दिया।

हर्ष धर्मात्मा राजा था—हर्ष धर्मात्मा राजा था। वह पहले शैव यानी शिवजी का उपासक था परन्तु पीछे से बौद्ध-धर्म की ओर उसकी प्रवृत्ति अधिक हो गई थी। उसने अपने राज्य में मांस खाना बन्द कर दिया और गङ्गा के तट पर सैकड़ों स्तूप बनवाये। यद्यपि बौद्ध-धर्म में हर्ष की अधिक रुचि थी, परन्तु वह दूसरे धर्मों का भी आदर करता था। जब चीनी यात्री ह्वेनसांग भारत में आया तब राजा ने कन्नौज में एक बड़ी सभा की जिसमें बहुत-से ब्राह्मण और बौद्ध विद्वान् उपस्थित हुए। भगवान् बुद्ध की कई दिन तक पूजा होती रही। चीनी यात्री लिखता है कि इस सभा के समाप्त होने पर वह राजा के साथ प्रयाग गया जहाँ प्रति पाँचवें वर्ष एक बड़ा उत्सव होता था। हर्ष बारी-बारी से सूर्य, शिव, बुद्ध की पूजा करता था और पाँच वर्ष के

संचय किये हुए धन को दान कर देता था। यहाँ तक कि वह अपने बहुमूल्य वस्त्र और जवाहिरात भी दान दे देता था। जब कुछ न रहता तब अपनी बहन राज्यश्री से कपड़ा माँगकर शरीर ढकता था। ह्वेनसाँग ने यह सब अपनी आँखों से देखा था। हर्ष ने अपने राज्य के हर एक सूबे में अस्पताल और धर्मशालायें बनवाईं थीं जहाँ भोजन, पानी यात्रियों को मिलता था और वैद्य रहते थे जो मुफ्त ओषधि देते थे।

ह्वेनसाँग (य्वान च्वाँग) (६२९-६४३ ई०)—हर्ष का राज्य-प्रबन्ध—हर्ष के समय में चीनी यात्री ह्वेनसाँग जिसे य्वान च्वाँग भी कहते हैं हमारे देश में आया। वह गोबी के रेगिस्तान को पार कर ख़ुतन होता हुआ अफ़ग़ानिस्तान पहुँचा और वहाँ से ख़ैबर की घाटी में होकर उसने भारत में प्रवेश किया। ह्वेनसाँग भारतवर्ष में १५ वर्ष तक ठहरा और उसने सारे देश में भ्रमण किया। उसने हर्ष के समय का बहुत कुछ हाल लिखा है। जिस समय ह्वेनसाँग आया बौद्ध-धर्म का अधःपतन प्रारम्भ हो गया था। पाटलिपुत्र गिरी दशा में था। ह्वेनसाँग नालन्द विश्वविद्यालय में भी कुछ दिन शास्त्र पढ़ने के लिए ठहरा था। वह लिखता है कि यहाँ १० हजार विद्यार्थी मुफ्त शिक्षा पाते थे। विद्यालय में व्याख्यान देने के लिए १०० बड़े-बड़े कमरे बने हुए थे।

हर्ष के राज्य-प्रबन्ध का वर्णन करता हुआ यात्री लिखता है कि राजा अपने राज्य में दौरा करता था और हर एक बात की स्वयं जाँच करता था। उसकी प्रजा उससे प्रसन्न थी। जब वह देहातों में जाता था तो लोग दही, चीनी, फूल उसे भेंट करते थे। राज्य के कर्मचारियों

हर्ष का साम्राज्य
६४० ई० में भारत
नेपाल
पुण्ड्रवर्द्धन
पाटलिपुत्र
गौड
समतट
(उड़ीसा)
पुरि
बं गा ल
की
खा ड़ी
सा ग र
नागपट्टम
मदुरै
सिंहल द्वीप
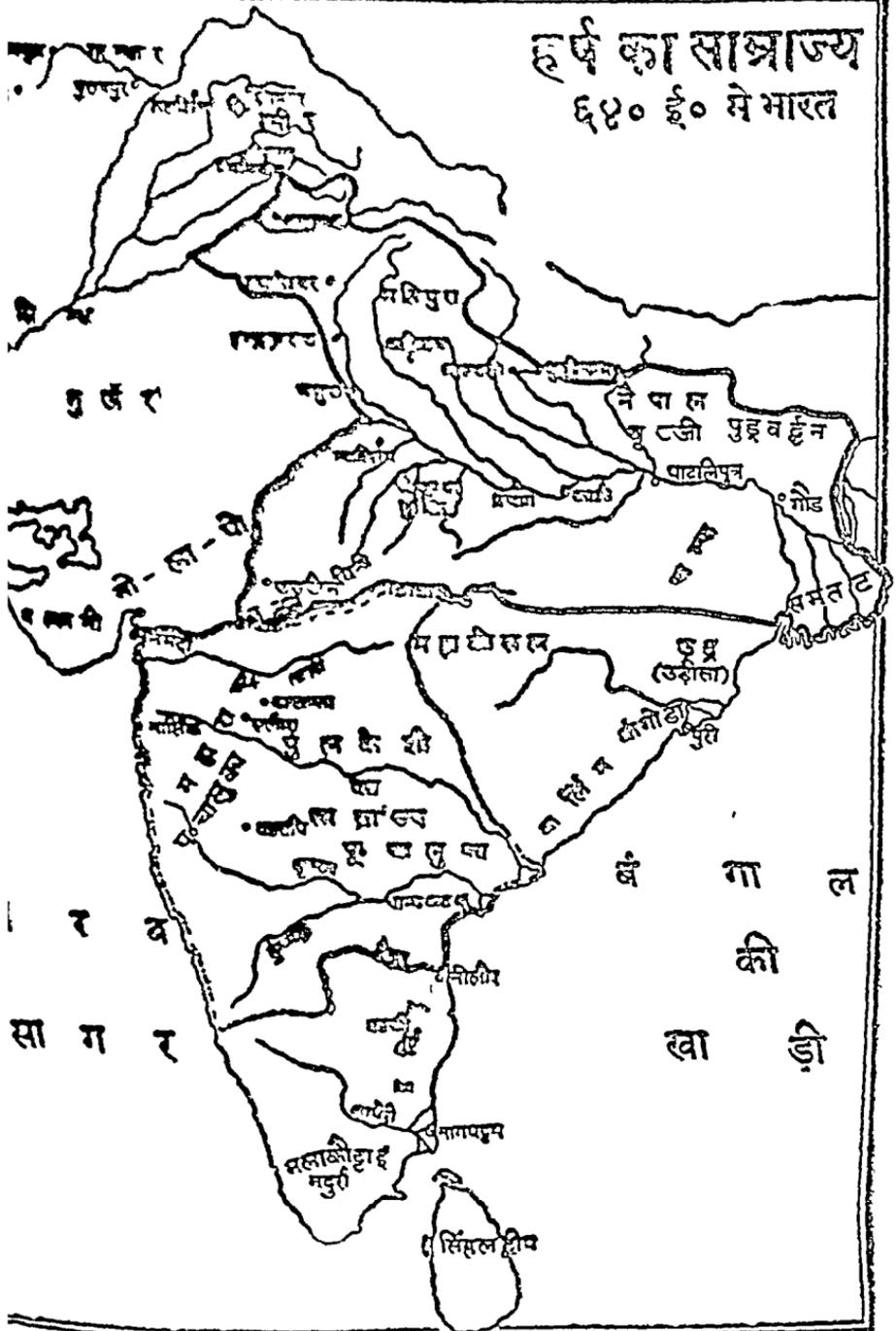
बौद्ध-धर्म का पतन—पहले कह चुके हैं कि हर्ष के समय में बौद्ध-धर्म का पतन आरम्भ हो गया था। इसके कई कारण हैं। गुप्त राजा वैष्णव थे। उनके समय से हिन्दू-धर्म की बराबर उन्नति हो रही थी। ब्राह्मणों का प्रभाव अधिक बढ़ गया था। बौद्ध-धर्म में भी बहुत-से दोष पैदा हो गये थे। मठों के अध्यक्षों और भिक्षुओं के दुराचारों के कारण बौद्ध-धर्म में लोगों की श्रद्धा कम हो गई थी। सन् ७८८ ईसवी में मलाबार में श्रीशंकराचार्य का जन्म हुआ। उन्होंने बौद्ध-धर्म का खंडन किया, वैदिक-धर्म की शिक्षा दी और अपने मठ स्थापित किये। राजपूतों ने भी बौद्ध-धर्म को नहीं अपनाया। उन्होंने ब्राह्मणों का विशेष आदर किया और उन्हीं के धर्म को स्वीकार किया। मुसलमानों के आक्रमणों से बौद्ध-धर्म को गहरी चोट पहुँची। थोड़े दिनों बाद उत्तरी भारत में उसका बिलकुल प्रभाव न रहा।

अभ्यास

१—हूणों का पतन किस प्रकार हुआ? हूण-राज्य कहाँ से कहाँ तक था?

२—हर्ष की मृत्यु के बाद उत्तरी भारत में तीन प्रसिद्ध राज्य कौन-से थे?

३—हर्ष की विजयों का वर्णन करो। नकशा खींचकर उसके राज्य का विस्तार दिखाओ।

४—हर्ष के चरित्र का वर्णन करो।

५—हर्ष के समय का इतिहास हमें कैसे मालूम होता है?

६—ह्वेनसांग (ह्यान च्वांग) कौन था और क्यों भारत में आया? उसने भारतवर्ष के विषय में क्या लिखा है?

७—बौद्ध-धर्म की उन्नति के कारणों का वर्णन करो।

अध्याय १३

(१) गुर्जर-प्रतिहार-साम्राज्य

राजपूतों की उत्पत्ति—हर्ष की मृत्यु के बाद भारत में बहुत-से राज्य स्थापित हो गये। ये राज्य राजपूतो के थे। राजपूतों की उत्पत्ति के विषय में विद्वानों में मतभेद है। राजपूतों का कहना है कि हम प्राचीन सूर्यवंशी और चन्द्रवंशी क्षत्रियों की सन्तान हैं। परन्तु कुछ लोगों की राय है कि वे शक, हूण, गुर्जर आदि जातियों के वंशज हैं। ये बाहरी जातियाँ हिन्दुस्तान में बस गईं और जब उन्होंने अपने राज्य बना लिये तब ब्राह्मणों ने उनका गौरव बढ़ाने को उन्हे क्षत्रिय बना दिया। क्षत्रिय के स्थान मे राजपुत्र अथवा राजपूत शब्द का प्रयोग होने लगा। राजपूतों के बड़े दल चौहान, प्रतिहार, परमार आदि कहते हैं कि हमारी उत्पत्ति आबू के पहाड़ पर ब्रह्मा के यज्ञकुंड से हुई है। कुछ भी हो यह नही कहा जा सकता कि राजपूत प्राचीन समय के क्षत्रियों की विशुद्ध सन्तान है। कालान्तर में भारत में जातियों का आपस में हेलमेल हो गया है और उनके सम्मिश्रण से अनेक नई जातियाँ बन गई हैं।

कन्नौज-राज्य—हर्ष के साम्राज्य का पतन होने के बाद कन्नौज में यशोवर्मा नामक एक बड़ा प्रतापी राजा हुआ। उसने सन् ७४० ईसवी तक राज्य किया। वह बड़ा योद्धा था परन्तु जब काश्मीर के

राजा ललितादित्य ने कन्नौज पर चढ़ाई की तो वह युद्ध में हार गया और उसका राज्य काश्मीर-राज्य में मिला लिया गया।

परन्तु काश्मीर की प्रभुता अधिक दिन तक न रही। ललितादित्य के बाद जो राजा हुए उनमें इतने बड़े साम्राज्य को सँभालने की शक्ति ही न थी। काश्मीर का यह हाल था; उधर उत्तरी भारत में दो नये शक्तिशाली राज्य बन रहे थे—एक तो बंगाल में पाल-वंश का राज्य, दूसरा मालवा-राजपूताना में गुर्जरों का राज्य। गुर्जर लोग भी हूणों की तरह बाहर से भारत में आये थे। जिस समय अरब-वालों ने सिन्ध पर हमला किया और भारत को जीतने के लिए आगे क़दम बढ़ाया, गुर्जर-प्रतिहारों ने उन्हें रोका और देश की रक्षा की। अरबों के आक्रमणों का हाल आगे चलकर वर्णन करेंगे।

प्रतिहार-साम्राज्य का पतन—प्रतिहार-साम्राज्य की इस समय धाक जमी हुई थी। सन् ८४० ईसवी के लगभग इस वंश में भोज नामक प्रतापी राजा हुआ। उसने पालों को भगा दिया और कन्नौज को फिर से अपनी राजधानी बनाया। परन्तु जब दक्षिण में राष्ट्रकूट-वंश ने जोर पकड़ा तब उन्होंने प्रतिहार-राज्य पर हमला करना आरम्भ कर दिया। राष्ट्रकूटों और प्रतिहारों में घोर शत्रुता थी। वे एक दूसरे का नाश करने पर कमर कसे हुए थे। सन् ९३१ ईसवी में महीपाल की मृत्यु के समय साम्राज्य की दशा अच्छी न थी। उसके अधीन राज्य एक-एक कर स्वाधीन हो रहे थे। गुजरात में चालुक्य, मालवा में परमार, मथुरा में यादव, जैजाकभुक्ति (बुन्देल-खण्ड) में चन्देल-वंशों ने अपने स्वाधीन राज्य बना लिये। प्रतिहार-साम्राज्य के छिन्न-भिन्न होने पर अन्य राज्यों की भी शक्ति बढ़ गई।

पालवंश का बंगाल में प्रभुत्व अधिक हो गया। पंजाब में शाहीवंश के ब्राह्मण राजा जयपाल ने प्रतिहारों के राज्य का कुछ भाग्य दबा लिया। शाकम्भरी और पुष्कर के चौहान भी बलवान् हो गये।

प्रतिहार-साम्राज्य की शक्ति दिन पर दिन कम हो रही थी। १० वीं शताब्दी के अन्त में जब राज्यपाल कन्नौज का राजा हुआ, तब उसका राज्य केवल कन्नौज के आस-पास ही था। साम्राज्य के शेष भाग स्वाधीन हो चुके थे। यदि इन स्वाधीन राज्यों को दम लेने का मौका मिलता, तो शायद एक बड़ा साम्राज्य स्थापित हो जाता परन्तु ईश्वर की ऐसी इच्छा न थी। भारत पर एक नई आपत्ति आई जिसने इन राज्यो के नाश का बीज बो दिया। यह आपत्ति थी मुसलमानो के आक्रमण। महमूद गजनवी बार-बार हिन्दुस्तान पर चढ़ आया और उसने लूट-मार करना आरम्भ कर दिया। मुसलमानों ने हिन्दुस्तान का मार्ग देख लिया और राजपूत राजाओं को युद्ध में पराजित कर अपना साम्राज्य स्थापित कर लिया। यह सब हाल तुम आगे चलकर पढ़ोगे।

(२) दक्षिण के राज्य

चालुक्य—तुम पहले पढ़ चुके हो कि दक्षिण में सन् २३६ ईसवी तक शातवाहनवंश का दौर-दौरा रहा। शातवाहनवंश के राजाओं ने अपना राज्य उत्तरी भारत तक बढ़ा लिया था। इनके बाद चालुक्य-वंश की प्रभुता बढ़ी। इस वंश में पुलकेशी द्वितीय नामक एक बलवान् राजा हुआ। उसने श्रीहर्ष को दक्षिण-विजय करने से रोका और नर्मदा से पीछे हटा दिया। ह्वेनसाँग सन् ६४१ ईसवी में पुलकेशी

के दर्बार में गया था। उसने अपने विवरण में उसकी शान-शौक़त और पराक्रम का वर्णन किया है। सन् ६४२ ईसवी में पुलकेशी को काञ्ची के पल्लवराजा ने युद्ध में मार डाला और उसकी राजधानी को लूटा। परन्तु पुलकेशी के बेटे ने फिर अपने राज्य को सँभाल लिया और युद्ध में पल्लवों के दाँत खट्टे कर दिये।

राष्ट्रकूट—राष्ट्रकूटों का अभ्युदय होने पर चालुक्यों की प्रभुता नष्ट हो गई। राष्ट्रकूट राजा बड़े शक्तिशाली थे। उनकी अरबवालों के साथ मित्रता थी। व्यापार-द्वारा बहुत-सा रुपया देश में आता था। सन् ९७३ ईसवी के लगभग राष्ट्रकूटों को उनके शत्रुओं ने युद्ध में हरा दिया और उनकी प्रभुता को नष्ट कर दिया।

पल्लव—तीसरी, चौथी शताब्दी में पल्लवों का उत्कर्ष हुआ। पल्लवों ने काञ्ची (काञ्जीवरम्) को अपनी राजधानी बनाया। पल्लव राजा विष्णुगुप्त की समुद्रगुप्त से मुठभेड़ हुई थी जिसमें गुप्त-सम्राट् को विजय प्राप्त हुई थी। छठी शताब्दी के अन्त में पल्लवों ने चेर, चोल, पाण्ड्य राज्यों को भी अपने अधीन कर लिया और अपना साम्राज्य बनाया। परन्तु उन्हें चालुक्यों के साथ बड़ी लड़ाई लड़नी पड़ी। जब चोलवंश का अभ्युदय हुआ तब पल्लवों पर चोल राजाओं ने चढ़ाई की और उन्हें युद्ध में हराया। इस प्रकार पल्लव-राज्य का अन्त हो गया।

यादव, होयसल और काकतीय-वंश—इसके बाद दक्षिण में यादव, होयसल, काकतीय-वंशों की उन्नति हुई। मुसलमानों के आक्रमण के समय ये राज्य मौजूद थे। उन्होंने मुसलमानों से ख़ूब लोहा लिया परन्तु अन्त में हार गये।

यादव—देवगिरि के यादव पहले राष्ट्रकूटों के अधीन थे। महाराष्ट्र में इनका राज्य था। रामचन्द्र यादव के समय में अलाउद्दीन खिलजी ने देवगिरि पर हमला किया और उसे दिल्ली की अधीनता स्वीकार करने पर विवश किया। सन् १३१० ईसवी में रामचन्द्र की मृत्यु के बाद शंकरदेव राजा हुआ। उसने दिल्ली के बादशाह को कर देना बन्द कर दिया। इस पर सन् १३१२ ईसवी में मलिक काफ़ूर ने दक्षिण पर चढ़ाई की। शंकरदेव मारा गया और देवगिरि पर मुसलमानों का अधिकार स्थापित हो गया।

हौयसल—जिस समय मुसलमानों ने दक्षिण पर चढ़ाई की द्वारसमुद्र में होयसल-वंश का राज्य था। ये राजा शक्तिशाली थे। सन् १३१० ईसवी में मलिक काफ़ूर ने द्वारसमुद्र पर चढ़ाई की और राजधानी को नष्ट कर दिया। हौयसल-वंश ने दिल्ली का आधिपत्य स्वीकार कर लिया।

काकतीय—तेलंगाना में काकतीय-वंश के लोग राज्य करते थे। यह राज्य उस देश में था जहाँ निज़ाम के राज्य का पूर्वी भाग है। उसकी राजधानी वारंगल में थी। काकतीय राजा भी दिल्ली के बादशाहों से बराबर लड़ते रहे और अन्त में उनके अधीन हो गये।

सुदूर दक्षिण—प्राचीन समय से तामिल-प्रदेश में तीन प्रसिद्ध राज्य थे—चोल, चेर और पाण्ड्य। ये राज्य सम्पत्तिशाली थे। यूरोप के देशों के साथ ये व्यापार करते थे। इनकी सभ्यता भी निराली थी। दसवीं, ग्यारहवीं शताब्दी में चोलवंश उन्नति को पहुँचा। चोलवंश में कई प्रतापी राजा हुए। उन्होंने पाण्ड्य और चेर-राज्यों को भी अपने अधीन कर लिया। सन् १३१० ईसवी में मलिक

हज़रत को कष्ट देना आरम्भ किया। इस पर सन् ६२२ ई० में वे मक्का को छोड़कर मदीना[1] चले गये। वहाँ भी उन्होंने लोगों को बताया कि ईश्वर एक है। मनुष्य को केवल उसी की उपासना करनी चाहिए। इस्लाम के माननेवालों का कर्त्तव्य है कि अपने धर्म के प्रचार के लिए जी-जान से प्रयत्न करें। मदीना में मुहम्मद साहब के उपदेश का अधिक आदर हुआ। उनके अनुयायियों की संख्या बढ़ने लगी। सन् ६३२ ईसवी में मुहम्मद साहब की मृत्यु हो गई[2]। इसके बाद जो मुसलमानों के नेता हुए वे ख़लीफ़ा कहलाये। इन्होंने मदीना, दमिश्क और बग़दाद में राज्य किया और थोड़े ही दिनों में स्पेन, फ़ारस, शाम, एशिया कोचक, अफ़्रीका आदि देशों में इस्लाम का सिक्का जमा दिया। अरबों ने हिन्दुस्तान पर भी कई हमले किये परन्तु वे लूट-मार कर वापस लौट गये। उनका सबसे ज़ोरदार हमला सन् ७१२ ईसवी में सिन्ध पर हुआ जिसका अब तुम्हें कुछ हाल बतलायेंगे।

मुहम्मद बिनक़ासिम का सिन्ध पर हमला—सन् ७१२ ईसवी में ख़लीफ़ा के एक नौजवान सेनापति मुहम्मद बिन-क़ासिम ने ज़ोरशोर के साथ सिन्ध पर हमला किया। सिन्ध का राजा दाहिर बड़ी वीरता से लड़ा परन्तु मारा गया और सारा देश

---

(१) मदीना अरब में एक नगर है।

(२) मुहम्मद साहब के मदीना चले जाने के समय से एक नया सम्वत् आरम्भ होता है जिसे हिजरी सवत् कहते हैं। इसका आरम्भ १५ जुलाई सन् ६२२ ई० से होता है।

हम्मद के अधिकार में आगया। इसके बाद अरबों ने और भी श जातने की इच्छा की परन्तु हिन्दू राजाओं ने उन्हें आगे बढ़ने । रोका। मुसलमान सेना इतनी जबर्दस्त न थी कि हिन्दुओं का मुकाबिला करती। फिर खलीफा ने भी मदद नहीं भेजी और न देश जीतने की कोशिश की।

मुहम्मद बिनक़ासिम ने हिन्दुओं के मन्दिरों को नहीं तोड़ा। जो लोग मुसलमान हो गये उनके साथ अच्छा बर्ताव किया। परन्तु जिन्होंने अपना धर्म नहीं छोड़ा उन्हें जज़िया नामक कर देना पड़ा। जज़िया* वसूल करने के लिए उन्होंने हिन्दुओं को नियत किया। हिन्दू राजाओं ने जो कुछ ज़मीन या दान ब्राह्मणों को दिया था वह मुहम्मद ने ज्यों का त्यों क़ायम रक्खा। ब्राह्मणों से जज़िया नहीं लिया गया। इस विजय के पाने पर खलीफ़ा किसी कारण से मुहम्मद बिनक़ासिम से अप्रसन्न हो गया। वह मार डाला गया और २०-२५ वर्ष बाद सिन्ध का बहुत-सा भाग मुसलमानों के हाथ से जाता रहा।

सिन्ध पर अरबवालों का अधिकार बहुत दिन तक न रहा परन्तु इस विजय से एक लाभ हुआ। हिन्दूसभ्यता का अरबवालों पर बड़ा प्रभाव पड़ा। भारतीय विद्वानों से उन्होंने तर्क, न्याय, वेदान्त, गणित, ज्योतिष, वैद्यक-शास्त्र की बहुत-सी बातें सीखीं और संस्कृत

* **जज़िया**—इस्लाम की फ़ौज में मुसलमानों के सिवा दूसरों को लड़ने की आज्ञा न थी। जो लोग इस्लाम नहीं स्वीकार करते थे, वे सेना में दाखिल नहीं हो सकते थे इसलिए उन्हें एक कर देना पड़ता था। इसका नाम जज़िया है।

के कई ग्रन्थों का अपनी भाषा में अनुवाद किया। अरबों के द्वा इन विद्याओं का यूरोप में प्रचार हुआ।

ग़ज़नी राज्य—सुबुक्तगीन—अरब आक्रमण की वा आई और चली गई। इसके बाद क़रीब ढाई सौ वर्ष तक मुसलमा का भारत पर कोई हमला नहीं हुआ। राजपूतों ने अपने स्वाधी राज्य बना लिये और देश में शान्ति रही। उधर ख़लीफ़ाओं की श कम हो गई और तुर्कों का ज़ोर बढ़ा। दसवीं सदी के अन्त ग़ज़नी में एक नया मुसलमानी राज्य स्थापित हो गया। इस राज्य सुलतान सुबुक्तगीन तुर्क था। जब सुबुक्तगीन ने पूर्व की ओर रा बढ़ाने की कोशिश की तब भटिण्डा के राजा जयपाल से उसकी मुठ भेड़ हुई। युद्ध में जयपाल हार गया और उसे लाचार होकर सन्धि करनी पड़ी। सन् ९९७ ईसवी में सुबुक्तगीन मर गया और उसका राज्य उसके बेटे महमूद को मिला। महमूद वीरता और हौसले में अपने बाप से आगे बढ़ गया। उसने हिन्दुस्तान पर कई हमले किये और बहुत-सा माल लूटा।

महमूद ग़ज़नवी के हमले—गजनी राज्य नया था। उसे चारों तरफ़ से शत्रु घेरे हुए थे। उनके साथ लड़ने के लिए महमूद को हमेशा धन की आवश्यकता रहती थी। हिन्दुस्तान के धन-दौलत की बाबत वह सौदागरों के क़ाफ़िलों से जो मध्य एशिया, हिन्दुस्तान और यूरोप में व्यापार किया करते थे, बहुत कुछ सुना करता था। दूसरे महमूद कट्टर मुसलमान था। उसने सोचा कि हिन्दुओं के देश पर हमला करने से इस्लाम की उन्नति होगी और संसार में उसका यश फैलेगा। अब क्या था आस-पास के तुर्क और

अफगानों को रुपये का लालच देकर उसने हिन्दुस्तान पर आक्रमण करने की तैयारी कर दी।

महमूद का पहला हमला पेशावर पर हुआ। राजा जयपाल ने उसका सामना किया परन्तु वह हार गया और बहुत-सा लूट का माल महमूद के हाथ लगा। इस हार से जयपाल इतना लज्जित हुआ कि वह आग में जलकर मर गया। उसकी मृत्यु के बाद उसके बेटे आनन्दपाल ने लड़ाई जारी रक्खी। कहा जाता है कि उसकी मदद के लिए दिल्ली, कन्नौज, अजमेर, ग्वालियर, मालवा, कालिञ्जर आदि देशो के राजाओं ने अपनी सेनायें भेजीं और स्त्रियो ने अपने गहने बेचकर रुपया भेजा। राजपूत सेना बड़ी वीरता से लड़ी। खोखरो ने महमूद की सेना मे घुसकर ऐसी मारकाट मचाइ कि उसके छक्के छूट गये। परन्तु दुर्भाग्य से आनन्दपाल का हाथी बिगड़कर पीछे भागा। सिपाहियो ने समझा कि राजा लड़ाई के मैदान से भाग रहा है। उनके भी पैर उखड़ गये। महमूद की जीत हुइ और लाहोर उसके अधिकार मे आगया।

लाहौर हाथ आ जाने से महमूद को उत्तरी भारत पर हमला करने में सुविधा हुइ। अब उसने बार-बार हमला करना आरम्भ किया। मन्दिरो मे इस समय बहुत-सा धन इकट्ठा किया जाता था इसलिए उसने मन्दिरो और बड़े-बड़े शहरो पर छापा मारा। मुलतान, नगर-कोट, थानेश्वर को उसने ख़ूब लूटा और मालामाल होकर ग़ज़नी को वापस लौट गया। सन् १०१८ ईसवी में महमूद फिर अपनी सेना के साथ कन्नौज के सामने आ खड़ा हुआ। वहाँ के राजा राज्यपाल प्रतिहार ने उसकी अधीनता स्वीकार कर अपनी प्राणरक्षा की। लौटते

समय महमूद ने मथुरा के मन्दिरों को लूटा, सोने और चाँदी की मूर्तियों को तुड़वाया और असंख्य द्रव्य लेकर वहाँ से चल दिया।

जब राजपूतों ने सुना कि राज्यपाल ने महमूद की अधीनता स्वीकर कर ली है तब उन्होंने उस पर चढ़ाई की और उसे मार डाला। इस ख़ून का बदला लेने के लिए महमूद फिर हिन्दुस्तान पर चढ़कर आया। राजपूत सेना हार गई और कालिंजर का चन्देल राजा लड़ाई के मैदान से भाग गया।

सबसे प्रसिद्ध हमला महमूद का सन् १०२५ ई० में सोमनाथ के मन्दिर पर हुआ। सोमनाथ का मन्दिर काठियावाड़ में समुद्र के किनारे था। महमूद एक बड़ी सेना लेकर मुलतान, शाकम्भरी (सांभर) अन्हलवाड़ होता हुआ काठियावाड़ पहुँचा। मन्दिर की रक्षा के लिए बहुत-से राजपूत राजा अपनी सेनायें लेकर आये। उन्होंने बड़ी वीरता से मुसलमानों का सामना किया परन्तु वे हार गये। जब महमूद मन्दिर में घुसा तब पुजारियों ने कहा कि तुम चाहो जितना द्रव्य ले लो परन्तु हमारी मूर्त्ति में हाथ न लगाओ। परन्तु उसने उत्तर दिया कि मैं मूर्ति तोड़नेवाले के नाम से प्रसिद्ध होना चाहता हूँ, मूर्त्ति बेचनेवाले के नाम से नहीं। इतना कहकर उसने अपनी गदा से प्रहार किया और मूर्त्ति को टुकड़े-टुकड़े कर डाला। बहुत-सा धन लेकर वह गज़नी को लौट गया।

महमूद का अन्तिम हमला नमक के पहाड़ के पास रहनेवाले जाटों पर हुआ। इसका कारण यह था कि जाटों ने सोमनाथ से लौटते समय उसकी सेना को कष्ट दिया था। जाटों को दण्ड देकर महमूद अपने

देश को वापस लौट गया और वहाँ सन् १०३० ईसवी में मर गया।

महमूद के हमलों का प्रभाव—महमूद हिन्दुस्तान में देश जीतने की इच्छा से नहीं आया था। वह लालची था और केवल धन-दौलत चाहता था। महमूद ने भारत के रुपये से गजनी की शोभा को बढ़ाया और कला-कौशल की उन्नति की। हिन्दुस्तानी कारीगरों को वह अपने साथ ले गया और वहाँ जाकर उन्होंने अद्भुत इमारतें बनाईं। गजनी का राज्य लाहौर और सरहिन्द तक फैल गया परन्तु उसका स्थायी होना कठिन था। राजपूत दब गये थे। उनकी स्वाधीनता छिन गई थी परन्तु जैसे ही महमूद भारत से वापस गया उन्होंने अपनी शक्ति बढ़ा ली। फारस और तुर्किस्तान से बराबर लड़ाई होने के कारण उसको इतनी फ़ुरसत न मिली कि वह अपने हिन्दुस्तानी राज्य की देख-भाल करता। महमूद के हमलों से भारत की बहुत-सी दौलत बाहर चली गई। राजपूत राज्यों को बड़ी चोट पहुँची। मुसलमानों ने हिन्दुस्तान का मार्ग देख लिया और हिन्दू राज्यों की कमज़ोरी देखकर उनकी हिम्मत बढ़ गई।

महमूद का चरित्र—महमूद एशिया के प्रसिद्ध बादशाहों में से है। वह विद्वानों का आदर करता था। विद्या के प्रचार के लिए उसने गजनी में पुस्तकालय, अजायबघर और मदर्से बनवाये थे। बहुत-से कवि महमूद के दर्बार में रहते थे। इनमें सबसे प्रसिद्ध फ़िरदौसी* है।

* फ़िरदौसी ने महमूद की तारीफ़ में शाहनामा नामक काव्य लिखा था। सुल्तान ने उसे हर शेर के लिए एक अशर्फ़ी देने का वादा किया था। परन्तु जब पुस्तक तैयार हो गई तब उसने चांदी के सिक्के भेजे। कवि को बड़ा शोक हुआ और कहते हैं इसी रंज में थोड़े दिनों बाद उसकी मृत्यु हो गई।
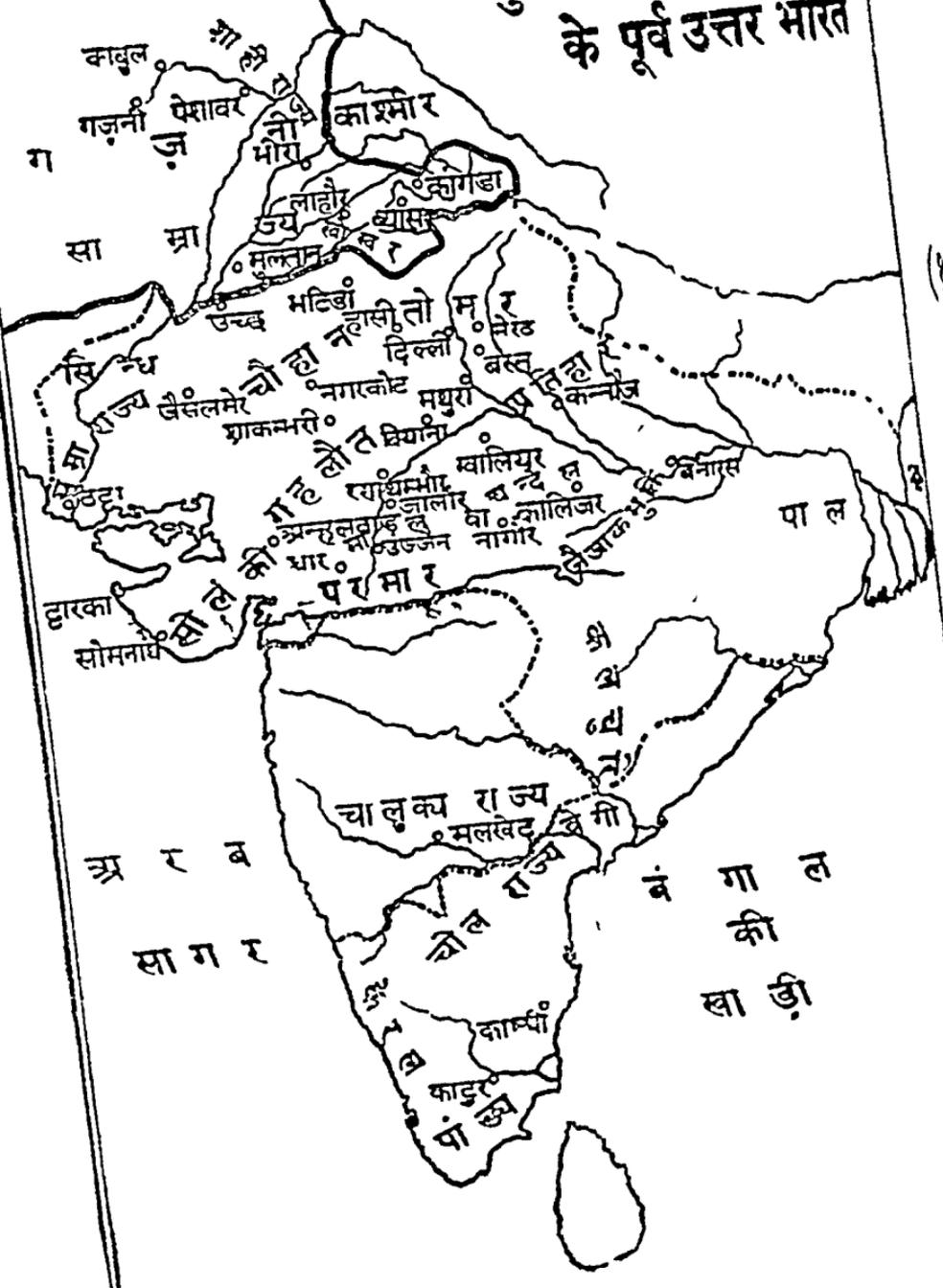
अध्याय १५

(१) उत्तरी भारत के राजपूत-राज्य और हिन्दू-सभ्यता

(२) मुसलमानों की विजय

१२ वीं शताब्दी के राजपूत-राज्य—मुसलमानो की विजय के पहले भारत मे राजपूतो के कई स्वाधीन राज्य थे। इनमे मुख्य ये थे :—(१) दिल्ली के तोमर; (२) कन्नौज के गहरवार; (३) अजमेर के चौहान; (४) बुन्देलखण्ड के चन्देल; (५) मालवा के परमार; (६) गुजरात के सोलंकी; (७) बंगाल के सेन।

तोमर-वंश—दिल्ली के आस-पास का देश तोमर-वंश के अधिकार मे था। अनंगपाल इस वंश में एक प्रसिद्ध राजा हुआ। जब अजमेर के राजा बीसलदेव (विग्रहपाल चतुर्थ) ने दिल्ली के तोमरो को लड़ाई मे हराकर अपना आधिपत्य स्थापित किया, तब दिल्ली-राज्य अजमेर-राज्य मे मिल गया। चौहान-वंश का अन्तिम प्रभावशाली राजा पृथ्वीराज था। मुहम्मद गोरी के हमले के समय वही दिल्ली में राज्य करता था।

गहरवार—प्रतिहार-वंश का अन्त होने पर कन्नौज को गहरवार क्षत्रियो ने अपने अधिकार मे कर लिया था। इनका राज्य आगरा,

इटावा से बनारस के कुछ आगे तक था। राजा जयचन्द जिसे मुहम्मद गोरी ने लड़ाई में हराया था, इस वंश का अन्तिम राजा था। उसका हाल तुम आगे चलकर पढ़ोगे।

चौहान—अजमेर और शाकम्भरी (साँभर) में चौहान-राजपूतों का राज्य था। बारहवीं शताब्दी में चौहानों ने बड़ी उन्नति की। विग्रहराज चतुर्थ जिसका हाल तुम पहले पढ़ चुके हो, इस वंश में बड़ा प्रतापी, विद्वान् राजा हुआ। उसने अनेक देश जीते। उसके समय में अजमेर से मालवा, गुजरात और दिल्ली-राज्य की सरहद तक चौहानों का ही बोलबाला था। पृथ्वीराज दिल्ली, अजमेर दोनों राज्यों का मालिक था।

चन्देल—चन्देलों का राज्य कन्नौज के पश्चिम में बुन्देलखण्ड बाँदा और हमीरपुर जिले तक था। किसी समय चन्देल-राज्य की सीमा कन्नौज और मालवा तक हो गई थी। चन्देल राजा गंड ने महमूद गजनवी का मुकाबिला करने के लिए राजपूतों का संघ बनाया था, परन्तु वह डर के मारे भाग गया और राजपूत-सेना हार गई। चन्देल-वंश का अन्तिम राजा परमर्दिन (परमाल) था। उसके लड़ाई में मारे जाने पर चन्देलों की प्रभुता नष्ट हो गई।

परमार—परमार-वंश का मालवा प्रदेश में राज्य था। इस वंश में भोज नामक एक बड़ा प्रतापी राजा हुआ। उसने सन् १०१८ से १०६० ईसवी तक राज्य किया। वह विद्या-प्रेमी था और विद्वानों का आदर करता था। उसने एक संस्कृत-पाठशाला स्थापित की थी और एक झील भी खुदवाई थी। १३ वीं शताब्दी में मालवा को अलाउद्दीन खिलजी ने जीतकर अपने अधीन कर लिया।

पृथ्वीराज चौहान

پرتھوی راج چوہان
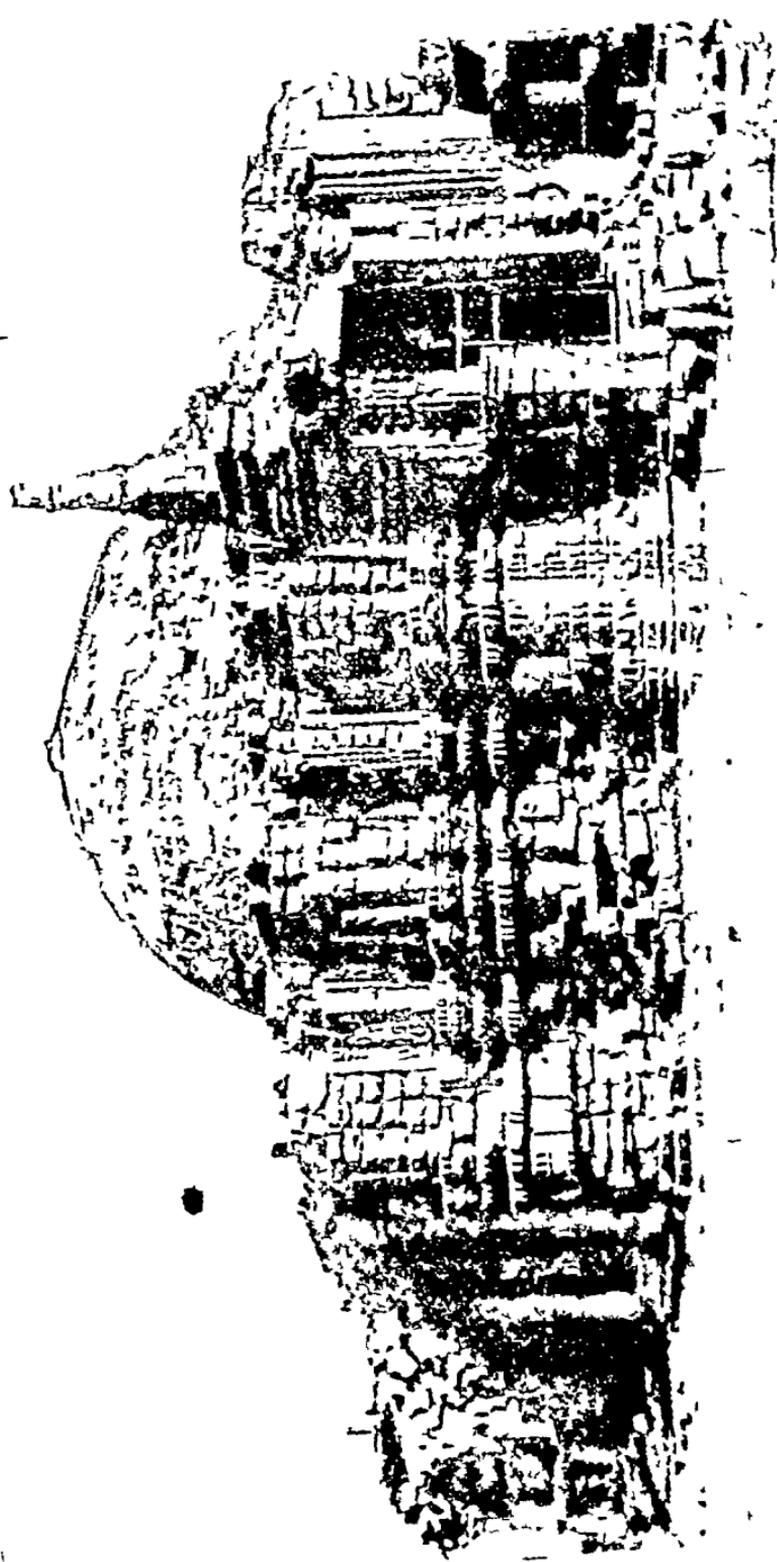
सोलंकी—सोलंकियों का राज्य गुजरात में था। उनकी राजधानी अन्हलवाड़ में थी। सोलंकी राजपूत पहले प्रतिहारों के अधीन थे, परन्तु पीछे स्वाधीन हो गये थे। जैन-ग्रन्थों में इस वंश का पूरा इतिहास मिलता है। जब महमूद ग़जनवी ने सोमनाथ के मन्दिर पर हमला किया, गुजरात में भीम सोलंकी राज्य करता था। उसने महमूद से टक्कर ली थी। इस वंश में कुमारपाल सबसे प्रसिद्ध राजा हुआ। वह जैन-धर्म को मानता था। जैन विद्वान् उसके दर्बार में रहते थे। कुमारपाल की मृत्यु (११७२ ई०) के बाद सोलंकियों की शक्ति कम हो गई। बघेलों ने ज़ोर पकड़ा परन्तु उन्हें भी अलाउद्दीन खिलजी ने तहस-नहस कर डाला।

सेन—बंगाल में पहले पाल-वंश का राज्य था। परन्तु १२ वीं शताब्दी के आरम्भ में सेन-वंश के राजाओं ने पालों को निकाल दिया और अपना आधिपत्य जमा लिया। सेन-वंश के लोग दक्षिण से बंगाल में रोज़गार की तलाश में आये थे। धीरे-धीरे उन्होंने राज्य छीन लिया। इस वंश में सबसे प्रसिद्ध राजा लक्ष्मणसेन हुआ जो सन् १११९ ई० में गद्दी पर बैठा। सेन राजाओं ने बंगाल को मुसलमानों से बचाने का कुछ भी प्रयत्न नहीं किया। १२ वीं शताब्दी के अन्त में मुसलमानों ने बंगाल को आसानी से जीत लिया।

राजपूत-समाज—राजपूत लड़ने भिड़नेवाले लोग थे। वे युद्ध के लिए सदा तैयार रहते थे। परन्तु युद्ध के समय वे विश्वास-घात नहीं करते थे, न स्त्रियों और बच्चों को मारते थे। वे अपनी बात के पक्के होते थे। शत्रु के साथ भी उनका बर्ताव उदार होता

था। जब चित्तौर-नरेश राना साँगा ने मालवा के सुलतान महमूद खिलजी द्वितीय को लड़ाई में हराया, तब वह बुरी तरह घायल हुआ। राना उसे उठवाकर अपने डेरे में ले गये और उसका इलाज कराया। ऐसे ही अनेक उदाहरण राजपूत-औदार्य्य के दिये जा सकते हैं। राजपूत सत्य का पालन करते थे और दीन-दुखियों की मदद के लिए सदा तैयार रहते थे। राजपूत-समाज में स्त्रियों का आदर था। वीरता में स्त्रियाँ भी मर्दों से कम न थीं। अपने सतीत्व की रक्षा के लिए वे अग्नि में जलकर भस्म हो जाती थीं। राजपूत स्वामिभक्त और देशभक्त होते थे। इसके इतिहास में अनेक प्रमाण हैं। परन्तु यह न समझना चाहिए कि राजपूत बिलकुल दोषरहित थे। वे भंग और अफीम खाते थे, इसलिए उनमें आलस्य अधिक था। आपस में वैर इतना था कि वे कभी मिलकर बाहरी शत्रु का सामना नहीं कर सकते थे।

हिन्दू-सभ्यता (६५० ई० से १२०० ई० तक)

साहित्य, विज्ञान, कला की उन्नति—राजपूत-काल में साहित्य और कला की अच्छी उन्नति हुई। धार के राजा भोज और शाकम्भरी के राजा वीसलदेव स्वयं विद्वान् थे और कविता भी करते थे। भवभूति इस काल का प्रसिद्ध नाटककार कन्नौज के राजा यशोवर्मन के दर्बार में रहता था। कल्हण की राजतरंगिणी और जयदेव का गीत-गोविन्द दोनों काव्य इसी काल में बने। ज्योतिष और गणित-शास्त्र की भी उन्नति हुई। पशु-चिकित्सा का भी लोगों ने अभ्यास किया और रसायन-शास्त्र में नई नई बातें निकालीं।

हिन्दू राजाओं ने शिल्पजीवियों को आश्रय दिया और अनेक सुन्दर मन्दिर बनवाये। एलोरा का कैलाशमन्दिर और एलीफेन्टा की गुफायें इसी काल में बनीं। आबू का जैनमन्दिर भारतवर्ष की प्रसिद्ध इमारतों में से है। पुरी का जगन्नाथजी का मन्दिर १२ वीं शताब्दी में नागदेव चोड़ ने बनवाया था। मथुरा में बहुत-से विशाल मन्दिर थे जिन्हें देखकर महमूद गजनवी भी चकित हो गया था।

धर्म—राजपूतों के उत्कर्ष से बौद्ध-धर्म को हानि पहुँची। उन्होंने हिन्दू-धर्म को अपनाया और ब्राह्मणों का सम्मान किया। कुमारिल भट्ट और शंकराचार्य्य ने वैदिक-धर्म की शिक्षा दी और बौद्ध-धर्म का खण्डन किया। १२ वीं शताब्दी में कई ऐसे आचार्य हुए जिन्होंने भक्ति का उपदेश किया और वैष्णव-धर्म का प्रचार किया। ब्राह्मणों के प्रयत्न और राजपूतों की सहायता से उत्तरी भारत में फिर हिन्दू-धर्म की पताका फहराने लगी।

(२) मुसलमानों की विजय

मुहम्मद गोरी का आक्रमण—मुहम्मद गोरी का हाल तुम पहले पढ़ चुके हो। वह गजनी और गोर का सुलतान था। उसका पहला हमला मुलतान पर हुआ जिसे उसने आसानी से जीत लिया। तीन वर्ष बाद उसने गुजरात पर चढ़ाई की। राजा भीम सोलंकी ने (११७८ ई०) वीरता से उसका मुकाबला किया और उसे देश से बाहर भगा दिया। परन्तु हारने पर भी मुहम्मद की हिम्मत कम न हुई। सन् ११८७ ई० में उसने पंजाब पर चढ़ाई की और लाहौर, सरहिन्द को अपने अधिकार में कर लिया।

मुहम्मद गोरी के हमलों का प्रभाव—मुहम्मद गोरी पहला मुसलमान था जिसने हिन्दुस्तान में राज्य स्थापित करने की इच्छा की। महमूद ग़ज़नवी केवल धन के लालच से आया था और लूट का माल लेकर अपने देश को लौट गया था। परन्तु मुहम्मद गोरी का विचार दूसरा था। वह हिन्दुस्तान में मुसलमानी राज्य स्थापित करना चाहता था और इसके लिए उसने ख़ूब युद्ध किया। राजपूतों के बड़े-बड़े राज्य नष्ट हो गये और देश का बहुत-सा भाग मुसलमानों के हाथ आगया। उत्तरी भारत में एक शासन स्थापित हो गया और राजनैतिक संगठन की नींव पड़ी।

मुसलमानों की विजय के कारण—हिन्दुस्तान में जो मुसलमान आये उनकी संख्या अधिक न थी परन्तु तब भी उन्होंने राजपूतों की वीर जाति को युद्ध में हरा दिया और सारा देश जीत लिया। इसके कई कारण हैं। राजपूत वीरता में संसार की किसी जाति से कम न थे। परन्तु उनके पास तुर्कों के-से सीखे हुए घुड़सवार नहीं थे और न वे युद्ध-विद्या में उनके बराबर कुशल थे। हिन्दू राजा हिन्दुस्तान के बाहर का कुछ भी हाल नहीं जानते थे और न वे दुश्मन की ताक़त का अनुमान कर सकते थे। इसके अलावा उनकी आपस की फूट ने उनका नाश कर दिया। राजपूतों में छोटे-बड़े का भेद-भाव बहुत था। वे कभी एक होकर बाहरी दुश्मन के सामने नहीं लड़ते थे। मुसलमानों में बड़ी एकता थी। उनमें धार्मिक जोश कूट-कूटकर भरा था। धर्म के लिए वे जी-जान देने को तैयार रहते थे। हिन्दुओं में यह बात न थी। न उनमें देश-भक्ति थी और न धर्म के लिए जोश। मुसलमान जानते थे कि यदि युद्ध में जीतेंगे तो

मालामाल हो जायँगे और मरेंगे तो स्वर्ग मिलेगा। इसलिए वे निडर होकर लड़ते थे। हिन्दुस्तान की दौलत को लेने के लिए वे सब कुछ बलिदान करने के लिए तैयार रहते थे। परन्तु तब भी यह न समझना चाहिए कि मुसलमानों ने एकदम हिन्दुस्तान को जीत लिया। हिन्दुओं से उन्हें ख़ूब लड़ना पड़ा और उत्तरी भारत में अपना राज्य मजबूत करने में ही उन्हें बहुत दिन लगे।

अभ्यास

१—मुसलमानों की विजय के पहले उत्तरी भारत में कौन-कौन बड़े राज्य थे?

२—राजपूतों के चरित्र में क्या गुण-दोष हैं?

३—राजपूत-काल के साहित्य और कला की उन्नति के विषय में क्या जानते हो?

४—हर्ष की मृत्यु के बाद से मुहम्मद गोरी की विजय तक हिन्दू-धर्म की क्या हालत रही? संक्षेप में बताओ।

५—मुहम्मद गोरी ने हिन्दुस्तान पर क्यों हमला किया?

६—तराइन की पहली लड़ाई कब हुई और उसमें कौन हारा? इस हार का क्या नतीजा हुआ?

७—दिल्ली, अजमेर में उस समय कौन राजा था? उसकी मुहम्मद गोरी के साथ जो लड़ाई हुई उसका वर्णन करो।

८—कन्नौज का राज्य कहां तक था? उसे मुसलमानों ने किस प्रकार जीता?

९—बिहार, बंगाल किस प्रकार मुसलमानों के अधिकार में आये? बौद्धधर्म पर मुसलमानों के आक्रमणों का क्या प्रभाव पड़ा?

१०—मुहम्मद गोरी और महमूद गजनवी के हमलों में क्या फर्क है? दोनों की तुलना करो।

११—हिन्दुस्तान में मुसलमानों की विजय के कारण बताओ।

बेटे फ़ीरोज़ को सुलतान बनाया। फ़ीरोज़ भी निकम्मा निकला और राज्य में गड़बड़ी होने लगी। तब सर्दारों ने उसे गद्दी से उतारकर मार डाला और रज़िया को सुलताना बनाया।

रज़िया सुलताना (१२३६-४० ई०)—रज़िया मामूली स्त्री न थी। उसमें शासन करने की योग्यता थी, और वह वीर भी थी। मुसलमानों का राज्य हिन्दुस्तान में लगभग एक हज़ार वर्ष तक रहा, परन्तु इस ज़माने के शासकों में केवल एक स्त्री गद्दी पर बैठी। वह रज़िया ही है। रज़िया मर्दाने कपड़े पहनकर दर्बार में बैठती थी और राज्य का कार्य्य करती थी। घोड़े पर चढ़कर वह शिकार को जाती और युद्ध करने के लिए तैयार रहती थी। उसने बग़ावत करनेवाले मुसलमान सर्दारों को दबाया और राज्य का प्रबन्ध अच्छा किया। परन्तु उसने एक हबशी को घोड़ों का अफ़सर बना दिया और उसके साथ प्रेम का बर्ताव करने लगी। यह देखकर तुर्क सर्दार, जिन्हें स्त्री का गद्दी पर बैठना असह्य था, अप्रसन्न हो गये और उसके चाल-चलन को बुरा बताने लगे। सूबों में बग़ावतें होने लगीं और सर्दारों ने रज़िया को क़ैद कर लिया। उसने क़ैदख़ाने से निकलकर फिर एक बार राज्य लेने की कोशिश की परन्तु वह हार गई। लड़ाई के मैदान से भागकर वह जंगल में चली गई। वहाँ कुछ हिन्दुओं ने उसे पकड़ लिया और मार डाला।

रज़िया ने साढ़े तीन वर्ष तक राज्य किया। एक मुसलमान इतिहासकार लिखता है कि रज़िया आदमी जैसा दिमाग़ और हिम्मत रखती थी। उसमें बादशाहों के सब गुण मौजूद थे।

सुलताना रज़िया बेगम سلطانہ رضیہ بیگم

कुतुबमीनार قطب منار

ग़यासुद्दीन तुग़लक़ का मक़बरा — غیاث الدین تغلق کا مق
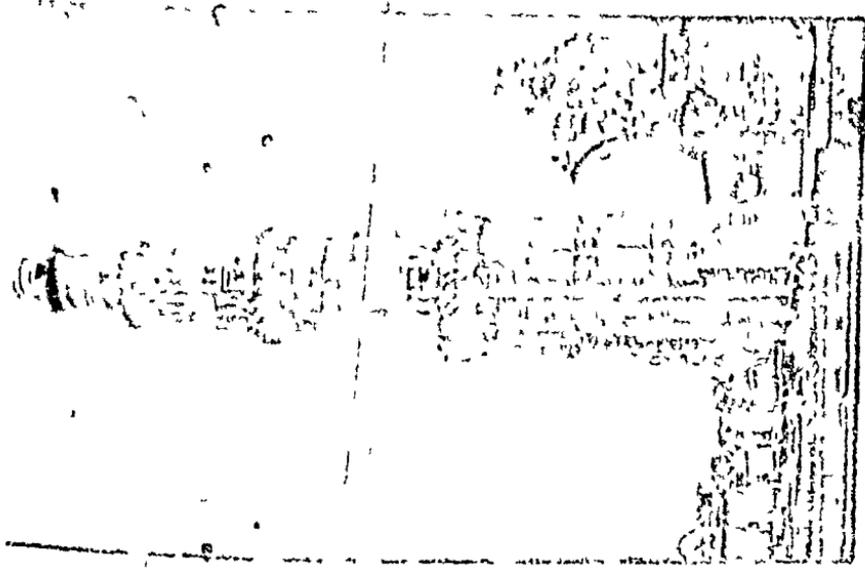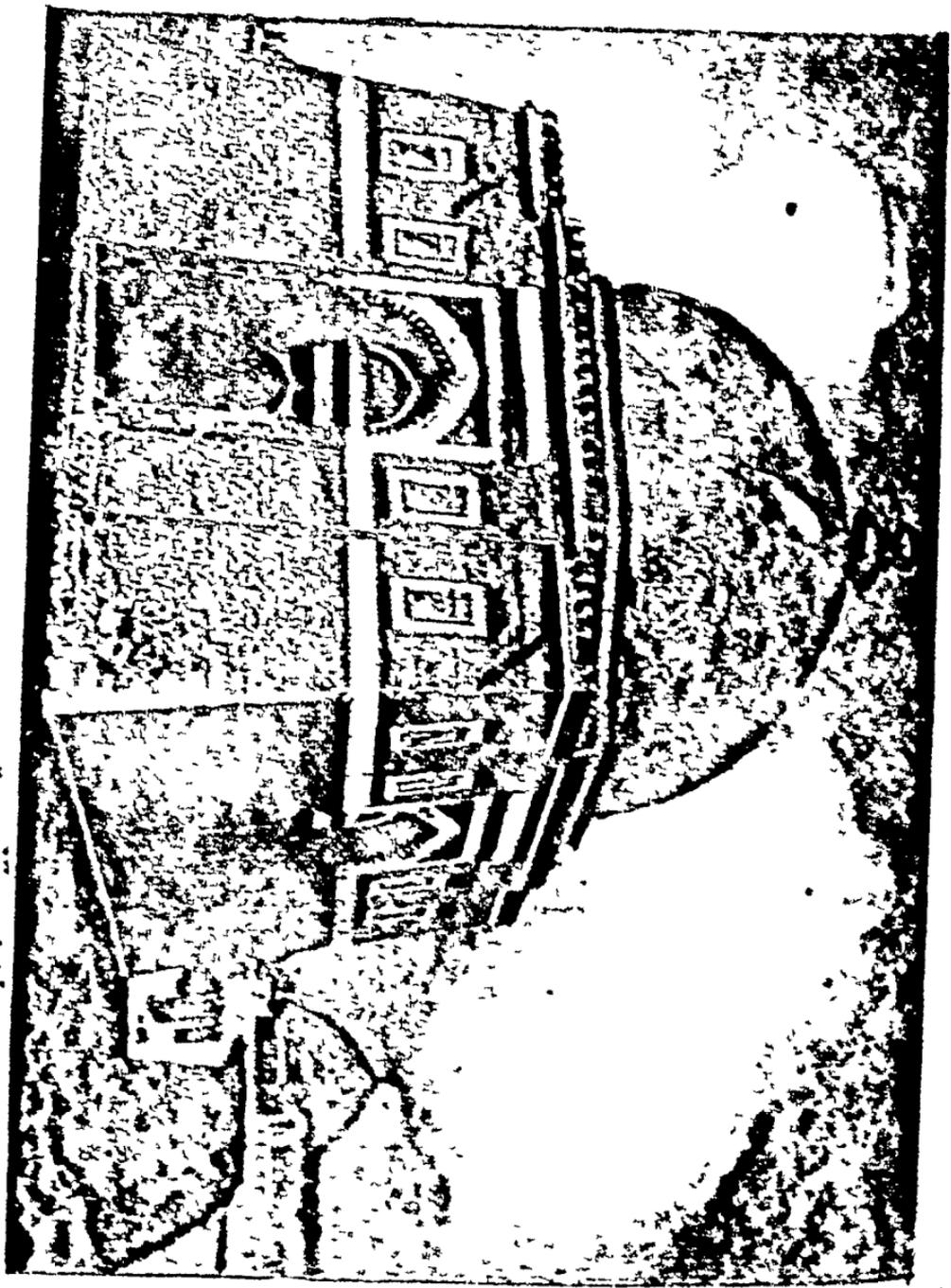
नासिरुद्दीन (१२४६-६६ ई०)—रजिया के बाद इल्तुतमिश का एक बेटा और पोता एक दूसरे के बाद गद्दी पर बैठे, परन्तु वे निकम्मे निकले। तब सर्दारों ने सन् १२४६ ई० मे इल्तुतमिश के बेटे नासिरुद्दीन को सुलतान बनाया। नासिरुद्दीन केवल नाम-मात्र का सुलतान था। राज्य का सब काम उसका सिपहसालार और ससुर बलबन करता था। सुलतान बड़ी सादगी से रहता था और क़ुरानशरीफ़ की नकल कर अपना खर्च चलाता था। कहते है एक बार किसी आदमी ने उसकी लिखी हुई किताब मे कुछ ग़लतियाँ बताईं। सुलतान ने उसके सामने तो जैसा उसने बताया था वैसा ही ठीक कर दिया, परन्तु जब वह चला गया, तब किताब ज्यो की त्यो कर ली। इस पर किसी ने पूछा :—बादशाह सलामत ! ऐसा करने से क्या फायदा ? बादशाह ने उत्तर दिया बिना कारण किसी के दिल को दुखाने से क्या काम। ऐसा करने से उसका दिल नहीं दुखा और मेरी किताब का कुछ बिगड़ा नहीं।

बलबन ने राजपूताना और दोआब में बग़ावतो को दबाया और अमन-चैन क़ायम किया। मेवात में भी बड़ी लड़ाई हुई और बुन्देल-खण्ड मे चन्देल राजपूतो के कई किले छीन लिये गये। २० वर्ष राज्य करने के बाद सन् १२६६ ई० मे नासिरुद्दीन की मृत्यु हो गई। नासिरुद्दीन के कोई औलाद न थी, इसलिए उसने अपने मंत्री बल-बन के नाम राज्य की वसीयत कर दी।

ग़यासुद्दीन बलबन (१२६६-८७ ई०)—बलबन बड़ा वीर और प्रतिभाशाली सुलतान था। उसने पहले ४० ग़ुलामो की पलटन के

उसके बाप ने उसे बहुत समझाया परन्तु वह कब माननेवाला था। राज्य में चारो तरफ उपद्रव होने लगे। मौका पाकर ख़िलजी तुर्कों के सर्दार जलालुद्दीन ने दिल्ली-राज्य पर अपना अधिकार जमा लिया और कैकुबाद को मरवाकर उसकी लाश को जमुना में फिकवा दिया। इस प्रकार सन् १२९० ई० में ग़ुलाम-वंश का अन्त हो गया।

अभ्यास

१—मुसलमानी राज्य को बढ़ाने के लिए कुतुबुद्दीन ऐबक ने क्या किया ?

२—ईल्तुतमिश ग़ुलाम-वंश के बड़े बादशाहों में क्यों गिना जाता है ?

३—ईल्तुतमिश के समय में दिल्ली-राज्य का विस्तार कहाँ तक था ? नकशा खींचकर दिखाओ।

४—रजिया को दिल्ली की गद्दी किस तरह मिली ? उसके बारे में क्या जानते हो ?

५—बलबन के शासन-प्रबन्ध का वर्णन करो।

६—मुग़ल कौन थे ? वे हिन्दुस्तान पर क्यों हमले करते थे ? उनके हमलों को रोकने के लिए बलबन ने क्या किया था ?

७—तुग़रिलबेग के विद्रोह का वर्णन करो।

८—बलबन का चरित्र कैसा था ?

९—अमीर ख़ुसरो कौन था ? उसके विषय में क्या जानते हो ?

१०—ख़िलजी तुर्कों को दिल्ली का राज्य किस प्रकार मिला ?

———

अध्याय १७

खिलजी-साम्राज्य

(१२९०-१३२० ई०)

जलालुद्दीन खिलजी (सन् १२९०-९६)—जलालुद्दीन खिलजी ७० वर्ष का सीधा-सादा आदमी था। वह ऐसे कठिन समय में दिल्ली का बादशाह होने योग्य न था। उसके नरम बर्त्ताव से देश में अशान्ति फैलने लगी और डाकू लुटेरे चारों तरफ लूट मार करने लगे। बहुत-से ठग पकड़ कर दिल्ली लाये गये परन्तु उन्हें सुलतान ने बजाय सजा देने के बङ्गाल भेज दिया। बलबन के भतीजे मलिक छज्जू ने जो इलाहाबाद का हाकिम था, बगावत की परन्तु हार गया। सुलतान ने उसका अपराध क्षमा कर दिया।

अलाउद्दीन का देवगिरि पर हमला (१२९४ ई०)—अलाउद्दीन, जलालुद्दीन का भतीजा और दामाद था। अलाउद्दीन की अपनी स्त्री और सास से नहीं पटती थी। इस झगड़े से बचने और दौलत पाने के लिए वह बाहर जाना चाहता था। उसने सुन रक्खा था कि देवगिरि के यादव राजा रामचन्द्र के पास बड़ा माल है। इसलिए सन १२९४ ई० में उसने ८००० सवार लेकर चुपचाप उस पर चढ़ाई कर दी। इस एकाएक हमले से रामचन्द्र घबड़ा गया उसकी सेना से कुछ भी करते न बना। राजा रामचन्द्र ने अलाउद्दीन को असंख्य द्रव्य दिया और एलिचपुर का इलाका भी दे दिया। उस समय दक्षिण में बहुत धन था और कहते हैं कि अलाउद्दीन सोने चाँदी, जवाहिरात के ढेर अपने साथ कड़ा को ले गया था।

जब जलालुद्दीन ने इस विजय का हाल सुना तब वह बड़ा प्रसन्न हुआ और कड़ा में अलाउद्दीन से मिलने गया। उसके दर्बारियों ने जाने से रोका परन्तु सुलतान न माना और थोड़े-से आदमी लेकर नाव पर सवार हो गया। अलाउद्दीन पहले ही उसे क़त्ल करने की तैयारी कर चुका था। ज्यों ही सुलतान नाव से उतरा, अलाउद्दीन आगे बढ़ा और उससे गले लगकर मिला। जब दोनों नाव की तरफ़ चले तब अलाउद्दीन के इशारे से उसके साथी इख्तियारुद्दीन ने सुलतान का सिर काट लिया। इसके बाद उसका सिर भाले में छेद कर सेना में फिराया गया जिससे सबको मालूम हो जाय कि सुलतान मारा गया।

अलाउद्दीन का सुलतान होना (१२९६ ई०)—इस हत्याकाण्ड के बाद अलाउद्दीन दिल्ली आया। वहाँ बड़ी धूमधाम से उसका स्वागत हुआ। रुपये पैसे की ख़ूब बखेर हुई। हुक्म हुआ कि नगर में सब जगह जलसे हों और अमीर-ग़रीब सबका राज्य की ओर से सत्कार किया जाय। बड़े बड़े जलाली सर्दार अलाउद्दीन से आ मिले और ऊँचे ओहदों पर तैनात हो गये। लोग धन पाकर अपने पहले सुलतान को भूल गये और अलाउद्दीन की जय बोलने लगे।

राज्य का विकास—उत्तरी भारत—राजसिंहासन पर बैठते ही अलाउद्दीन ने एक बड़ा साम्राज्य बनाने की इच्छा की। पहले उसने गुजरात पर चढ़ाई की। राजा करण बघेल हार गया और सन् १२९७ ई० में गुजरात को मुसलमानों ने जीत लिया। रणथम्भौर पर सुलतान ने स्वयं चढ़ाई की और उसे जीत लिया। रणथम्भौर के चौहान राजा हम्मीर ने मीर मुहम्मदशाह नामक एक मङ्गोल

अफ़सर को जो दिल्ली से भाग गया था अपने यहाँ रख लिया था। अलाउद्दीन इसी बात पर चिढ़ गया और उसने एक बड़ी सेना लेकर किले के चारों ओर घेरा डाल दिया। हम्मीर के मंत्रियों ने विश्वासघात किया, इसलिए उसकी हार हो गई। हम्मीर, उसकी रानियाँ और मुग़ल सर्दार जिन्होंने उसकी मदद की थी, सब मार डाले गये और रणथम्भौर का किला मुसलमानों के हाथ आगया (१३०१ ई०)। इसके बाद अलाउद्दीन ने चित्तौर के क़िले पर चढ़ाई की। राना रत्नसिंह और उसके साथी बड़ी वीरता से लड़े परन्तु मुसलमानों की जीत हुई। कहते हैं अलाउद्दीन ने रत्नसिंह की रानी पद्मिनी को लेने के लिए चित्तौड़ पर चढ़ाई की थी। इस विषय में विद्वानों की एक राय नहीं है। कोई कोई कहते हैं कि पद्मिनी की कहानी बिलकुल झूठी और निर्मूल है, उसका कोई प्रमाण नहीं। कुछ भी हो इतना सच है कि अलाउद्दीन ने क़िले पर चढ़ाई की। राजपूत लड़ाई में मारे गये और रानी अन्य वीर स्त्रियों के साथ आग में जलकर मर गई। चित्तौर में अपने बेटे ख़िज़रख़ाँ को सूबेदार नियत कर अलाउद्दीन दिल्ली लौट आया।

अलाउद्दीन ने जैसलमेर पर चढ़ाई की। राजपूत मुसलमानों के सामने न ठहर सके। स्त्रियों ने अपनी रक्षा का कोई उपाय न देख जौहर किया और राजपूतों की कीर्ति को उज्ज्वल रक्खा। अब सारा उत्तरी भारत सिन्ध से लेकर बंगाल तक और पंजाब से नर्मदा तक अलाउद्दीन के अधिकार में आगया।

दक्षिण—इसके बाद सुलतान ने दक्षिण को जीतने का इरादा किया। देवागिर के राजा ने पहले ही दिल्ली सुलतान की अधीनता

स्वीकार कर ली थी, परन्तु उसने कई वर्ष से कर नहीं भेजा था। इसलिए काफ़ूर ने एक बड़ी सेना लेकर (१३०८ ई०) देवगिरि पर हमला किया। राजा रामचन्द्र लड़ाई में हार गया। परन्तु काफ़ूर ने उसके साथ अच्छा बर्त्ताव किया और उसका राज्य उसे लौटा दिया। अब गोदावरी को पार करके उसने वरंगल और द्वारसमुद्र राज्यों पर चढ़ाई की। वरंगल का राजा प्रताप रुद्रदेव (प्रथम) उसका सामना न कर सका। उसने बहुत-से हाथी, घोड़े और धन देकर अपनी जान बचाई और ख़िराज देने का वादा किया। द्वारसमुद्र और मदूरा को मलिक काफ़ूर ने ख़ूब लूटा (१३११) और हौयसल राज्य का नाश कर दिया। इन्हे जीतकर वह सुदूर दक्षिण में आगे बढ़ा। यहाँ चोल, चेर, पाण्ड्य नामक हिन्दुओं के तीन प्राचीन राज्य थे। इनका हाल तुम पहले पढ़ चुके हो। ये राज्य काफ़ूर के सामने न ठहर सके और सन् १३११ ई० तक उसने अलाउद्दीन का आधिपत्य कुमारी अन्तरीप तक स्थापित कर दिया। दक्षिण की विजय मे असंख्य द्रव्य काफ़ूर के हाथ लगा। सैकड़ों हाथी, घोड़े, ऊंटों पर सोना, चाँदी, जवाहिरात लादकर वह दिल्ली को लौटा। अलाउद्दीन बड़ा प्रसन्न हुआ। नगर मे धूमधाम से उत्सव मनाया गया और काफ़ूर को सुलतान ने अपना प्रधान मंत्री बनाया।

अलाउद्दीन और मुग़ल—मुग़लों के बार-बार दिल्ली पर हमले होते थे। तुम पहले पढ़ चुके हो कि बलबन ने इनको रोकने की कोशिश की थी। सन १२९८ ई० मे मुग़लों का सर्दार कुतलग ख्वाजा एक बड़ी सेना लेकर दिल्ली पर चढ़ आया। अलाउद्दीन ने

उनका मुकाबिला किया और उसके साथियों को मारकर भगा दिया। जो मुगल दिल्ली के आस पास बस गये थे उन्हें अलाउद्दीन ने कत्ल करा दिया। बाहर के हमलों को रोकने के लिए सरहद पर उसने नये किले बनवाये और पुरानों की मरम्मत कराई। इन किलों की देखभाल के लिए अनुभवी अफसर नियत कर दिये। मुगल ऐसे डर गये कि फिर उन्होंने हिन्दुस्तान में आने की हिम्मत न की।

शासन-सुधार—जब उत्तर-दक्षिण के सब देश अलाउद्दीन ने जीत लिये तब उसने राज-विद्रोह को रोकने के लिए बहुत-से नियम जारी किये। उसने हुक्म दिया कि अमीर लोग एक दूसरे के घर दावत न खायें। शराब की दूकानें बन्द हो गईं और हुक्म हुआ कि जो शराब पियेगा उसे कड़ा दण्ड दिया जायेगा। सुलतान ने स्वयं शराब पीना छोड़ दिया और शराब के बर्त्तन तुड़वा दिये। जगह जगह पर राज्य की तरफ से जासूस नियत हो गये जो हर बात की खबर बादशाह को देते थे। दोआब के जमींदारों के साथ, जो हमेशा बगावत करते थे कड़ा बर्त्ताव किया गया। ज़मीन पर लगान ५० फी सदी कर दिया गया और इसके अलावा मवेशी और मकानों पर भी टैक्स लगाया गया। परन्तु गरीबों का अलाउद्दीन हमेशा ख्याल रखता था। उसका हुक्म था कि राज्य के अफसर किसी से घूस न लें और एक पैसा ज्यादा न लें। वजीर ने जमीन की नाप कराई और बेईमान, निकम्मे अफसरों को बर्खास्त कर दिया।

सेना-संगठन और बाजार का प्रबन्ध—अलाउद्दीन को नये देश जीतने और उनका प्रबन्ध करने के लिए एक बड़ी सेना की

ज़रूरत पड़ी, परन्तु वह सेना पर बहुत-सा रुपया नहीं ख़र्च करना चाहता था। इसलिए उसने अनाज, कपड़ा और खाने-पीने की चीजों का भाव नियत कर दिया*। किसी की मजाल न थी कि एक पाई ज्यादा ले सके। उसने बाज़ार में अपने हाकिम रख दिये जो कम भाव पर बेचनेवालों और कम तोलनेवालों को सज़ा देते थे। यदि कोई दूकानदार कम तोलता तो उसके बदन में से उतना ही गोश्त काट लिया जाता था। बादशाह ख़ुद अपने ग़ुलामों को बाज़ार में रेवड़ी, हलवा, ककड़ी आदि ख़रीदने के लिए भेजता था जिससे उसे मालूम हो जाय कि लोग उसके नियमों पर चलते हैं या नहीं। चीजों का भाव बहुत सस्ता हो गया और प्रजा के दिन आराम से कटने लगे।

---

*अलाउद्दीन के समय में चीजों के भाव इस प्रकार थे—

गेहूं	१ मन	—७½ जीतल
चना	”	—५ ”
जौ	”	—४ ”
चावल	”	—५ ”
उर्द	”	—५ ”
घी	२½ सेर	—१ ”
गुड़	१ मन	—½ ”

जीतल का मूल्य एक पैसे से कुछ अधिक था और १ मन लगभग १४ पक्के सेर के बराबर था।

खिलजी-राज्य का पतन—अलाउद्दीन के बुढ़ापे में राज्य का प्रबन्ध बिगड़ गया। साम्राज्य के सूबो में उपद्रव आरम्भ हो गया। सूबेदार स्वाधीन होने लगे। हिन्दू पहले ही से अप्रसन्न थे। जिन अमीरों और सर्दारो को अलाउद्दीन ने दबाया था वे उसके विरोधी हो गये। उसके लड़को मे कोई ऐसा न था जो इतने बड़े राज्य के काम को सँभालता। अलाउद्दीन ने जो नियम जारी किये थे, वे ढीले पड़ने लगे और राजपूत राजा स्वाधीन होने का उपाय करने लगे। बहुत परिश्रम करने के कारण अलाउद्दीन का स्वास्थ्य बिगड़ गया। वह बीमार पड़ गया और सन् १३१६ ईसवी में उसकी मृत्यु हो गई।

खिलजी-वंश का अन्त—अलाउद्दीन की मृत्यु के बाद काफ़ूर ने उसके एक छोटे लड़के को गद्दी पर बिठाया परन्तु वह बहुत दिन तक न जिया। काफ़ूर भी थोड़े दिन बाद मारा गया। तब अलाउद्दीन का दूसरा लड़का कुतुबुद्दीन मुबारकशाह बादशाह हुआ। क़ुतुबुद्दीन दुराचारी था और अपना सारा समय अय्याशी में बिताता था। कुछ समय के बाद वह अपने एक सर्दार ख़ुसरो के हाथ से मारा गया।

नासिरुद्दीन ख़ुसरो—मुबारकशाह के बाद ख़ुसरो दिल्ली का बादशाह हुआ, वह नीच जाति का था। इसलिए मुसलमान उसे नहीं चाहते थे। सन् १३२० ई० में दिपालपुर* के हाकिम गाज़ी तुगलक ने, जो पीछे से ग़यासुद्दीन के नाम से दिल्ली का बादशाह हुआ, ख़ुसरो पर चढ़ाई की और उसे मार डाला।

* दिपालपुर पंजाब में मान्टगोमरी ज़िले में एक गाँव है।

अभ्यास

१—अलाउद्दीन ने देवगिरी पर क्यों हमला किया ? उसका वर्णन करो।

२—अलाउद्दीन ने अपना साम्राज्य किस तरह बनाया ? नक्शा खींचकर उसके राज्य का विस्तार दिखाओ।

३—मुग़लों के हमलों का शासन पर क्या असर पड़ा ? अलाउद्दीन ने मुग़लों को किस तरह रोका ?

४—शासन-सुधार के लिए अलाउद्दीन ने क्या किया ? उस राज्य-प्रबन्ध के लिए क्या नये नियम जारी किये ?

५—खिलजी-राज्य का किस प्रकार अन्त हुआ ?

६—ख़ुसरो कौन था ? उसने दिल्ली का राज्य किस तरह खोया ?

अध्याय १८

तुग़लक़-वंश

(सन १३२०--१४१४ ई०)

ग़यासुद्दीन तुग़लक़ (सन् १३२० से १३२५ ई०)—सन् १३२० ई० मे गाज़ी मलिक, ग़यासुद्दीन तुग़लक के नाम से दिल्ली का बादशाह हुआ। कहते है कि उसका बाप तुर्क था और मा पंजाब की जाट जाति की थी। गयासुद्दीन नेक और दयालु बादशाह था। उसने अलाउद्दीन के रिश्तेदारो के साथ अच्छा बर्त्ताव किया और उन्हे राज्य मे बड़े ओहदे दिये। उसने लगान वसूल करने के नियम ढीले कर दिये और अपने अफसरो को हुक्म दिया कि वे खेती की उन्नति मे मदद करें। गयासुद्दीन वीर योद्धा था। उसके समय में उसके बेटे मुहम्मद ने वरंगल को जीता और तेलंगाना देश को दिल्ली राज्य मे मिला लिया। इसके बाद बंगाल मे बग़ावत हुई। बादशाह स्वय वहाॅ गया और उसने शान्ति स्थापित की। जब बादशाह बंगाल से लौटा तब उसके स्वागत के लिए मुहम्मद ने दिल्ली से थोड़ी दूर पर एक काठ का महल बनवाया। यह महल एकाएक गिर पड़ा और सुलतान और उसका छोटा बेटा उसके नीचे दबकर मर गये। कहा जाता है कि यह महल मुहम्मद ने इसी इरादे से बनवाया था।

मुहम्मद तुग़लक़ (सन् १३२५-१३५१ ई०)—सन् १३२५ ई० मे मुहम्मद तुगलक दिल्ली की गद्दी पर बैठा। वह बड़ा योग्य और

सुशिक्षित बादशाह था। दिल्ली की गद्दी पर जितने मुसलमान बादशाह अब तक हुए थे उन सबमें वह चतुर और विद्वान् था। उसके दर्बार में बड़े बड़े विद्वान् लोग रहते थे जिनके साथ वह वाद विवाद करता था। वह निहायत ख़ुशखत लिखता था और वक्तृता देने में प्रवीण था। फारसी काव्यों का उसे अच्छा ज्ञान था और बातचीत करने में वह बड़ी सुन्दर भाषा बोलता था। उसकी उदारता की इतिहासकारों ने मुक्तकंठ से प्रशंसा की है। जो लोग उसके दर्बार में आते थे उन्हे वह लाखो रुपये देता था और उनका सत्कार करता था। वह अपने मज़हब का पाबन्द था। वह लोगों को नमाज़ की ताकीद करता था और जो उसकी आज्ञा नहीं मानते थे उन्हें सजा देता था। अन्धविश्वास को बहुत बुरा समझता था। दलील और बहस के बिना किसी बात को नहीं मानता था। परन्तु यह सब गुण होते हुए भी इस बादशाह में एक बड़ा दोष था कि वह जिद्दी था। जिस बात की उसे धुन सवार हो जाती उसे वह पूरी करके छोड़ता था चाहे प्रजा को कितना ही कष्ट क्यों न हो। दूसरे वह अपराधियों को ऐसा कठिन दण्ड देता था कि फिर कोई उसकी इच्छा के विरुद्ध काम करने की हिम्मत नहीं करता था। बहुत-से लोगों ने इस बादशाह को पागल बताया है परन्तु ऐसा कहने के लिए कोई प्रमाण नहीं है।

राज्य-विस्तार—राजगद्दी पर बैठने के थोड़े ही दिन बाद मुहम्मद ने सारे देश को अपने अधीन कर लिया। कमायूँ, मुलतान, लाहौर, दिल्ली से मदूरा तक और सिन्ध से बङ्गाल तक सारे देश उसके राज्य में शामिल थे। कुछ समय के बाद कमायूँ, गढ़वाल

राज ने भी उसकी प्रधानता स्वीकार कर ली थी। सब मिला कर दिल्ली साम्राज्य में २३ सूबे थे और प्रत्येक सूबे का शासन-प्रबन्ध सूबेदारों की मदद से होता था।

दोआब का कर—दोआब के जमींदार हमेशा बगावत किया करते थे और सरकारी रुपया देने में आनाकानी करते थे। मुहम्मद ने उनका कर बढ़ा दिया। परन्तु अकाल पड़ने के कारण प्रजा को बड़ा कष्ट हुआ। किसान खेत छोड़कर भाग गये और राज्य के अफसरों ने उनके साथ बड़ी निर्दयता का बर्ताव किया।

राजधानी बदलना—(सन् १३२६-१३२७ ई०) तुम पढ़ चुके हो कि मुहम्मद तुगलक का राज्य दक्षिण में दूर तक फैला हुआ था। इधर दिल्ली दक्षिण से बहुत दूर थी। मुहम्मद ने सोचा कि वहाँ से साम्राज्य के सारे सूबों का प्रबन्ध अच्छी तरह नहीं हो सकता, इसलिए उसने देवगिरि को अपनी राजधानी बनाया और दौलताबाद उसका नाम रक्खा। दिल्ली से दौलताबाद तक रास्ता साफ कराया गया। सड़क के दोनों तरफ हरे वृक्ष लगाये गये और सराये बनाई गईं। दिल्ली के लोगों को हुक्म हुआ कि अपना माल-असबाब लेकर दौलताबाद की तरफ चलें। जिनके पास खर्च के लिए रुपया नहीं था उन्हें सरकारी खज़ाने से रुपया दिया गया। बहुत-से तो बेचारे रास्ते ही में मर गये और जो वहाँ पहुँचे वे घर की याद कर लौटने की इच्छा करने लगे। दौलताबाद में बादशाह ने नये महल, हवेलियाँ और बाजार तैयार कराये परन्तु लोगों को कुछ भी पसन्द न आया। लाचार होकर बादशाह ने फिर लौटने का हुक्म दिया। बेचारे दिल्ली-निवासी अनेक कष्ट सहते हुए अपने घरों को चल पड़े।

बादशाह ने दिल्ली को आबाद करने की बहुत कोशिश की परन्तु बेकार हुई। दिल्ली की पुरानी रौनक जाती रही और प्रजा अप्रसन्न हो गई।

देवगिरि को राजधानी बनाने में बादशाह ने समझ से काम नहीं लिया। यह ठीक है कि देवगिरि उसके राज्य के बीच में था परन्तु वहाँ से उत्तर के देशों का प्रबन्ध होना कठिन था। यदि बादशाह देवगिरि में रहता तो मुगल बार-बार हमले करते और उत्तरी हिन्दुस्तान को बर्बाद कर देते। इसके अलावा हिन्दू राजाओं को भी स्वाधीन होने का मौका मिल जाता।

ताँबे का सिक्का—मुहम्मद को अपना खजाना बढ़ाने की बड़ी इच्छा थी। एक तो वह उदार ऐसा था कि जो लोग उसके दरबार में आते थे उन्हें वह लाखों रुपया देता था। दूसरे, उसे देशों को जीतने की भी इच्छा थी। उसने एक बड़ी फौज जमा की जिसका खर्च चलाने के लिए रुपये की जरूरत थी। रुपया बढ़ाने की उसने एक नई तदबीर निकाली। उसने ताँबे का सिक्का चलाया और हुक्म दिया कि यह सिक्का चाँदी-सोने के सिक्कों के बदले में लिया जाय। अब क्या था सबको नये सिक्के बनाने की सनक सवार हुई। बादशाह का यह हुक्म तो था नहीं कि ताँबे के सिक्के केवल सरकारी टकसाल में बनाये जायँ। लोग अपने बर्तनों को तोड़कर ताँबे के सिक्के बनाने लगे। चाँदी-सोने का लोप हो गया और बाजार में ताँबे के सिक्के ही सिक्के दिखाई देने लगे। व्यापार बन्द हो गया। तब बादशाह ने खीझकर ताँबे के सिक्कों का बन्द कर दिया और हुक्म दिया कि जो लोग चाहें उनके बदले में चाँदी-सोने के सिक्के
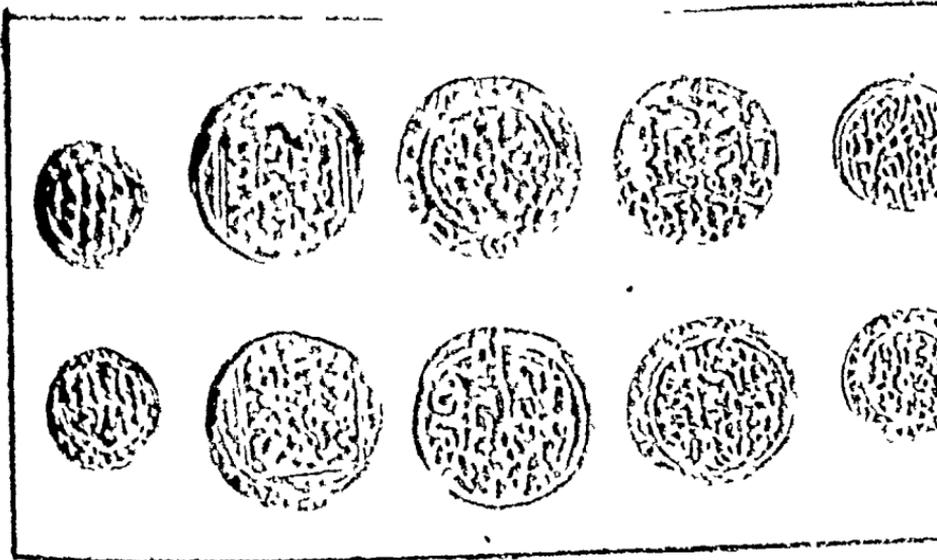
मुहम्मद तुग़लक़ के तॉबे के सिक्के

محمد تغلق کے تانبے کے سکّے

सोने के सिक्के

سونے کے سکّے
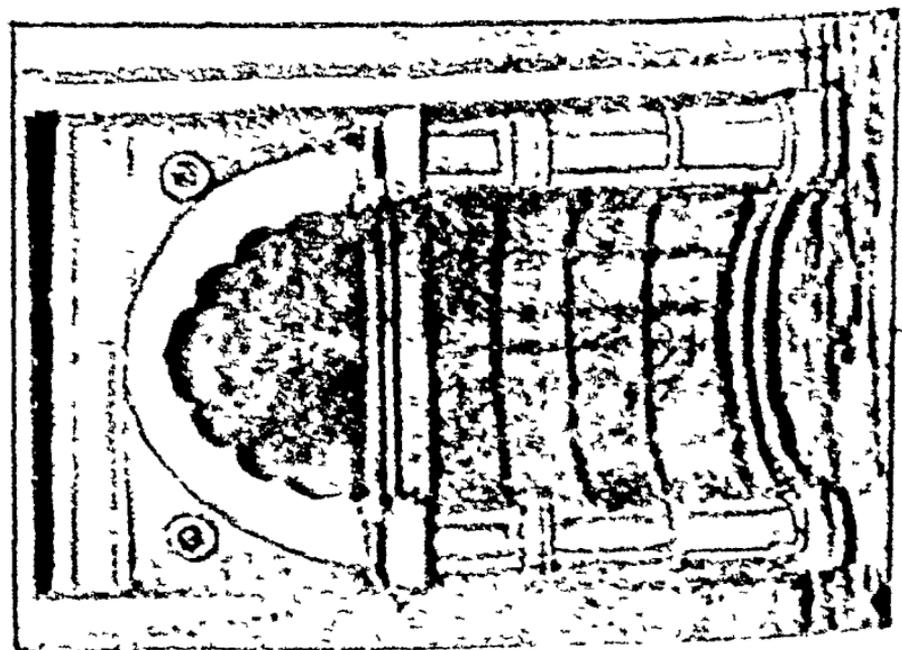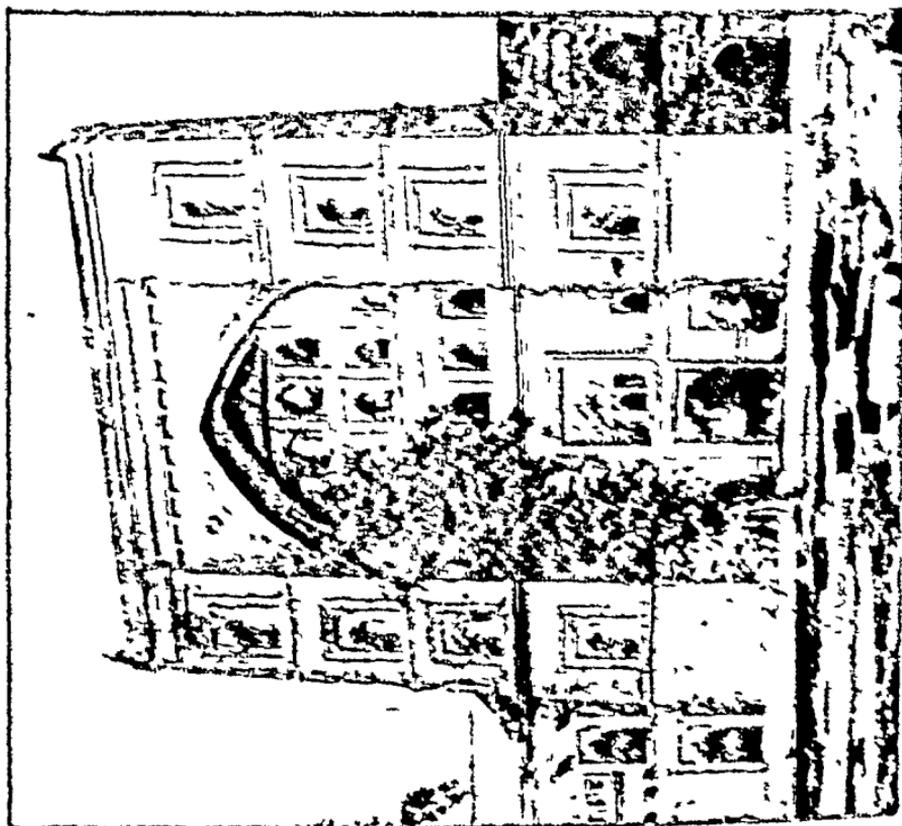
ले जायें। शाही महल के सामने तांबे के सिक्कों के ढेर लग गये और कहते हैं कि ये बहुत दिन तक वहीं पड़े रहे। राज्य को बड़ी हानि पहुँची। खजाने का बहुत-सा रुपया बिना जरूरत बाहर निकल गया।

ख़ुरासान और चीन की चढ़ाई—बादशाह विदेशियों का बड़ा आदर करता था। उसके दर्बार में तुर्किस्तान, फ़ारस, चीन, ख़ुरासान आदि देशों के लोग रहते थे और इनाम पाते थे। ख़ुरासान के सर्दारों ने बादशाह को अपने देश पर चढ़ाई करने के लिए उत्तेजित किया परन्तु कई कारणों से वह ऐसा करने से रुक गया। कुछ इतिहासकारों ने लिखा है कि उसने चीन पर भी चढ़ाई करने का प्रयत्न किया था। यह बात ग़लत है। उसने चीन को जीतने की कभी इच्छा नहीं की। हिमालय में कमायूँ, गढ़वाल प्रदेश के आस-पास एक शक्तिशाली राज्य था जिस पर चढ़ाई की गई थी। राजा लड़ाई में हार गया और उसने कर देना स्वीकार किया। यह सच है कि पहाड़ी देश में सेना को बड़ा कष्ट हुआ और पहाड़ियों ने बहुत से लोगों को मार डाला।

देश में अशान्ति का फैलना—जैसा पहले कह चुके हैं यह बादशाह बड़ा जिद्दी था और छोटे-छोटे अपराधों के लिए भी कठोर दंड देता था। इसलिए लोग उससे अप्रसन्न हो गये। वर्षा न होने के कारण देश में अनाज महँगा हो गया और प्रजा दुख से बिलबिलाने लगी। बादशाह ने अनाज बँटवाया, तकावी बाँटी, कुएँ खुदवाये परन्तु प्रजा को चैन न मिला। राज्य इतना बढ़ गया था कि उसका यथोचित प्रबन्ध न हो सका। सूबों में विद्रोह होने लगा।

जब तक सुलतान एक विद्रोह को दबाता था तब तक दूसरा खड़ा हो जाता था। बंगाल पहले ही स्वाधीन हो गया था। मालवा, गुजरात, सिन्ध में भी बलवा होने लगा। जब दक्षिण में उपद्रव आरम्भ हुआ तब बादशाह को दम लेने की भी फुर्सत न मिली। सन् १३३६ ई० में विजयनगर के हिन्दूराज्य की नींव पड़ी और उसमे दक्षिण का बहुत-सा भाग शामिल हो गया। सन् १३४७ ई० में देवगिरि मुहम्मद तुग़लक के हाथ से निकल गया। वहाँ अफ़ग़ानों ने विद्रोह किया और हसनकॉगू ने बहमनी-राज्य की नींव डाली। गुजरात के उपद्रव को दबाने का बादशाह ने बहुत प्रयत्न किया परन्तु उसे सफलता न हुई। वह जगह-जगह मारा-मारा फिरा परन्तु विद्रोहियो का ज़ोर बढ़ता ही गया। अन्त में एक विद्रोही का पीछा करते-करते वह सिन्ध में पहुँचा और वहाँ ठट्टा के पास सन् १३५१ ई० में बीमार होकर मर गया।

मुहम्मद की विफलता—मुहम्मद कट्टर मुसलमान नहीं था। वह मुल्ला-मौलवियो की कुछ भी पर्वाह नहीं करता था। इसलिए वे उससे अप्रसन्न रहते थे। उसने विदेशियो को बड़े बड़े ओहदों पर रक्खा था और ये लोग हमेशा विद्रोह किया करते थे। बादशाह क्रोधी और उतावला था। वह चाहता था कि मेरी आज्ञा का शीघ्र पालन हो। ये आज्ञाये बड़ी कठिन होती थीं। यही कारण है कि उसे अपनी आशाओ के विरुद्ध सुख के बदले दुःख उठाना पड़ा। साम्राज्य का विस्तार इतना बढ़ गया था कि दिल्ली से उसका प्रबन्ध नहीं हो सकता था। वीर होकर मुग़लों को घूस देना, योग्य और बुद्धिमान् होकर बिना सोचे-समझे राजधानी बदल देना और तांबे

का सिक्का चलाना इत्यादि कामों से प्रकट होता है कि मुहम्मद तुगलक़ में भिन्न भिन्न प्रकार के गुण मौजूद थे और वह अस्थायी प्रकृति का मनुष्य था।

इब्नबतूता—मुहम्मद के समय में अफ्रीका-निवासी इब्नबतूता नामक यात्री हिन्दुस्तान में आया था। वह ८ वर्ष तक हिन्दुस्तान में रहा। उसने बादशाह के राज्य-प्रबन्ध और दर्बार का पूरा हाल लिखा है। बादशाह ने उसे दिल्ली का काज़ी नियुक्त किया था और अपना दूत बनाकर चीन को भेजा था।

फ़ीरोज़शाह तुग़लक़ (सन् १३५१-८८ ई०)—मुहम्मद के कोई लड़का नहीं था इसलिए उसने अपने चचेरे भाई फ़ीरोज़ को अपना वारिस नियत किया था। फ़ीरोज अमीरों की सलाह से ४२ वर्ष की अवस्था में गद्दी पर बैठा और उसने सन् १३८८ ई० तक राज्य किया।

फ़ीरोज का स्वभाव अच्छा था। वह दीन-दुखियों की सदैव सहायता करता था। परन्तु वह मुहम्मद की तरह न वीर था न विद्वान्। वह अपने मज़हब का पाबन्द था और क़ुरान के नियमों पर चलता था। मुल्ला-मौलवियों की सलाह के बिना वह कोई काम नहीं करता था। वह सादगी से जीवन व्यतीत करता था और कम खर्च करता था। उसने एक पुस्तक लिखी है जिसका नाम "फ़तूहाते फ़ीरोज़शाही" है। इसमें उसके जीवन-चरित्र का वर्णन है।

फ़ीरोज़ की लड़ाइयाँ—फ़ीरोज़ अलाउद्दीन और मुहम्मद की तरह न योग्य था, न वीर। वह शान्ति चाहता था और लड़ने से डरता था। दक्षिण से तो वह बिलकुल हाथ ही धो बैठा, उत्तरी

हिन्दुस्तान में भी उसने कई सूबे खो दिये। उसने दो बार बङ्गाल पर चढ़ाई की परन्तु लाचार होकर सन्धि कर ली। बङ्गाल स्वाधीन हो गया। इसके बाद उसने नगरकोट पर चढ़ाई की और उसे जीत लिया। लूट का बहुत-सा माल मुसलमान-सेना के हाथ लगा। फीरोज़ की अन्तिम चढ़ाई सिन्ध में ठट्टा पर हुई। वह एक बड़ी सेना लेकर वहाँ गया। ठट्टा का राजा हार गया और उसने दिल्ली की अधीनता स्वीकार कर ली।

शासन-प्रबन्ध—फीरोज़ शान्ति चाहता था। इसलिए उसने शासन-सुधार की ओर अधिक ध्यान दिया। उसने जागीर की प्रथा को फिर से चलाया, बहुत-से अनुचित कर बन्द कर दिये खेती की सुविधा के लिए नहरें खुदवाईं और कानून को नरम बनाया। इसके अलावा उसने प्रजा की भलाई के बहुत-से काम किये। उसने मदर्से और अस्पताल खोले, सड़कें बनवाईं और दीन मनुष्यों के लिए भोजनालय स्थापित किये। उसने गरीब मुसलमानों की बेटियों के विवाह कराये, दीनों की शिक्षा और बे-रोजगार लोगों की जीविका का प्रबन्ध किया। गुलामों की देखभाल के लिए एक नवीन महकमा खोला गया। उनको राज्य से वज़ीफे दिये गये और उन्हें हर तरह की शिक्षा दी गई। जिन लोगों ने मुहम्मद तुगलक के समय में कष्ट सहे थे उनके साथ दया का बर्त्ताव किया गया और जिनका धन छीन लिया गया था उन्हें धन देकर सन्तुष्ट किया गया। कड़ी सज़ा देना, लोगों के हाथ-पैर आदि काटना उसने बिलकुल बन्द कर दिया। फीरोज़ ने बहुत-सी नई इमारतें बनवाईं और पुरानी इमारतों की मरम्मत कराई। उसने बहुत-से हौज़ और कुएँ खुदवाये जिनमें

पानी की सुविधा हुई। बाग लगाने का भी उसे बड़ा शौक था। कहते हैं कि दिल्ली के आस-पास उसने १,२०० बगीचे लगवाये थे, जिनसे राज्य को अच्छी आमदनी होती थी।

दिल्ली-राज्य की अवनति—फीरोज़ ने ३८ वर्ष तक राज्य किया परन्तु वह दिल्ली सल्तनत को मज़बूत न बना सका। जागीर की प्रथा से राज्य को बड़ी हानि पहुँची। ग़ुलामों की संख्या बढ़ गई और वे बग़ावत का इरादा करने लगे। मुसलमान भी वैसे उत्साही नहीं रहे, जैसे वे अलाउद्दीन के समय में थे। फीरोज़ स्वयं वीर नहीं था और लड़ाई से उसे अरुचि थी। इसका नतीजा यह हुआ कि मुसलमानी राज्य का भय लोगों के दिल से जाता रहा और साम्राज्य दिन पर दिन दुर्बल होने लगा।

फीरोज़ के मरते ही (सन् १३८८ ई०) दिल्ली-राज्य छिन्न-भिन्न होने लगा। सूबेदार स्वाधीन होने लगे और अपने अपने राज्य बनाने लगे। उधर दिल्ली की गद्दी के लिए राजवंश के लोग आपस में ख़ूब लड़ रहे थे। कभी कभी तो ऐसा हुआ कि एक ही समय दिल्ली में दो बादशाह राज्य करने लगे। सल्तनत की शान-शौकत जाती रही। दोआब के हिन्दुओं ने विद्रोह का झंडा खड़ा किया और कर देना बन्द कर दिया। जिस समय दिल्ली-राज्य की यह दशा थी तैमूर ने हमला किया और उसकी बची-खुची शान को मिट्टी में मिला दिया।

तैमूरलंग का हमला—(सन् १३९८-९९ ई०) तैमूर तुर्किस्तान का बादशाह था। उसने पहले मध्य-एशिया में अपनी धाक जमाई और फिर एक बड़ी सेना लेकर फारस, अफ़ग़ानिस्तान को फ़तह

करता हुआ वह हिन्दुस्तान आ पहुँचा। इस समय फ़ीरोज़ का पोत महमूद तुग़लक दिल्ली का बादशाह था।

तैमूर का उद्देश्य हिन्दुस्तान को लूटना और अपने दीन का प्रचार करना था। इसकी पूर्ति के लिए उसने लाखों आदमियों का ख़ून बहाया और शहरों और गाँवों को उजाड़ दिया। दिल्ली के पास पहुँचकर उसने एक लाख क़ैदियों को जिनकी उम्र १५ वर्ष से अधिक थी क़त्ल करवा डाला। उसे डर था कि कहीं क़ैदी शत्रु से न मिल जायँ। महमूद ने एक टूटी-फूटी सेना लेकर तैमूर का सामना किया। परन्तु हार गया और उसकी सेना भाग गई।

तैमूर ने दिल्ली नगर में प्रवेश कर तीन दिन तक लूट मार की और लोगों को क़त्ल किया। दिल्ली से वह मेरठ और हरिद्वार की तरफ़ बढ़ा और फिर काँगड़ा और जम्मू के रास्ते से अपने देश को लौट गया।

तैमूर के हमले ने दिल्ली-राज्य को नष्ट कर दिया। देश का केवल धन ही बाहर नहीं चला गया, वरन् चारो तरफ़ अराजकता फैल गई जिससे प्रजा को बड़ा कष्ट हुआ। अकाल और प्लेग ने पंजाब और दिल्ली के लोगों को बर्बाद कर दिया। तातारी सिपाही बहुत दिनो तक हिन्दुस्तान में नहीं ठहरे परन्तु उनके कारण लोगो को बड़े दुःख उठाने पड़े। सारे देश में उपद्रव होने लगे। दिल्ली सुलतान की शक्ति का नाश हो गया और ऐसी दशा में सूबों के हाकिम स्वाधीन हो गये और मनमानी करने लगे।
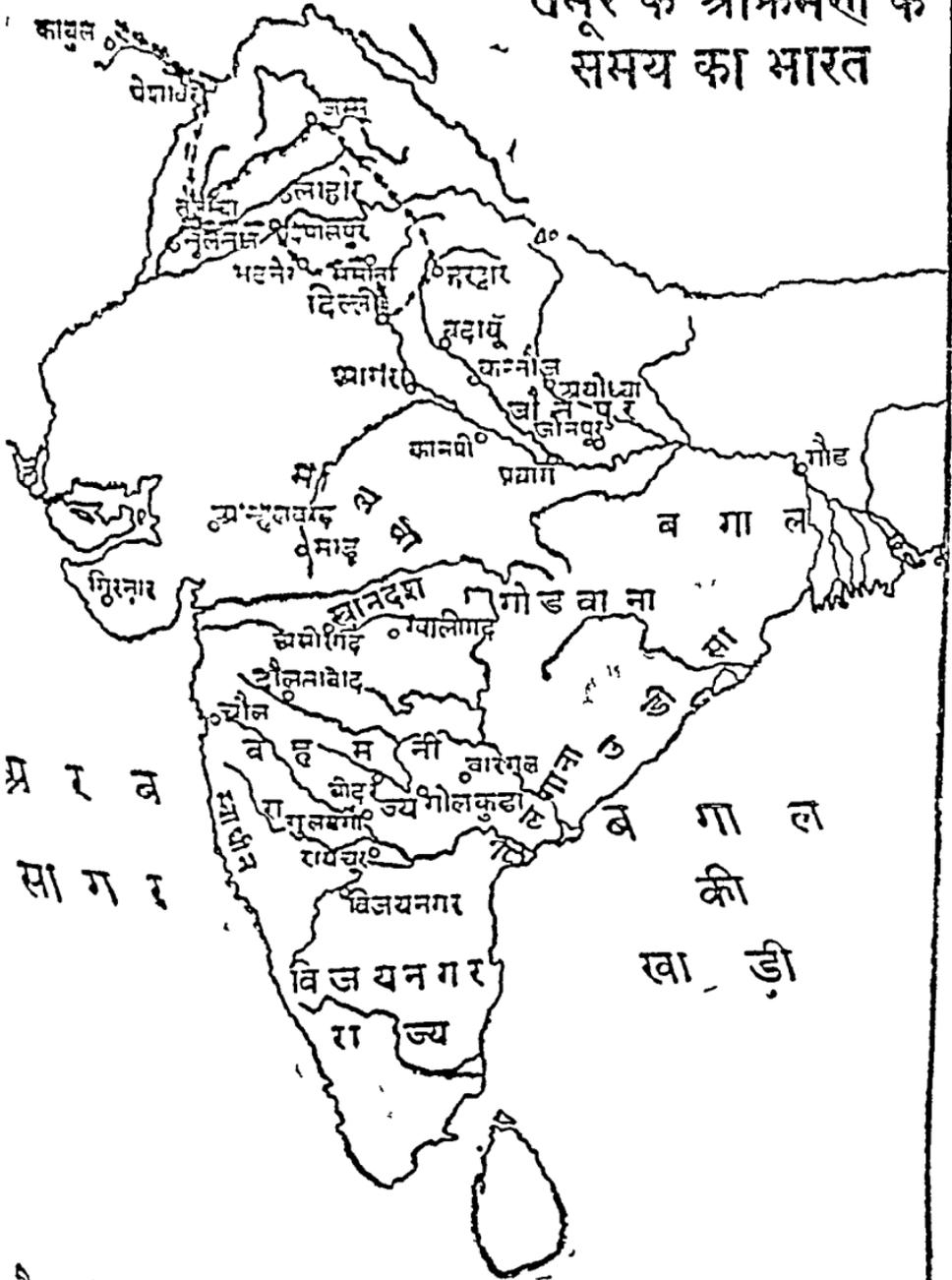
अभ्यास

१—गयासुद्दीन तुगलक को दिल्ली का राज्य किस प्रकार मिला। उसके बारे मे आप क्या जानते हैं ?

२—मुहम्मद तुगलक के चरित्र का वर्णन करो।

३—मुहम्मद के राज्य का विस्तार कहाँ तक था ? नकशा खीचकर दिखाओ।

४—मुहम्मद ने देवगिरि को राजधानी क्यो बनाया ? क्या ऐसा करने मे उसने बुद्धिमानी की ?

५—खजाने को बढाने के लिए मुहम्मद ने क्या तदबीर की ? तांबे का सिक्का चलाने का क्या फल हुआ ?

६—मुहम्मद के समय में देश में अशान्ति क्यो फैली ? कारण बताओ।

७—फीरोज़ तुग़लक़ का चरित्र वर्णन करो।

८—फीरोज़ के समय में दिल्ली सल्तनत क्यों घट गई ?

९—फीरोज़ के शासन-प्रबन्ध का वर्णन करो। प्रजा की भलाई के लिए उसने क्या काम किये ?

१०—फीरोज़ की मृत्यु के बाद दिल्ली-राज्य की क्यो अवनति हो गई ?

११—तैमूर कौन था ? उसने हिन्दुस्तान पर क्यों हमला किया ?

१२—तैमूर के हमले का भारत पर क्या प्रभाव पड़ा ?

अध्याय १६

भारत के नये स्वाधीन राज्य

(१) उत्तरी भारत

बंगाल—फीरोज तुग़लक के समय में बंगाल स्वाधीन हो गया था। बंगाल मे कई प्रतापी बादशाह हुए। इनमे हुसैनशाह (सन् १४९३-१५१३ ई०) और नुसरतशाह (सन् १५१९-३२ ई०) अधिक प्रसिद्ध है। हुसैनशाह ने दिल्ली के बादशाहों से ख़ूब लड़ाई की परन्तु अन्त मे सन्धि कर ली। नुसरतशाह वीर योद्धा था और विद्वानों का आदर करता था। उसके समय मे हिन्दू-धर्म और साहित्य की अच्छी उन्नति हुई।

जौनपुर—जौनपुर शहर फीरोज तुग़लक ने अपने भाई मुहम्मद तुग़लक की यादगार में बसाया था। फीरोज की मृत्यु के बाद यहाँ भी उसके एक ग़ुलाम ने स्वाधीन राज्य स्थापित कर लिया था। जौनपुर के बादशाहों मे इब्राहीमशाह और हुसैनशाह अधिक प्रसिद्ध हैं। इब्राहीम विद्या प्रेमी था। उसके समय मे जौनपुर मुसलमानी विद्या का केन्द्र हो गया और कई सुन्दर इमारतें बनीं। हुसेनशाह ने दिल्ली मे लोदी सुलतानों से ख़ूब लोहा लिया परन्तु अन्त में उसकी हार हुई और जौनपुर दिल्ली-राज्य मे मिला लिया गया।

मालवा—मालवा में सन् १४०१ ई० दिलावरख़ाँ गोरी ने अपना स्वाधीन राज्य स्थापित किया था। मालवा के बादशाहो मे महमूद खिलजी (सन् १४३६-६९ ई०) का नाम अधिक प्रसिद्ध है। वह

बड़ा वीर था। उसने चित्तौर के रानाओं के साथ खूब युद्ध किया और दिल्ली, जौनपुर, गुजरात और दक्षिण के मुसलमान बादशाहों से भी टक्कर ली।

गुजरात—गुजरात में सन् १४०१ ई० में ज़फ़रखाँ नामक सूबेदार ने स्वाधीन राज्य स्थापित किया था। अहमदशाह (सन् १४११-४३ ई०) और महमूद बीगड़ (सन् १४५८-१५११ ई०) के समय में गुजरात-राज्य ने बड़ी उन्नति की। महमूद बीगड़ ने मेवाड़ के राना के साथ युद्ध किया और पुर्तगालियों को देश से बाहर निकालने की कोशिश की। गुजरात के सुलतानों से राजपूत राजाओं की बराबर लड़ाई होती रहती थी। बहादुरशाह के समय में गुजरात-राज्य का यहाँ तक ज़ोर बढ़ा कि मालवा और चित्तौर भी उसमें शामिल हो गये। सन् १५७२ ई० में गुजरात को मुग़ल-सम्राट् अकबर ने जीत कर अपने राज्य में मिला लिया।

खानदेश—खानदेश में फरूकीवंश के मुसलमानों का एक छोटा-सा राज्य था। असीरगढ़ का प्रसिद्ध किला इसी राज्य में था। ख़ानदेश की स्वाधीनता बहुत दिन तक क़ायम रही। सन् १६०१ ई० में अकबर ने इस राज्य को जीत लिया।

राजपूताना—राजपूत-राज्यों में चित्तौर इस समय सबसे बलवान् राज्य था। तुम पहले पढ़ चुके हो कि चित्तौर को अलाउद्दीन ख़िलजी ने जीत लिया था। अलाउद्दीन की मृत्यु के बाद दिल्ली-राज्य के कमज़ोर होने पर राना हम्मीर ने फिर अपनी शक्ति बढ़ा ली और चित्तौर पर अधिकार स्थापित कर लिया। हम्मीर सीसौदिया-वंश में से था। इस वंश में अनेक प्रतापी राजा हुए। इनमें

राना कुम्भा और राना साँगा अधिक प्रसिद्ध हैं। राना कुम्भा वीर योद्धा था और विद्वान् भी था। उसने चित्तौर की प्रतिभा को ख़ूब बढ़ाया। उसके बाद राना साँगा के समय में चित्तौर हिन्दुस्तान के प्रसिद्ध राज्यों में गिना जाने लगा। राना साँगा का हाल तुम आगे चलकर पढ़ोगे।

(२) दक्षिण के स्वाधीन राज्य

बहमनी राज्य—पहले कह चुके हैं कि सन् १३४७ ई० में दक्षिण में हसनकाँगू नामक अफ़गान ने अपना स्वाधीन राज्य स्थापित कर लिया था। गुलबर्गा को उसने अपनी राजधानी बनाया। हसन-काँगू फ़ारस के बादशाह बहमनशाह के वंश से था। इसी लिए उसके वंशज बहमनी कहलाने लगे।

फ़िरिश्ता नामक मुसलमान इतिहासकार ने लिखा है कि हसन दिल्ली में गंगू नामक ब्राह्मण ज्योतिषी के यहाँ नौकर था। एक दिन उसे हल जोतते समय खेत में गड़ा हुआ धन मिला। उसने जाकर सब अपने स्वामी को दे दिया। ज्योतिषी मुहम्मद तुग़लक के दर्बार में आया जाया करता था। उसने बादशाह से हसन की ईमानदारी की प्रशंसा की और उसे सवारों में भर्ती करा दिया। यह सब कथा कपोल-कल्पित है। इसका कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं। हसन किसी ब्राह्मण के यहाँ नौकर नहीं था और बहमनी शब्द का ब्राह्मण शब्द से कुछ भी सम्बन्ध नहीं है। असल में हसन अफ़ग़ान था और मुहम्मद तुग़लक की सेना में नौकर था। धीरे-धीरे वह सवारों का सर्दार हो गया और उच्च पद पर पहुँच गया।

बहमनी-वंश का राज्य क़रीब १८० वर्ष तक रहा। इस वंश में कई प्रतापी राजा हुए। उन्होंने विजयनगर के राजाओं के साथ बहुत-सी लड़ाइयाँ लड़ीं। बहमनी राज्य मे दक्षिणी और विदेशी अमीरों के दो दल थे। इनमें आपस में सदैव लड़ाई रहती थी। इन्हीं के षड्यन्त्रों के कारण राज्य दुर्वल हो गया। हुमायूँ बादशाह के मंत्री ख़्वाजा महमूद गावान ने राज्य की दशा को सँभालने की कोशिश की। महमूद की बुद्धिमत्ता, दानशीलता, और उदारता की सब इतिहासकार प्रशंसा करते हैं। वह सादगी से जीवन व्यतीत करता था और अपना सारा धन परोपकार में खर्च करता था। उसने प्रजा के हित के लिए मदर्से और अस्पताल खुलवाये। शासनसुधार के लिए उसने राज्य के भिन्न-भिन्न महकमा का फिर से संगठन किया। उसने वीदर में एक बड़ा मदर्सा बनवाया और वहाँ उत्तम पुस्तकों का संग्रह किया परन्तु ऐसा स्वार्थरहित, राजभक्त और प्रजा का हितैषी होते हुए भी उसके शत्रुओं ने उसके विरुद्ध षड्यन्त्र रचा। उनके कहने से मुहम्मदशाह तृतीय ने सन् १४८१ मे उसे एक झूठा दोष लगाकर मरवा डाला। मन्त्री के मरते ही अमीरों ने विद्रोह करना आरम्भ किया। थोड़े ही दिनों वाद बहमनी राज्य पाँच छोटी-छोटी रियासतों मे विभाजित हो गया। इनके नाम हैं—

अहमदनगर, वीजापुर, गोलकुंडा, वीदर, वरार*।

---

* (१) अहमदनगर—निजामशाह
(२) वीजापुर—आदिलशाह
(३) गोलकुंडा—कुतुबशाह
(४) वीदर—वरीदशा
(५) वरार—इमादशा

विजयनगर राज्य—दक्षिण का शक्तिशाली हिन्दू-राज्य, जो हमेशा बहमनी सुलतानो का मुकाबिला करता था, विजयनगर था। इस राज्य की नींव सन् १३३६ ई० मे हरिहर और बुक्क नामक दो भाइयों ने डाली थी। धीरे-धीरे यह राज्य कृष्णा नदी से कुमारी अन्तरीप तक फैल गया और हौयसल, चोल, पांड्य वंशो के राज्यों का बहुत-सा भाग उसमे मिल गया। आजकल का मद्रास सूबा और मैसूर-राज्य विजयनगर-राज्य ही मे शामिल थे।

पन्द्रहवीं शताब्दी में विजयनगर दक्षिण के सब राज्यों मे बलवान् था। इस राज्य में हिन्दुओ की विद्या और कला की बड़ी उन्नति हुई। वैष्णव-धर्म का भी ख़ूब प्रचार हुआ। शासन-प्रबन्ध अच्छा था। प्रजा सुख से रहती थी। कर अधिक नहीं लिया जाता था। सन् १४४३ ई० में फारस का राजदूत अब्दुलरज़्ज़ाक विजयनगर आया। वह लिखता है कि विजयनगर मे बड़े सुन्दर और विशाल भवन थे। नगर कई मील के बीच मे फैला हुआ था। चारों तरफ़ पक्की दीवारें बनी हुई थीं। बाज़ारों मे बड़ी चहल पहल रहती थी। व्यापार ख़ूब होता था। प्रजा को अपना धर्म पालने की पूरी स्वतंत्रता थी।

विजयनगर का सबसे प्रतापी राजा कृष्णदेव राय (सन् १५०९-२९) हुआ। उसने राज्य का विस्तार बढ़ाया और मुसलमानो को युद्ध में हराया। कृष्णदेव राय की मृत्यु के बाद विजयनगर का पतन आरम्भ हो गया। सदाशिव राय के समय में राज्य का सारा काम उसका मंत्री रामराजा करने लगा। रामराजा बड़ा घमंडी था। उसके अनुचित

१५ वीं शताब्दी
में
भारतवर्ष
काबुल
ग़ज़नी
काश्मीर
पंजाब
मुलतान
राजपूताना
दिल्ली
अजमेर
सिन्ध
रणथम्भौर
ग्वालियर
चित्तौड़
मालवा
गुजरात
खानदेश
बरार
गोंडवाना
अहमदनगर
गोलकुण्डा
बीदर
बहमनी राज्य
बीजापुर
विजयनगर
अरब-सागर
बंगाल की खाड़ी
हिमालय पर्वत
बिहार
बंगाल
अवध
आगरा
पानीपत
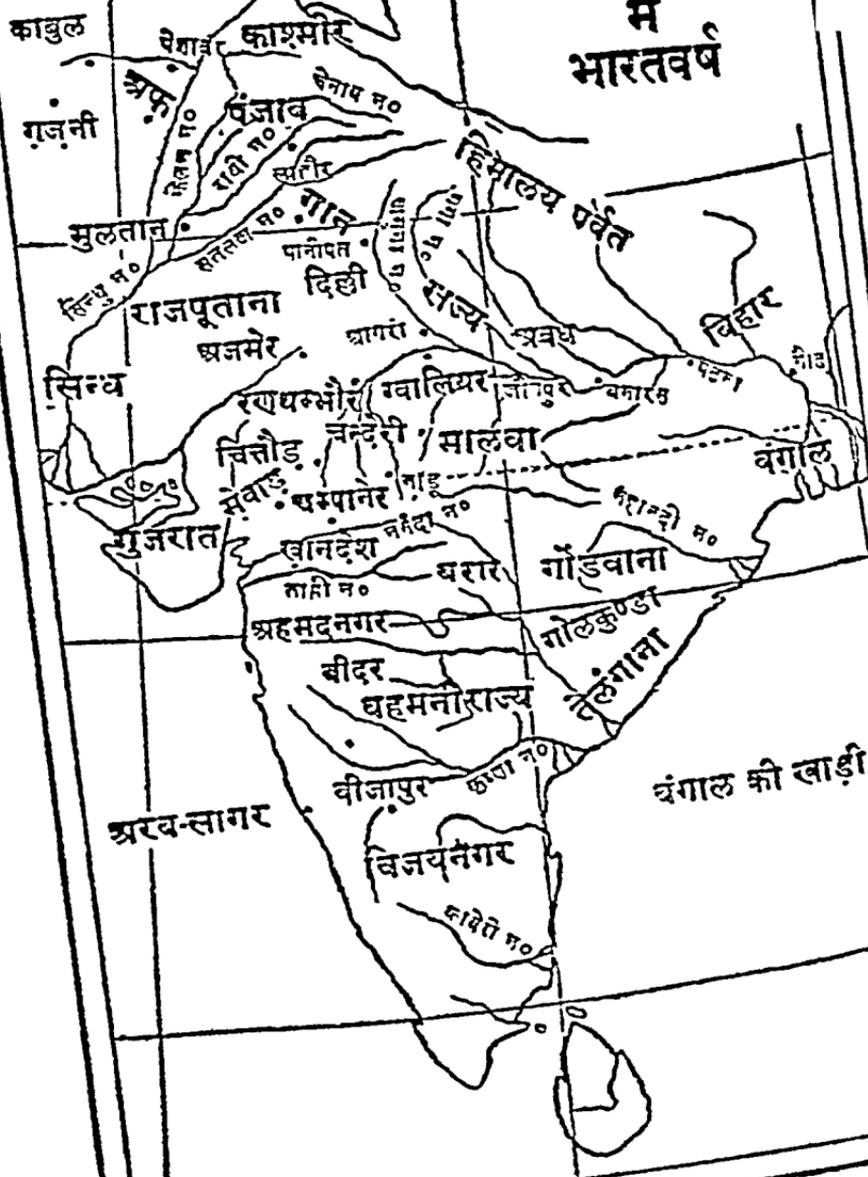
वर्ताव से मुसलमान अप्रसन्न हो गये। अहमदनगर, बीजापुर, गोलकुंडा, बीदर के सुलतानों ने मिलकर विजयनगर पर चढ़ाई की। सन् १५६५ ई० में तालीकोट नामक स्थान पर घोर लड़ाई हुई। रामराजा पकड़ा गया और उसका सिर काट डाला गया। कहते हैं कि इस लड़ाई में एक लाख हिन्दू मारे गये। मुसलमानों ने विजय-नगर को खूब लूटा, मन्दिर और महल तोड़ डाले और प्रजा को बड़ा कष्ट दिया।

तालीकोट की लड़ाई ने हिन्दूओं की शक्ति का नाश कर डाला। विजयनगर के अधीन राज्य स्वाधीन हो गये। परन्तु इस जीत से मुसलमानों को अधिक लाभ न हुआ। जब तक विजयनगर राज्य रहा मुसलमान बादशाह सदैव युद्ध के लिए तैयार रहे। परन्तु उसका नाश होने पर वे आलसी हो गये और उनकी फौजी ताकत भी घट गई। आपस में ईर्ष्या, द्वेष पैदा होने के कारण वे एक दूसरे से लड़ने लगे। अन्त में इसका परिणाम यह हुआ कि दिल्ली के बादशाहों ने इन दक्षिणी राज्यों को जीतकर अपने राज्य में मिला लिया।

अभ्यास

१—तैमूर के हमले के बाद उत्तरी भारत में कौन कौन-से स्वाधीन राज्य बने?

२—चित्तौड़ दिल्ली-राज्य से कब अलग हो गया?

३—बहमनी राज्य कब और किस तरह स्थापित हुआ?

४—हसनकाँगू कौन था? उसकी बाबत तुम क्या जानते हो?

५—महमूद गावान ने बहमनी राज्य के लिए क्या किया?

६—विजयनगर राज्य की कब और किसने नींव डाली?

७—पन्द्रहवीं शताब्दी में विजयनगर की क्या हालत थी?

८—अब्दुलरज्जाक कौन था? विजयनगर के बारे में क्या लिखा है?

९—विजयनगर के पतन का वर्णन करो।

१०—तालीकोट की लड़ाई कब हुई? उसका दक्षिण के राज्यों पर क्या प्रभाव पड़ा?

अध्याय २०

सैयद और लोदी-वंश

(सन् १४१४-१५२६)

सैयद-वंश—(सन् १४१४-५१) तैमूर हिन्दुस्तान से जाते समय मुलतान के सूबेदार खिज्रख़ाँ को अपना नायब बना गया था खिज्रखाँ सैयद था। उसने दिल्ली मे सैयद-वंश की स्थापना की। तुग़लक़-वंश के अन्तिम राजा महमूद के मरते ही खिज्रखाँ ने दिल्ली पर अपना अधिकार कर लिया। उसके वंशजो ने ३७ वर्ष तक राज्य किया। परन्तु उनमें ऐसा कोई न था जिसकी गिनती बड़े बादशाहो में की जाय। सैयदों के समय में दोआब में बड़ा उपद्रव हुआ। राजपूतों ने कर देना बन्द कर दिया और बग़ावत की। इस वंश का अन्तिम बादशाह आलमशाह ऐसा निकम्मा निकला कि वह दिल्ली को छोड़कर बदायूँ में रहने लगा। ऐसी दशा में उसके एक सर्दार बहलोल लोदी ने सन् १४५१ ई० मे राज्य पर अधिकार कर लिया। यही बहलोल लोदी-वंश का पहला बादशाह है।

लोदी-वंश—बहलोल लोदी—(सन् १४५१-८९) बहलोल लोदी अफ़ग़ान था। दिल्ली की गद्दी पर बैठते ही उसने अफ़ग़ानो को बुलाया और उन्हे बड़े-बड़े ओहदे दिये। बहलोल सीधा आदमी था। बादशाह होने पर भी वह कभी राजसिंहासन पर नहीं बैठा और न उसने बादशाहो की-सी कभी शान शौकत दिखाइ। जोनपुर के सुल-तान हुसैनशाह शर्क़ी पर बहलोल ने कई बार चढ़ाई की। अन्त में उसकी हार हुई और जोनपुर-राज्य दिल्ली-राज्य मे मिला लिया गया।

अध्याय २१

भारतीय समाज, साहित्य और कला

सामाजिक दशा—मुसलमान अन्य विदेशियो की तरह भारतवर्ष क निवासियों मे खप नहीं गये परन्तु उनकी सभ्यता का हिन्दूसमाज पर गहरा प्रभाव पड़ा। हिन्दुओं की रहन-सहन, वेश-भूषा मे फ़र्क़ आ गया। पास पास रहने से मुसलमानों ने भी हिन्दुओं की वहुत-सी वाते ग्रहण कर लीं। हिन्दुओं की जाति-व्यवस्था की तरह ये भी शेख़, सैयद, मुग़ल, पठान का भेद मानने लगे।

यो तो हिन्दू प्राचीन काल से मानते आये हैं कि ईश्वर एक है और मनुष्य को उसी की पूजा करनी चाहिए। परन्तु अब हिन्दू महात्माओं ने भक्ति पर अधिक ज़ोर दिया और जाति पाँत के भेद को व्यथ वतलाया। इन महात्माओ में रामानुज, रामानन्द, कबीर, नानक, वल्लभाचार्य और चैतन्य अधिक प्रसिद्ध है। रामानुज स्वामी का जन्म दक्षिण मे हुआ। उन्होंने विष्णु की पूजा का प्रचार किया। रामानन्द स्वामी ने राम-सीता की भक्ति का उपदेश किया और कहा कि जाति मोक्षप्राप्ति में वाधा नही डाल सकती। स्वामी जी के शिष्या मे छोटी जातियो के भी लोग थे। वे उनके साथ वैसा ही वर्ताव करते थे जैसा वड़ी जाति क शिष्यो के साथ। रामानन्दी मत के माननेवालो का मुख्य ग्रन्थ नाभा जी का भक्तमाल है। इसमे वैष्णव महात्माओ के जीवनचरित्रो का वर्णन है।

श्रीशङ्कराचार्य سری شنکراچاریہ
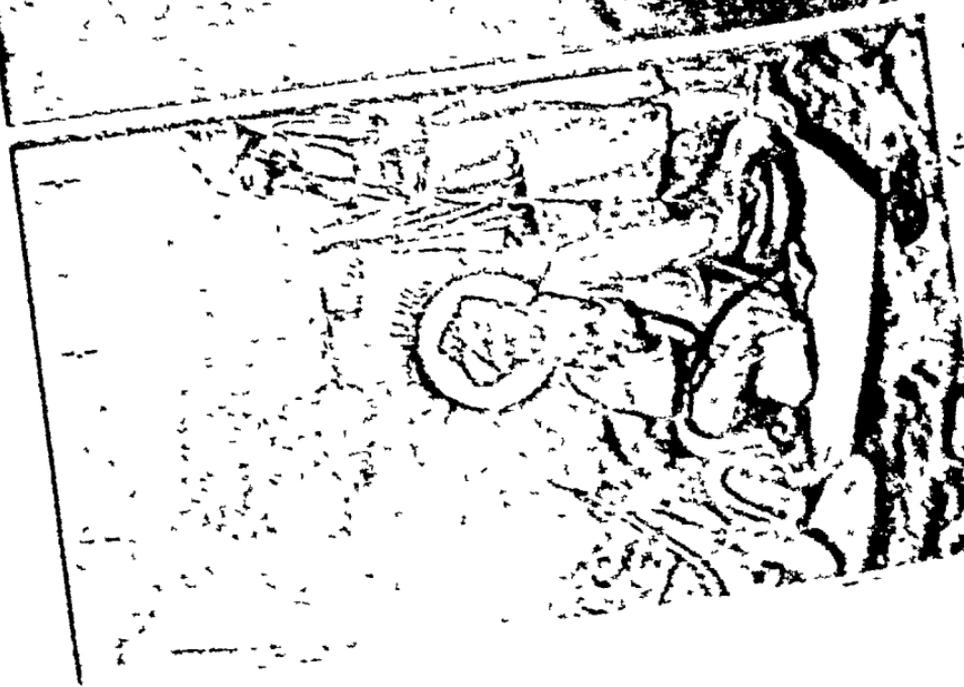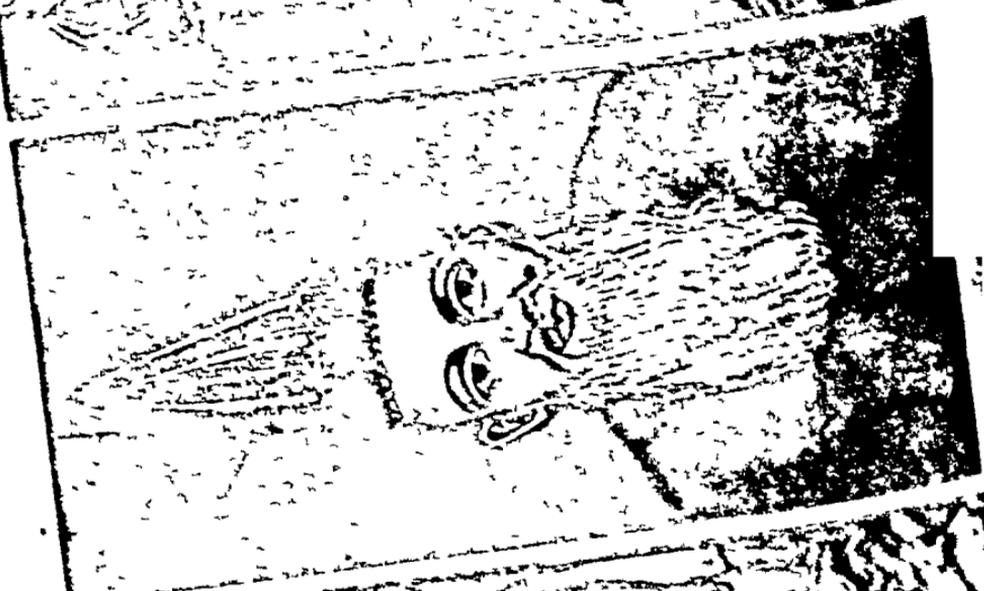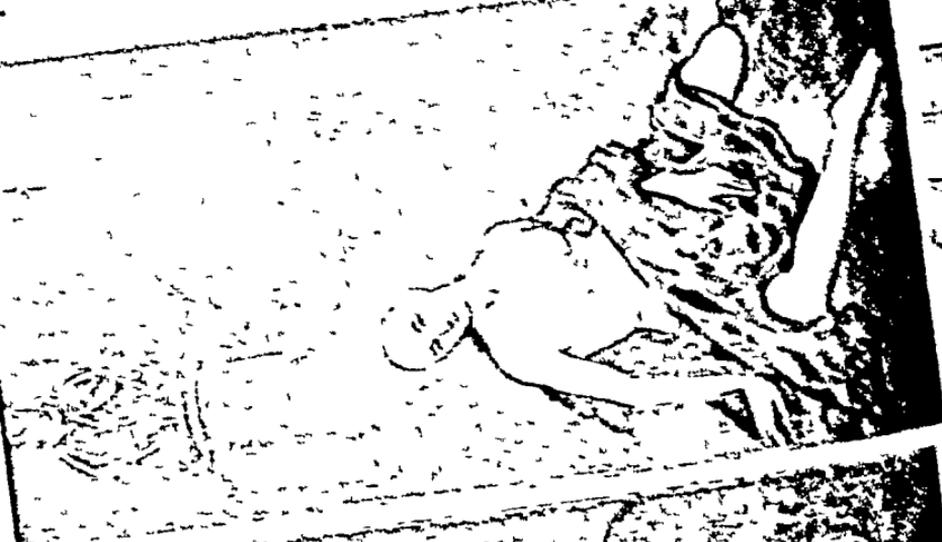
रामानन्द के शिष्यों में कबीर सबसे प्रसिद्ध हुए। इनका जन्म पन्द्रहवीं शताब्दी मे हुआ। कबीर जी स्वभाव से ही बड़े धर्मात्मा और ईश्वरभक्त थे। इन्होंने भी एक निराकार ईश्वर की उपासना पर जोर दिया और मूर्तिपूजा की निन्दा की। उन्होंने हिन्दू-मुसलमानो को उपदेश किया, उनकी बुराइयों को बतलाया और भक्ति और सच्चरित्रता पर बड़ा जोर दिया। कबीर के उपदेशो का संग्रह उनके बीजक मे है जो अब तक पढ़ा जाता है।

गुरु नानक भी इस युग के एक महात्मा हो गये है। सिक्ख-धर्म के चलानेवाले वे ही है। इनका जन्म १५ वीं शताब्दी में पंजाब में तालबन्दी नामक ग्राम में हुआ था। गुरु नानक कहते थे कि हिन्दू-मुसलमानो का ईश्वर एक ही है और जाति-पाँति का भेद व्यर्थ है। नानकजी के उपदेशो का संग्रह ग्रन्थसाहब में है। ग्रन्थसाहब को सिक्ख लोग अपनी पवित्र, धार्मिक पुस्तक समझते है।

श्रीवल्लभाचार्य और चैतन्य स्वामी ने भी भक्ति का उपदेश किया। वल्लभ स्वामी तैलंग ब्राह्मण थे। उनका दक्षिण में जन्म हुआ था। वे कृष्ण को ईश्वर का अवतार मानते थे और कहते थे कि मनुष्य संसार मे-रहता हुआ भी मोक्ष पा सकता है। भक्तो में जाति-पाँति का भेद नहीं। जो ईश्वर से सच्चा प्रेम करता है वही मुक्ति का अधिकारी है. चाहे किसी जाति का क्यो न हो।

चैतन्य महाप्रभु का जन्म बंगाल मे नदिया (नवद्वीप) नामक स्थान में सन् १४८५ ई० मे हुआ था। २५ वर्ष की अवस्था मे उन्होंने सन्यास ले लिया। उन्होने कृष्ण की भक्ति का उपदेश किया और कहा कि कृष्ण के उपासक सब एक समान है। उनमे जाति-पाँति का भेद न

होना चाहिए। चैतन्य के उपदेशों का बंगाल में बड़ा प्रभाव पड़ा और वैष्णव-धर्म में एक नई शक्ति आगई।

इन महात्माओं की शिक्षा से प्रकट होता है कि हिन्दू-मुसलमानों में अब मेल हो चला था। धीरे-धीरे दोनो समझने लगे थे कि हमारा ईश्वर एक ही है। हिन्दू मुसलमान पीरों की पूजा करने लगे और मुसलमान हिन्दुओं के देवी-देवताओं का आदर करने लगे। भक्ति के उपदेशों का दोनों पर प्रभाव पड़ा।

साहित्य—मुसलमानों के आने से भारत में एक नये साहित्य का विकास हुआ। फारसी में अमीर ख़ुसरो ने अद्भुत कविता की। इतिहास के भी बहुत-से ग्रन्थ लिखे गये। मुसलमान संस्कृत-भाषा का आदर नहीं करते थे, इसलिए संस्कृत-साहित्य की उन्नति रुक गई। परन्तु मिथिला में संस्कृत-भाषा की अच्छी उन्नति हुई। बंगाल में जयदेव ने अपना गीतगोविन्द इसी काल में लिखा।

हिन्दी-भाषा को इस काल में बड़ा प्रोत्साहन मिला। कबीर, नानक, दादूदयाल और विद्यापति ठाकुर ने अपनी कृतियों से हिन्दी-साहित्य के भांडार को बढ़ाया।

कला—इस काल में शिल्प और कला की भी अच्छी उन्नति हुई। क़ुतुबमीनार, तुगलकाबाद का किला, ग़यासुद्दीन तुग़लक का मक़बरा, अलाउद्दीन खिलजी का दर्वाज़ा इस काल की प्रसिद्ध इमारतों में से हैं। इनकी विशेषता इनकी मज़बूती है। इनमें ऐसा बारीक और सुन्दर काम नहीं है जैसा मुग़ल-काल की इमारतों में। बंगाल, जौनपुर, गुजरात के बादशाहों को भी इमारत बनाने का बड़ा शौक था। उनके बनाये हुए महल और मसजिदें अब तक मौजूद हैं। जौनपुर

की अटाला मसजिद, लाल दर्वाजा मसजिद और बंगाल की अदीना मसजिद प्रसिद्ध इमारतो मे से हैं। दक्षिण में भी बहमनी बादशाहो और विजयनगर नरेशो ने किले, महल और नये शहर बनवाये जिनमें से कई अब तक मौजूद हैं।

अभ्यास

१—इस्लाम का हिन्दू-धर्म पर क्या प्रभाव पडा?

२—१५वी शताब्दी मे कौन बडे-बड़े महात्मा हुए? उनके उपदेश का वर्णन करो।

३—अमीर खुसरो कौन था? उसके बारे मे क्या जानते हो?

४—सन् १२०० ई० से १५०० ई० तक साहित्य की कैसी उन्नति हुई? सक्षेप से बताओ।

५—खिलजी और तुगलक सुलतानो की बनाई हुई प्रसिद्ध इमारतो के नाम बताओ। इन इमारतो की विशेषता क्या है?

अध्याय २२

मुग़लराज्य का स्थापित होना—बाबर

बाबर का आरम्भिक जीवन—तुम पहले पढ़ चुके हो कि [इब्रा]हीम लोदी को लड़ाई में हराकर बाबर ने हिन्दुस्तान में अपना राज्य स्थापित किया था। यह बाबर कौन था और कहाँ से आया? बाबर तैमूर के वंश में से था। उसका बाप उमरशेख मिर्ज़ा मध्य एशिया में फ़र्ग़ाना नाम की एक छोटी-सी रियासत का मालिक था। जब बाबर ११ वर्ष का था, उसका बाप मर गया। राज्य का सारा बोझ उसके सिर पर आ पड़ा। उसके चचा भी राज्य की ताक में बैठे थे, इसलिए उनसे भी लड़ना पड़ा। बाबर ने तैमूर की राजधानी समरकन्द को लेने की इच्छा की। उसने तीन बार समरकन्द पर चढ़ाई की परन्तु अन्त में वह उसके हाथ से निकल गया। फ़र्ग़ाना को भी बाबर के शत्रुओं ने छीन लिया। अब निराश होकर वह दक्षिण की तरफ़ आया और सन् १५०४ ई० में उसने

नोट—बाबर के वंशज मुगल कहलाते हैं। परन्तु उनके लिए मुग़ल शब्द का प्रयोग करना ठीक नहीं है। मुसलमान इतिहासकारों ने मुग़ल शब्द का प्रयोग उन असभ्य लोगों के लिए किया है जो किसी समय मध्य-एशिया में रहते थे। ये मुसलमान होने से पहले बड़े निर्दयी थे और देशों में लूट-मार करते थे। इन्होंने इल्तुतमिश, बलबन, अलाउद्दीन के ज़माने में हिन्दुस्तान पर भी हमले किये थे। धीरे धीरे मुगल तुर्कों में मिलने लगे और उनके साथ विवाह आदि करने लगे। बाबर का बाप तुर्क था और मा मंगोल जाति की थी। उसके वंशजों को तुर्क कहना ही उपयुक्त है।

काबुल को जीत लिया। परन्तु काबुल के राज्य से वह सन्तुष्ट नहीं था। वह इधर-उधर नजर डालने लगा और एक बड़ा राज्य बनाने की इच्छा करने लगा। हिन्दुस्तान का देश करीब था। उसे तैमूर ने एक बार जीता भी था। इब्राहीम लोदी से सब लोग अप्रसन्न थे। बाबर ने सोचा कि किसी तरह हिन्दुस्तान मिल जाय तो अच्छा हो। इतने मे उसे पंजाब के सूबेदार दौलतखाँ लोदी और मेवाड़ के राना संग्रामसिंह का निमंत्रण मिला। बाबर ऐसे मौके को कब हाथ से जाने देता। उसने शीघ्र निमंत्रण स्वीकार कर लिया।

बाबर का आक्रमण—बाबर ने यो तो सरहदी सूबो पर कई बार हमले किये थे परन्तु दिल्ली-राज्य से वह अभी दूर ही रहा था। दौलतखाँ के कहने से वह पंजाब की तरफ बढ़ा और उसने लाहौर को जीत लिया। अब दौलतखाँ की आँखें खुलीं। उसे देश-द्रोह की अच्छी सजा मिली। इसके बाद सन् १५२५ ई० में बाबर ने इब्राहीम पर चढ़ाई करने की तैयारी की। उसके पास केवल १२,००० आदमी थे। परन्तु उसे अपने तोपखाने का बड़ा भरोसा था। इब्राहीम लगभग एक लाख सेना लेकर पानीपत के मैदान मे पहुँचा। २१ अप्रैल सन् १५२६ ई० को दोनो सेनाओ की मुठभेड़ हुई। बाबर के तोपखाने ने खूब काम दिया। जोर की लड़ाई हुई। अफगानो की सेना मुगलो के सामने न ठहर सकी और बहुत जल्द उसके पैर उखड़ गये। इब्राहीम लड़ाई मे मारा गया और दिल्ली, आगरा बाबर के हाथ आगये।

इब्राहीम की हार के तीन कारण थे। एक तो अफगानों में आपस मे बड़ी फूट थी। इब्राहीम के सर्दार उससे चिढ़े हुए थे और

कनवाह (खानवा)* का युद्ध (१५२७)—राना ने बाबर से [illegible]ने के लिए एक लाख सेना इकट्ठी की और बियाना की ओर कूच [illegible]या। बाबर भी अपनी सेना लेकर २१ फरवरी सन् १५२७ ई० को [illegible]ड़ाई के मैदान में आ डटा। राजपूतों की विशाल सेना को देखकर [illegible]लों के होश उड़ गये। इसी समय काबुल से एक ज्योतिषी आया। [illegible]सने यह भविष्यवाणी की कि लड़ाई में बादशाह की जीत होना [illegible]ठिन है। बाबर के सिपाही निराश हो गये और घर लौटने की इच्छा [illegible]रने लगे। बाबर का जीवन लड़ने-भिड़ने ही में बीता था। वह कब [illegible]म्मत हारनेवाला था। उसने इसी समय शराब छोड़ने की [illegible]तिज्ञा की और शराब पीने के कीमती बर्तन तुड़वा दिये। [illegible]पने सिपाहियों को इकट्ठा कर उसने उन्हें इस प्रकार [illegible]मझाया :—

"सेनाध्यक्षो और मित्रो! जो संसार में पैदा हुआ है, वह किसी [illegible] किसी दिन अवश्य मरेगा। शरीर अनित्य है। धर्म और आत्म-[illegible]म्मान की रक्षा के लिए प्राण देना अपकीर्ति से कहीं अच्छा है। [illegible]दि इस लड़ाई में हमारी मृत्यु हुई तो धर्म के सेवकों में हमारी [illegible]गनती होगी और यदि हमारी विजय हुई तो हमारे धर्म का प्रचार [illegible]होगा। ईश्वर की शपथ खाकर हमें प्रतिज्ञा करनी चाहिए कि हम न [illegible]लड़ाई के मैदान से भागेंगे और न मृत्यु से डरेंगे।"

इन शब्दों का सेना पर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा। सबने क़ुरान पर हाथ रखकर शपथ खाई कि हम दीन के लिए अपने प्राण तक

---

* आजकल इस गाँव को खानुआ कहते हैं। यह फतहपुर सीकरी से थोड़ी दूर पर है।

दे देंगे। फतहपुर सीकरी के पास कनवाह (खानवा) नामक स्थान पर १५ मार्च सन् १५२७ ई० को भयङ्कर युद्ध हुआ। राजपूतों ने वीरता के बड़े बड़े जौहर दिखाये। वे भूखे शेरो की तरह मुग़लसेना पर टूट पड़े और चारों तरफ मारकाट करने लगे। परन्तु बाबर के तोपखाने ने फिर उसकी मदद की। लाशो के ढेर लग गये। राना साँगा ख़ुद घायल हुआ और उसके सिपाही उसे लड़ाई के मैदान से निकाल ले गये। तोपों की मार ने राजपूतो को चकनाचूर कर दिया और अन्त में उन्हे पीछे हटना पड़ा।

इस हार ने मेवाड़ की क्या सारे राजपूताने की प्रतिष्ठा को धूल में मिला दिया। राना के मित्र भी उसका साथ छोड़ गये। मालवा, गुजरात के सुलतानो को अब दम लेने का मौक़ा मिला। हिन्दू-राज्य स्थापित होने की आशा भी नष्ट हो गई। बाबर को इस लड़ाई से बड़ा लाभ हुआ। राजपूतो का नाश होने से मुग़लराज्य की जड़ मज़बूत हो गई। दूसरे राज्यों को जीतना अब बाबर के लिए आसान हो गया। आगरा, अवध का सारा सूबा उसके हाथ आगया और चन्देरी के जीतने में कुछ भी कठिनाई नहीं हुई।

बंगाल और बिहार की विजय—चन्देरी का क़िला जीतने के बाद बाबर अफ़ग़ानो को दबाने के लिए बंगाल, बिहार की तरफ गया। लोदी अफ़ग़ान पानीपत की हार के बाद उधर ही भाग गये थे। सन् १५२९ ई० में घाघरा नदी के किनारे पर बाबर ने अफ़ग़ानो को लड़ाई में हराया। बिहार का सूबा बाबर के हाथ आगया और बंगाल के सुलतान ने उसके साथ सुलह कर ली।

बाबर की मृत्यु (१५३० ई०)—अधिक परिश्रम करने के रण बाबर की तन्दुरुस्ती खराब हो गई थी। उसे शराब पीने और फीम, भंग आदि नशीली चीज खाने का शौक था। इन्होंने भी उसे मज़ोर बना डाला। बदख्शाँ से लौटने के कुछ दिन बाद उसका बेटा मायूँ बीमार पड़ गया। बहुत दवा की गई, परन्तु हकीमों ने निराशा कट की। इससे उसे बहुत दुःख हुआ। २६ दिसम्बर सन् १५३० ० को आगरे मे बाबर का देहान्त हो गया। उसकी लाश काबुल हुँचाई गई और वहीं दफ़न की गई।

बाबर का चरित्र—बाबर बड़ा वीर, बुद्धिमान् और उदार दशाह था। उसका हृदय कोमल था। उसने कभी किसी को बिना रण नहीं सताया और न लड़ाई से भागनेवाले शत्रु को मारा। द्ध करने में उसे आनन्द आता था। इसी लिए तुर्किस्तान के सर्दार से बाबर कहते थे। तुर्की भाषा में बाबर शब्द का अर्थ है शेर। र यह सच है कि बाबर शेर के समान ही बहादुर था। उसमें रीरिक बल भी ख़ूब था। वह बढ़िया तैराक था। हिन्दुस्तान में तनी नदियाँ उसको पार करनी पड़ीं, वे सब उसने तैर कर ही पार थीं। घोड़े की सवारी का उसे ऐसा अभ्यास था कि दिन भर मे -सौ मील घोड़े की पीठ पर बैठा चला जाता था।

बाबर सीधा, सच्चा, सुन्नी मुसलमान था। उसने मज़हबी तर्के भी पढ़ी थी परन्तु कट्टरता उसमें बिलकुल न थी। हिन्दुओं साथ उसका बर्ताव अच्छा था। बात का वह ऐसा पक्का था कि जिस किसी को वह वचन दे देता था उसको वह पूरी तरह से रा करता था।

बाबर केवल वीर योद्धा ही न था किन्तु वह सुशिक्षित लेखक और कवि भी था। तुर्की भाषा में उसकी बनाई हुई ग़ज़लें और गीत अब तक मौजूद हैं। उसने स्वयं अपना जीवनचरित्र लिखा है, जिसका नाम "बाबरनामा" है। इसकी भाषा सरल और मनोहर है। यूरोपवाले भी इसकी प्रशंसा करते हैं।

बाबर प्राकृतिक दृश्यों का प्रेमी था। झील, झरने, तालाब, नदी फल, फूलों को देखकर वह मुग्ध हो जाता था। बाग़ लगाने का उसे बड़ा शौक़ था। आगरे में भी उसने एक बड़ा बाग़ लगवाया था जो आज तक रामबाग़ के नाम से प्रसिद्ध है।

अभ्यास

१—बाबर कौन था? उसने हिन्दुस्तान पर क्यों हमला किया

२—दौलतखाँ और राना संग्रामसिंह ने बाबर को क्यों बुलाया था
उनका ऐसा करना अच्छा था या बुरा।

३—राना संग्रामसिंह के साथ बाबर की क्यों लड़ाई हुई?
लड़ाई का वर्णन करो।

४—बाबर के चरित्र का वर्णन करो। इतिहास में बाबर क
इतना क्यों प्रसिद्ध है?

५—बाबर ने हिन्दुस्तान में अपना राज्य किस प्रकार स
किया? संक्षेप से बताओ।

—

अध्याय २३

हुमायूँ और शेरशाह

(१५३०-५६); (१५४०-४५)

हुमायूँ की कठिनाइयाँ—बाबर के मरने के बाद उसका बड़ा बेटा हुमायूँ गद्दी पर बैठा। हुमायूँ के अलावा बाबर के तीन बेटे और थे—कामरान, हिन्दाल और असकरी। कामरान काबुल और पंजाब का हाकिम था। हिन्दाल और असकरी हिन्दुस्तान में थे। हुमायूँ को अपने भाइयों से कुछ मदद नहीं मिली बल्कि बराबर कष्ट ही मिलता रहा। इधर भाइयों का यह हाल था, उधर राज्य के शत्रु अपनी घात लगाये बैठे थे। बंगाल स्वाधीन था। बिहार में अफ़गान लोग अपने खोये हुए राज्य को फिर से लेने की इच्छा कर रहे थे। गुजरात का सुलतान बहादुरशाह दिल्ली पर अधिकार करना चाहता था। उसके पास ख़ूब रुपया था और उसने लड़ाई का सामान भी बहुत-सा इकट्ठा कर लिया था। राजपूत भी अपनी हार को नहीं भूले थे और अपनी धाक जमाने का मौक़ा देख रहे थे। ऐसी स्थिति में हुमायूँ के लिए राज्य करना कठिन कार्य था।

लोदी अफ़ग़ानों के साथ लड़ाई—हुमायूँ ने पहले सन् १५३१ ई० महमूद लोदी को लखनऊ के पास लड़ाई में हराया। महमूद लोदी मारा गया और उसके साथी हताश हो गये। लोदियों का तो यह हाल हुआ। परन्तु हुमायूँ का मुक़ाबिला करने के लिए

एक अफ़ग़ान खड़ा हो गया। उसका नाम था शेरखाँ। उसने चुनार के किले पर अधिकार कर लिया। हुमायूँ ने चुनार पर धावा किया। परन्तु शेरखा ने उसकी अधीनता स्वीकार कर ली। हुमायूँ क्या जानता था कि यही शेरखाँ उसे किसी दिन हिन्दुस्तान से निकाल देगा।

बहादुरशाह के साथ लड़ाई—बहादुरशाह के डर से ही हुमायूँ चुनार के किले को छोड़कर चला आया था। जब हुमायूँ बहादुरशाह से लड़ने गया तब उसे मालूम हुआ कि वह चित्तौड़ को घेरे पड़ा है। चित्तौड़ को उसने क़रीब करीब जीत ही लिया था। परन्तु हुमायूँ के डर से वह भेंट लेकर वहाँ से चल दिया। दूसरी बार उसने फिर चित्तौड़ पर चढ़ाई की। हुमायूँ के लिए यह अच्छा मौका था। उसे चाहिए था कि वह फौरन बहादुरशाह पर हमला करता परन्तु बजाय ऐसा करने के वह मालवा में पहुँचा। बहादुर ने यह कहला भेजा कि जब एक मुसलमान लड़ रहा हो तो दूसरे मुसलमान का धर्म यही है कि मुसलमान पर हमला न करे। हुमायूँ इस दमपट्टी में आगया। उसकी सेना मालवा ही में पड़ी रही। जब बहादुरशाह चित्तौड़ से लौटा तो हुमायूँ ने उसका पीछा किया। वह डयू की ओर भाग गया। गुजरात और मालवा दोनों आसानी से हुमायूँ के अधिकार में आ गये। इधर तो हुमायूँ की ख़ूब जीत हुई। परन्तु पूर्व में एक नई आपत्ति खड़ी हो गई। शेरखाँ ने बिहार पर अपना अधिकार कर लिया और वह आगरा अवध की तरफ़ हाथ पैर फैलाने लगा। बङ्गाल को भी जीतने का उसने इरादा किया। यह सुनकर हुमायूँ मालवा से लौटा। बहादुरशाह ने जो ऐसे मौके की ताक में बैठा था, झट मालवा और गुजरात पर

अपना अधिकार कर लिया और अपनी खोई हुई शक्ति का संगठन प्रारम्भ कर दिया।

हुमायूँ और शेरखाँ की लड़ाई—हुमायूँ ने आगरे लौट कर पहले शेरख़ाँ को दबाने का इरादा किया। अपनी सेना लेकर वह पूर्व की तरफ चल दिया। उसने चुनार का क़िला ले लिया और फिर गंगा के किनारे-किनारे आगे बढ़ा। शेरख़ाँ हुमायूँ से खुल्लम-खुल्ला युद्ध नहीं करना चाहता था। इसलिए उसने अपने स्त्री, बच्चों और ख़ज़ाने को रोहतास के क़िले में भेज दिया और अपने बेटे को हुकम दिया कि हुमायूँ से मत लड़ना।

बङ्गाल का रास्ता खुला हुआ था। हुमायूँ ने आगे बढ़कर गौड़ (बङ्गाल की राजधानी) पर अधिकार कर लिया। इतने मे वर्षा-ऋतु आगई। नदी-नाले उमड़ने लगे और रास्ते बन्द हो गये। सिपाहियो को ज्वर आने लगा। बहुत-से नौकरी छोड़ कर चल दिये। उधर बरसात बन्द होने से पहले ही हुमायूँ ने हिन्दाल को फौज लाने के लिए आगरे भेजा था परन्तु वह वहाँ जाकर बादशाह बन बैठा।

शेरख़ाँ यह सब देख रहा था। वह रोहतास के किले से बाहर निकला और चुनार के किले को जीतकर उसने जौनपुर को घेर लिया। हुमायूँ घबड़ाकर बङ्गाल से लौटा परन्तु बक्सर के पास चौसा नामक स्थान पर (१५३९ ई०) शेरख़ाँ ने उसे लड़ाई में हरा दिया। अपने प्राण बचाने के लिए हुमायूँ घोड़े पर चढ़कर गंगा में कूद पड़ा और डूबने ही को था कि निज़ाम मुहम्मद नामक भिश्ती ने उसे बचाया। प्रसन्न होकर बादशाह ने उसे पाछे ताज

घंटे राज्य-सिंहासन पर बैठने की आज्ञा दी। भिश्ती ने चमड़े
सिक्का चलाया और अपने रिश्तेदारो को ख़ूब रुपया दिया।
हुमायूँ की उदारता और कृतज्ञता का एक उदाहरण है।

कन्नौज की लड़ाई (सन् १५४०)—चौसा की हार के ब
हुमायूँ आगरे लौटा। हिन्दाल के विश्वासघात पर उसे बड़ा क्रो
आया परन्तु कामरान के कहने से उसका अपराध क्षमा कर दि
गया। अब तीनो भाई मिलकर शेरख़ाँ को दबाने की तरकी
सोचने लगे। शेरख़ाँ ने इतने में बङ्गाल पर अधिकार जमा लि
और मुग़ल-सेना को निकाल बाहर किया।

हुमायूँ फिर एक बड़ी सेना लेकर बङ्गाल की तरफ़ चला। का
रान ने धोखा दिया। वह अपनी फ़ौज को लेकर लाहौर चल दि
और अपने सर्दारों को भी साथ ले गया। शाही लश्कर का ए
अफ़सर सुलतान मिर्ज़ा भी अपनी सेना लेकर शत्रु से जा मिला
सन् १५४० ई० में कन्नौज के पास बिलग्राम नामक स्थान प
दोनों सेनाएँ एक दूसरे से भिड़ गईं। हुमायूँ की हार हुई
उसके बहुत-से सिपाही गंगा में डूबकर मर गये। बड़ी कठिना
से हुमायूँ आगरे पहुँचा और अपना माल-असबाब लेक
लाहौर की तरफ़ चल दिया। आगरा, दिल्ली में शेरख़ाँ का झण्ड
फहराने लगा।

हुमायूँ का फ़ारस को जाना—निराश होकर हुमायूँ
सिन्ध के रेगिस्तान की तरफ़ गया। मारवाड़ के राजा मालदेव ने भ
उसकी मदद नहीं की। अनेक कष्ट सहता हुआ बादशाह अन्त में
अमरकोट पहुँचा। वहाँ २३ नवम्बर सन् १५४२ ई० को अकबर

बाबर بابر

हुमायूँ ہمایوں

हुमायूँ का मक़बरा ہمایوں کا مقبرہ

शेरशाह का मकबरा شیر شاہ کا مقبرہ
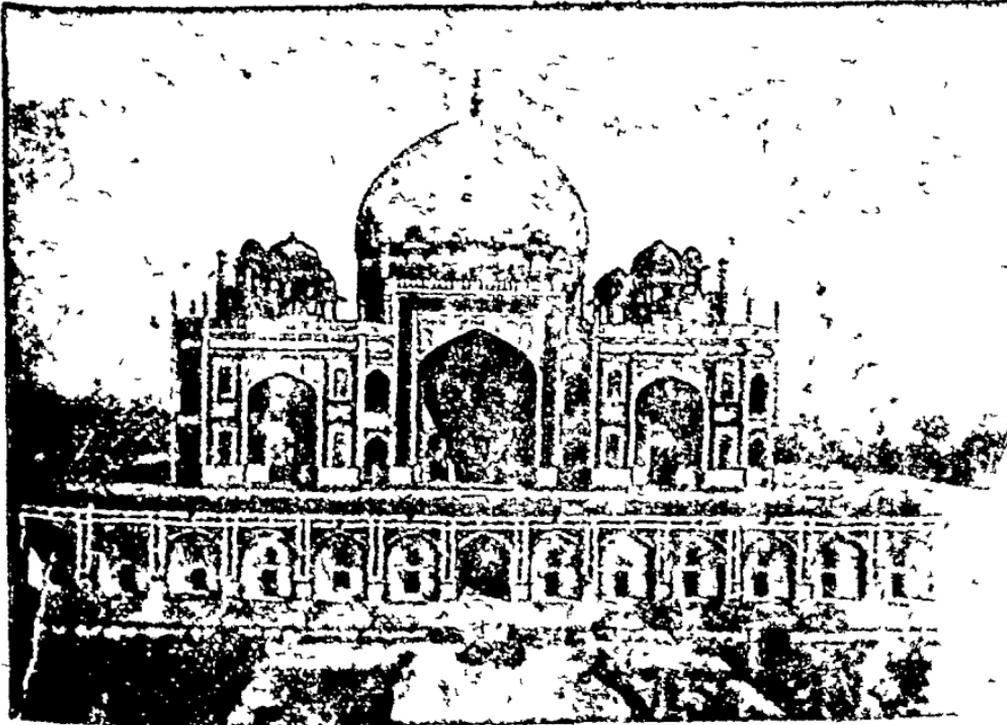
का जन्म हुआ*। अमरकोट के राना की मदद से हुमायूँ ने फिर सिन्ध में पैर जमाने की कोशिश की परन्तु सफल न हुए। अमरकोट से वह कन्दहार की तरफ बढ़ा परन्तु वहां उसके भाई कामरान ने उसे कैद करना चाहा। कन्दहार से निकल कर हुमायूँ फारस पहुँचा। वहाँ शाह तहमास्प ने उसका स्वागत किया और ११ वर्ष तक अपने पास रक्खा।

दिल्ली का राज्य शेरशाह के हाथ में चला गया। हुमायूँ के लौटने का हाल तुम्हें आगे चलकर बतलायेंगे।

दिल्ली में नया राज्य—शेरशाह सूरी (सन १५४०-४५)— हुमायूँ के फारस चले जाने पर उत्तरी भारत में फिर अफ़ग़ानों की तूती बोलने लगी। शेरशाह सूरी दिल्ली का बादशाह हो गया। यह शेरशाह कौन था?

शेरशाह का बचपन का नाम फ़रीद था। उसका बाप हसन सहसराम (बिहार में) का एक जागीरदार था। अपनी सौतेली मा से अनबन हो जाने के कारण फरीद जौनपुर चला गया। वहाँ उसने ख़ूब विद्या पढ़ी और अरबी, फारसी में अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। कुछ समय के बाद बाप-बेटों में मेल हो गया और हसन ने उसे अपनी जागीर का प्रबन्ध सौंप दिया। फरीद ने ऐसा अच्छा प्रबन्ध किया कि हसन दंग रह गया। जागीर की आमदनी भी बढ़ गई और प्रजा को किसी प्रकार का कष्ट नहीं हुआ। बाप-बेटों में फिर किसी कारण अनबन हो गई और फरीद को घर छोड़ना पड़ा।

---

*सन् १५४१ ई० में जब हुमायूँ ने भक्कर पर चढ़ाई की थी तब हमीदा नामक ईरानी स्त्री के साथ विवाह किया था।

उसने विहार के सूबेदार के यहाँ नौकरी कर ली। यहीं पर फरीद ने एक शेर को मारा और वह शेरखाँ कहलाने लगा। सन् १५२८ ई० में शेरखाँ की बाबर से भेंट हुई। बाबर ने ताड़ लिया कि शेरखाँ मामूली आदमी नहीं है। जब उसने कुछ शक किया तब शेरखाँ फिर बिहार को चला गया और सूबेदार के यहाँ उसने नौकरी कर ली। धीरे-धीरे उसने सब राजकाज अपने हाथ में ले लिया और बिहार, बङ्गाल पर अपना पूरा अधिकार स्थापित कर लिया।

बाबर की मृत्यु के बाद हुमायूँ को शेरखाँ से लड़ना पड़ा। चौसा की लड़ाई के बाद उसने शेरशाह की उपाधि ली। अब वह बङ्गाल, बिहार, जौनपुर का मालिक हो गया और बिलग्राम की लड़ाई में हुमायूं को हराकर उसने दिल्ली का राज्य पा लिया।

शेरशाह की विजय—दिल्ली का सुलतान होकर शेरशाह ने अपना राज्य बढ़ाने की इच्छा की। पहले उसने पंजाब के खोखरों को दबाया और रोहतास का किला बनवाया। बङ्गाल के सूबेदार ने बग़ावत का इरादा किया परन्तु शेरशाह ने उसे दबा दिया। इसके बाद उसने मालवा को जीता और मारवाड़ के राजा मालदेव पर चढ़ाई की। मालदेव इस समय राजपूताना में शक्तिशाली राजा था। शेरशाह ने पहले रायसीन* का क़िला जीत लिया और फिर जोधपुर को (१५४४ ई०) घेर लिया। परन्तु इस रेगिस्तान में राजपूतों को हराना कठिन था।

*रायसीन का क़िला रणथम्भोर के पास है।

राजपूतों ने ऐसे जोर का हमला किया कि शेरशाह की भी जान बड़ी मुश्किल से बची। उसने कहा कि मैंने एक मुट्ठी भर बाजरे के लिए हिन्दुस्तान का राज्य खो दिया होता।

शेरशाह की मृत्यु—सन् १५४४ ई० मे शेरशाह ने चित्तौड़ पर चढ़ाई की। राना ने उसका आधिपत्य स्वीकार कर लिया। इसके बाद उसने कालिंजर पर धावा किया परन्तु बारूद मे आग लग जाने से वह २२ मई सन् १५४५ ई० को झुलस कर मर गया।

राज्य-प्रबन्ध—शेरशाह हिन्दुस्तान के प्रसिद्ध बादशाहो मे गिना जाता है। जैसा वह शूरवीर था वैसा ही योग्य शासक भी था। राज्य के हर एक काम को स्वयं देखता था और अपने अफसरो से भी ख़ूब काम लेता था। प्रजा की भलाई का उसे सदैव ध्यान रहता था। उसने जमीन की नाप कराई और लगान का ठीक प्रबन्ध किया। किसानो को पैदावार का एक तिहाई हिस्सा राज्य को देना पड़ता था। बादशाह का हुक्म था कि किसानो पर किसी प्रकार का अत्याचार न किया जाय और खेती की उन्नति में राज्य की ओर से मदद दी जाय। यदि कभी उसकी फौज खेती को नुकसान पहुँचाती तो वह अपने ख़ज़ाने से रुपया देकर उसे पूरा करता था।

न्याय करने मे वह किसी की रू-रिआयत नहीं करता था। उसकी अदालतों मे छोटे-बड़े, गरीब-अमीर सब बराबर थे। चोरी, कत्ल, लूट और डकैती को रोकने के लिए उसने गाँव गाँव में मुखिया नियत कर दिये थे। जब कोई ऐसा जुर्म होता तो मुखिया और गाँववालो को उसका पता लगाना पड़ता था। अगर वे पता न लगा सकते तो

इस समय दिल्ली की गद्दी के लिए तीन अफ़ग़ान शाहज़ादे हक़दार थे। इनके झगड़ों ने हुमायूँ को मौका दिया। उसने फ़ारस के शाह की मदद से १५,००० सवार लेकर पंजाब पर हमला किया और अपने सेनापति बैरमख़ाँ की मदद से लाहौर को जीत लिया। इसके बाद सरहिन्द के स्थान पर उसने सिकन्दर सूर को लड़ाई (१५५५ ई०) में हराया। सिकन्दर हिमालय की तरफ भाग गया और १५ वर्ष बाद दिल्ली, आगरा फिर हुमायूँ के हाथ आगये।

हुमायूँ की मृत्यु (१५५६ ई०)—हुमायूँ को राज्य तो मिल गया परन्तु वह बहुत दिनों तक न जिया। एक दिन वह अपने पुस्तकालय की सीढ़ियों से उतर रहा था कि इतने में उसने मुल्ला की आवाज सुनी। नमाज का समय था। बादशाह वहीं रुक गया और फिर जब लकड़ी टेककर उठा, तब उसका पैर संगमरमर की सीढ़ी से फिसल गया। चोट से वह बेहोश हो गया। बहुत इलाज किया गया परन्तु कोई लाभ न हुआ। अन्त में चौथे दिन उनका देहान्त हो गया।

हुमायूँ का चरित्र—हुमायूँ दयालु और उदार हृदय बादशाह था। वह ख़ूब पढ़ा-लिखा था और विद्वानों से प्रेम करता था। परन्तु बाबर की तरह वीर और दृढ़ विचारवाला नहीं था। उसका एक काम पूरा नहीं होता था जब तक कि वह दूसरा छेड़ देता था। इसी लिए वह कभी अपनी पूरी ताक़त से काम न ले सका। अवस्था बढ़ने पर वह अफ़ीम खाने लग गया था जिससे उसका दिमाग़ कमज़ोर हो गया। अपनी ऐश-पसन्दी और आलस्य के कारण हुमायूँ ने बड़े दुःख उठाये। परन्तु इन सबको उसने धैर्य

के साथ सख्त किया और कभी किसी के साथ कठोरता का बर्ताव नहीं किया।

अभ्यास

१—हुमायूँ को राजगद्दी पर बैठते ही किन-किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा?
२—बहादुरशाह के साथ हुमायूँ की क्यों लड़ाई हुई?
३—शेरशाह का बादशाह होने के पहले का हाल बताओ।
४—शेरशाह ने किस तरह दिल्ली का राज्य पाया?
५—हुमायूँ की हार के क्या क्या कारण थे?
६—शेरशाह के शासन-प्रबन्ध का वर्णन करो।
७—शेरशाह की गिनती क्यों भारत के बड़े बादशाहों में की जाती है?
८—शेरशाह की मृत्यु के बाद हुमायूँ ने फिर किस तरह दिल्ली का राज्य लिया?

राणा प्रताप رانا پرتاپ

अकबर اکبر

फतहपुर सीकरी बुलन्द दरवाजा فتح پور سیکری بلند دروازہ

दीवान श्राम फतहपुर सीकरी का स्तम्भ

فتح پور سیکری کے دیوان عام میں ایک کھمبا

की और दूर देशो मे जाकर हिन्दू-मुसलमानो से युद्ध किया और मुगल-राज्य की शान को बढ़ाया।

जयपुर की देखादेखी बीकानेर और जैसलमेर के राजाओ ने भी अकबर से मेल कर लिया। इस मेल का प्रभाव अच्छा पड़ा। सन् १५६३ ई० में बादशाह ने हुक्म दिया कि हिन्दू यात्रियो से कोइ कर न लिया जाय और एक साल बाद उसने जजिया भी बन्द कर दिया। हिन्दू इस बात से बहुत प्रसन्न हुए और बादशाह की जय मनाने लगे।

राज्य का विस्तार—उत्तरी भारत—अकबर को अपना राज्य बढ़ाने की बड़ी इच्छा थी। राजपूतो में केवल मेवाड़ ऐसा राज्य था जिसने उसकी अधीनता स्वीकार नही की थी। इसलिए सबसे पहले सन् १५६७ ई० में उसने चित्तौर पर चढ़ाइ की। राना उदयसिंह डर के मारे चित्तौर को एक वीर राजपूत जयमल को सोंपकर पहाड़ो मे भाग गया।

जयमल बड़ी वीरता से लड़ा परन्तु अकबर की गोली से मारा गया। उसके मरते ही राजपूत-सेना मे हलचल मच गइ। स्त्रिया ने अपने सतीत्व की रक्षा के लिए जौहर* किया। राजपूत भी तलवारे लेकर भूखे बाघो की तरह मुग़लो पर टूट पड़े परन्तु उनकी हार हुई और हज़ारो मारे गये।

उदयसिंह की मृत्यु (सन् १५७१) के बाद उसके बेटे राना प्रताप ने मुग़लो का खूब मुक़ाबिला किया। उसने प्रण किया कि कभी दिल्ली

*जब राजपूत देखते थे कि शत्रु से बचने का कोई उपाय नहीं है तब वे पहले स्त्रियो को आग मे जला देते थे। अबुलफज्ल लिखता है कि जौहर मे कुल ३०० स्त्रियाँ जलकर मरी थीं।

के बादशाह के सामने सिर न झुकाऊँगा। बादशाह ने राजा मानसिंह को राना पर चढ़ाई करने के लिए भेजा। राजपूत और मुसलमान मिलकर वीर राना को दबाने का प्रयत्न करने लगे। हल्दीघाटी की लड़ाई (सन् १५७६) में राना हार गये और मुग़लों ने कई किले जीत लिये। परन्तु उन्होंने हिम्मत न हारी और अनेक कष्ट उठाने पर भी अपनी स्वतंत्रता के लिए युद्ध करते रहे। थोड़े दिनों में उन्होंने अपने किले फिर जीत लिये और वे उदयपुर में रहने लगे। वीर-शिरोमणि प्रताप का नाम भारत के इतिहास मे सदा अजर-अमर रहेगा।

मेवाड़ की चढ़ाई के बाद अकबर ने रणथम्भौर और कालिंजर के किले भी जीत लिये।

राजपूताना को जीतकर अकबर ने गुजरात पर (सन् १५७३) चढ़ाई की। बादशाह ख़ुद गुजरात गया। लड़ाई में उसकी जीत हुई और गुजरात का देश मुग़ल-राज्य में मिला लिया गया।

इसके दो वर्ष बाद (सन् १५७५) अकबर ने बिहार और बङ्गाल को जीतकर अपने राज्य में मिला लिया। अफ़ग़ान उड़ीसा की तरफ़ चले गये और वहाँ से लड़ने लगे। सन् १५९२ ई० में मानसिंह ने उनको दबाया और उड़ीसा मुग़ल-राज्य में मिला लिया गया।

पश्चिमोत्तर प्रदेश की जीत—पश्चिमोत्तर प्रदेश की तरफ़ अकबर ने विशेष ध्यान दिया। इसका कारण यह था कि उसे मध्य-एशिया के देशों से बड़ा डर था। अपने भाई मिर्ज़ा हकीम के मरने पर (सन् १५८५) उसने अफ़ग़ानिस्तान को अपने राज्य में मिला लिया। सन् १५८६ से १५९५ ई० तक बराबर उधर से लड़ाई होती रही।

काबुल
काश्मीर
सिन्ध नदी
लाहौर
मुलतान
पानीपत
देहली
आगरा
गङ्गा नदी
लखनऊ
जोधपुर
जयपुर
अजमेर
बेनारस
गौड़
इलाहाबाद
अहमदाबाद
नर्मदा न
अहमदनगर
गोलकुण्डा
बङ्गाल की खाड़ी
नक़्शा
भारतवर्ष का
सन् १६०५ ई०
मीलों का स्केल
० ५० १०० २०० ३०० ४००

बादशाह १६ वर्ष तक लाहोर में अपनी राजधानी बनाकर रहा। सन् १५८६ ई० में उसने काश्मीर को जीत लिया और सरहदी देश क़न्दहार, सिन्ध और बिलोचिस्तान पर भी अपना अधिकार स्थापित कर लिया। यूसुफ़ज़ाइ पठानों की लड़ाई में राजा बीरबल मारा गया। तो भी मानसिंह और टोडरमल ने बड़ी वीरता से शत्रुओं को दबाया और मुग़लों का झण्डा ऊंचा रक्खा।

दक्षिण—उत्तर के देशों को जीतकर अकबर ने दक्षिण के मुसलमान राज्यों पर चढ़ाई की। अहमदनगर में सुलताना चाँदबीबी ने मुग़लों का बहादुरी के साथ मुक़ाबिला किया। परन्तु अपने अफ़सरों के विश्वासघात के कारण वह मारी गई। उसके मरते ही मुग़लों की चढ़ बनी। उन्होंने ज़ोर का धावा किया और अहमदनगर का कुछ भाग (सन् १६००) मुग़ल-राज्य में मिला लिया। इसके बाद ख़ानदेश पर चढ़ाई हुई। बादशाह स्वयं वहाँ गया और धोखे से उसने सन् १६०१ में असीरगढ़ का प्रसिद्ध किला जीत लिया। इतने में ख़बर आई कि उत्तर में सलीम ने बग़ावत की है। बादशाह अधूरा काम छोड़कर आगरे लौट गया।

सलीम का विद्रोह—पहले कह चुके हैं कि जब अकबर दक्षिण में असीरगढ़ पर चढ़ाई कर रहा था सलीम ने बग़ावत की थी। इस बग़ावत का कारण यह था कि सलीम राजगद्दी लेना चाहता था। सन् १६०२ ई० में उसने बादशाह को बड़ा दुःख पहुँचाया। 'अबुलफ़ज़ल'* को वह अपना शत्रु समझता था। जब अबुलफ़ज़ल दक्षिण से लौट रहा था

---

* अबुलफ़ज़ल अकबर का मंत्री था। वह बड़ा विद्वान् था। बादशाह उसको बड़ा प्रेम करता था।

सलीम ने उसे मरवा डाला। बादशाह को बड़ा रंज हुआ और दो दिन तक उसने न कुछ खाया न उसे नींद आई। सलीम को सजा देने के लिए वह इलाहाबाद की ओर चला परन्तु रास्ते में अपनी माँ की बीमारी की ख़बर सुनकर लौट आया। सलीम भी आगरे की तरफ़ आया और उसने क्षमा माँगी। बादशाह ने उसकी प्रार्थना स्वीकार कर ली और उसे अपना वारिस बनाया।

अकबर की मृत्यु—अकबर के मित्र अबुलफज्ल, टोडरमल, बीरबल पहले ही मर चुके थे। इसलिए उसका चित्त दु:खी रहता था। सन् १६०५ ई० में ६३ वर्ष की अवस्था में संग्रहणी की बीमारी से उसकी मृत्यु हो गई। आगरे के पास सिकन्दरे के रोज़े में उसकी लाश दफ़न की गई।

अकबर का चरित्र—अकबर हृष्ट-पुष्ट और सुन्दर मनुष्य था। वह ५ फ़ुट ६ इंच लम्बा था। उसका रंग गेहुँआ और आवाज़ बुलन्द थी। चाल-ढाल से वह बादशाह मालूम होता था। उसमें बड़ा शारीरिक बल था। घोड़े की सवारी उसे बहुत प्रिय थी। वह कोसों घोड़े पर चढ़ा चला जाता था। जानवरों की लड़ाई देखने का उसे बड़ा शौक था और शिकार से भी प्रेम था। युद्ध छिड़ने पर वह कभी पीछे नहीं हटता था और बन्दूक चलाने में बड़ा प्रवीण था। बुद्धिमान् ऐसा था कि बड़े-बड़े पेचीदा मामलों को शीघ्र समझ जाता था। उसका स्वभाव नरम था। उसे घमंड छू तक नहीं गया था। छोटे बड़े सबका वह समान आदर करता था।

लड़कपन में उसे बहुत कम प्राप्त करने की उसकी ऐसी प्रबल इच्छा

रात शास्त्रार्थ सुनने में बिता देता था। वह धर्म-शास्त्र, इतिहास और साहित्य के ग्रन्थों को पढ़वाकर सुनता था। उसके दर्बार में अनेक विद्वान् और गुणी पुरुष रहते थे। फ़ैज़ी अपनी कविता लिखकर बादशाह को सुनाता था और बीरबल अपने चुटकुलों से उसका मनोविनोद करता था। गान-विद्या और चित्रकारी का भी उसे शौक़ था।

वह प्रजा के हित का ध्यान रखता था। उसकी दृष्टि में हिन्दू-मुसलमान सब बराबर थे। हिन्दुओं को अपना धर्म पालने की उसने पूरी स्वतन्त्रता दे दी थी। वह ख़ुद भी हिन्दू-धर्म की बहुत-सी बातों को मानता था। जिस समय अन्य देशों में लोग धर्म के नाम पर घोर अत्याचार कर रहे थे, अकबर ने इस उत्तम नीति से काम लिया। इसी लिए उसकी गिनती संसार के श्रेष्ठ बादशाहों में की जाती है।

अभ्यास

१—हेमू कौन था? अकबर को उससे क्यों लड़ना पड़ा?

२—बैरमख़ाँ के बारे में क्या जानते हो?

३—अकबर ने राजपूतों के साथ कैसा बर्त्ताव किया?

४—उत्तरी भारत में किस तरह अकबर ने अपना राज्य बढ़ाया?

५—पश्चिमोत्तर प्रदेश को जीतने की अकबर ने क्यों ज़रूरत समझी?

६—अकबर के समय में दक्षिण में कौन-कौन राज्य थे?

७—अकबर के चरित्र का वर्णन करो।

८—सलीम से बादशाह क्यों अप्रसन्न था?

अध्याय २५

(२) महान् सम्राट् अकबर

शासन-प्रबन्ध

हिन्दुओं के साथ बर्त्ताव—शेरशाह और अकबर के पहले जितने मुसलमान बादशाह हिन्दुस्तान में हुए उनमे बहुत कम ऐसे थे जिन्होंने हिन्दुओं के साथ उदारता का बर्त्ताव किया हो। हिन्दू-मुसलमानों में मेल-जोल भी कम रहता था। उन पर कभी जजिया लगाया जाता था कभी उनके मन्दिर तोड़े जाते थे। उन्हे अपना धर्म पालने की भी पूरी आज़ादी न थी। राज्य मे बड़े-बड़े ओहदे मुसलमानों को ही दिये जाते थे। इन सब कारणों से हिन्दू मुसलमान-राज्य से असन्तुष्ट रहते थे। अकबर ने इस नीति को बिलकुल बदल दिया। उसने जज़िया आदि कर बन्द कर दिये और धार्मिक स्वतन्त्रता दे दी। इतना ही नही बादशाह ख़ुद हिन्दू-धर्म की बहुत-सी बातों को मानता था। रक्षाबन्धन, दिवाली, होली आदि त्यौहारों पर वह उत्सव करता था और ब्राह्मणों को दान देता था। उसकी इच्छा थी कि हिन्दू-मुसलमानों में मेल पैदा हो। इसलिए उसने हिन्दुओं को राज्य मे बड़े-बडे ओहदे दिये और उन पर पूरा विश्वास किया। राजा मानसिंह, टोडरमल, बीरबल का वह उतना ही सम्मान करता था जितना मुसलमान अफसरों का। बादशाह के इस बर्त्ताव से हिन्दू बहुत प्रसन्न हुए और पूरे राजभक्त बन गये।

अकबर के धार्मिक विचार—तुम पहले पढ़ चुके हो कि अकबर सब धर्मों का समान आदर करता था। २५ वर्ष की अवस्था तक तो वह पक्का सुन्नी मुसलमान रहा। परन्तु इसके बाद उसके विचार बदलने लगे। मुल्ला मौलवियों का पक्षपात उसे बुरा मालूम होने लगा। शेखमुबारक और उसके बेटे अबुलफज्ल और फैजी सूफी विद्वान् थे। उनके सत्संग से बादशाह के विचार और भी उदार हो गये। उसको हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, जैन-धर्म के सिद्धान्तों को जानने की इच्छा हुई। उसने विद्वानों को बुलाया और उनके शास्त्रार्थ सुने। रामायण महाभारत, गीता आदि हिन्दू-धर्म के ग्रन्थों का उसने फारसी में अनुवाद कराया जिससे मुसलमान भी जाने कि हिन्दू-धर्म क्या चीज है।

विचार करते-करते बादशाह को अनुभव हुआ कि ईश्वर एक है। वही मन्दिर में है और वही मसजिद और गिरजे में। यदि मनुष्य के भाव पवित्र हों तो वह सब जगह मिल सकता है। इसलिए धार्मिक लड़ाई-झगड़ा व्यर्थ है। बादशाह ने फतहपुर सीकरी में एक मकान बनवाया जिसका नाम उसने इबादतखाना (पूजा-गृह) रक्खा। हर बृहस्पति को यहाँ सब धर्मों के विद्वान् जमा होते थे और शास्त्रार्थ करते थे। बादशाह ख़ुद मौजूद होता था। ये विद्वान् लोग जोश में आकर कभी-कभी गाली-गलौज कर बैठते थे। तब उन्हें वह शान्त करता था। मुसलमानों ने अकबर की इस उदारता को पसन्द नहीं किया। देश में ख़बर फैल गई कि बादशाह काफ़िर हो गया है और उसने इस्लाम-धर्म छोड़ दिया है। सन् १५८२ ई० में अकबर ने नया मत चलाया जिसे "दीनइलाही" अथवा

अकबर की सभा के नवरत्न دربار نورتن اکبری
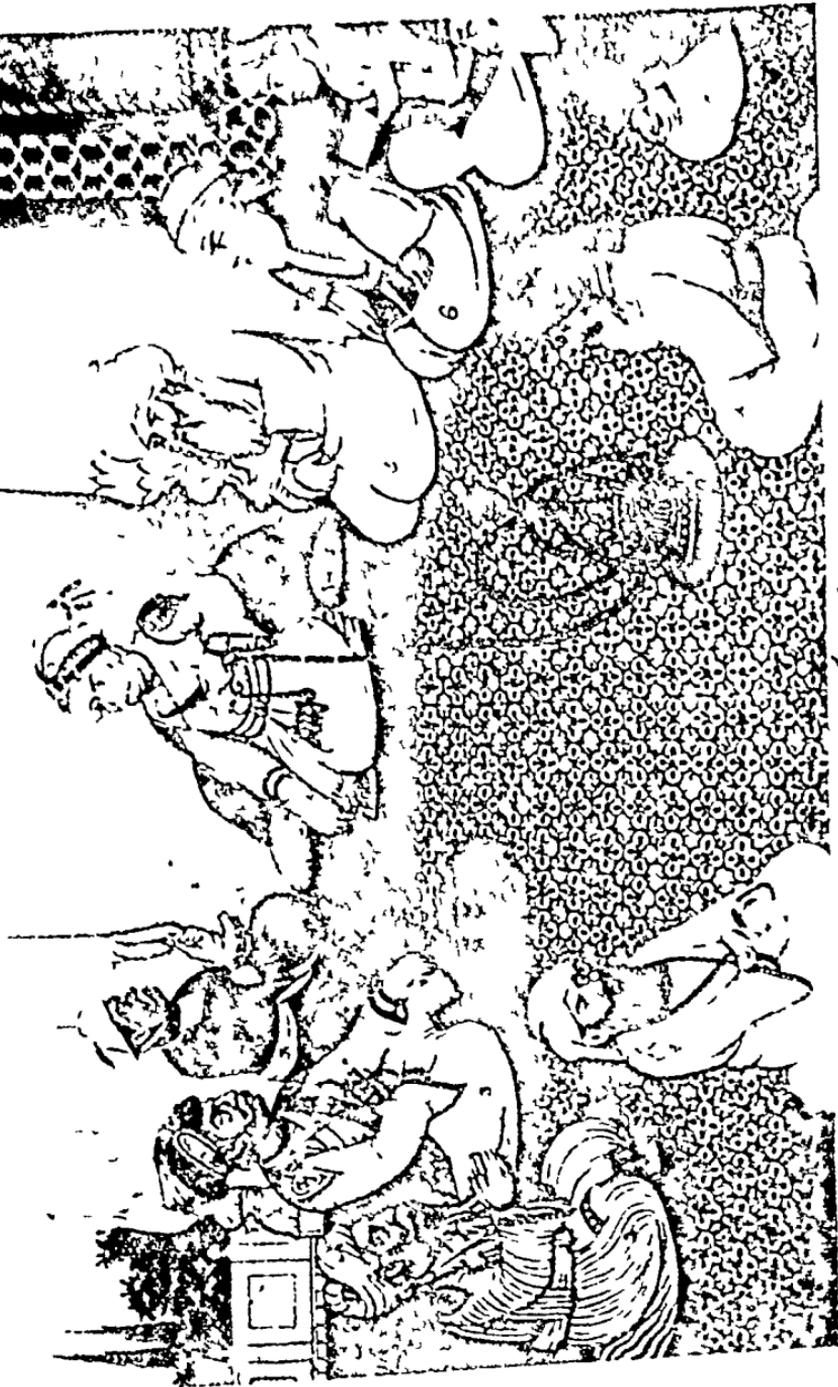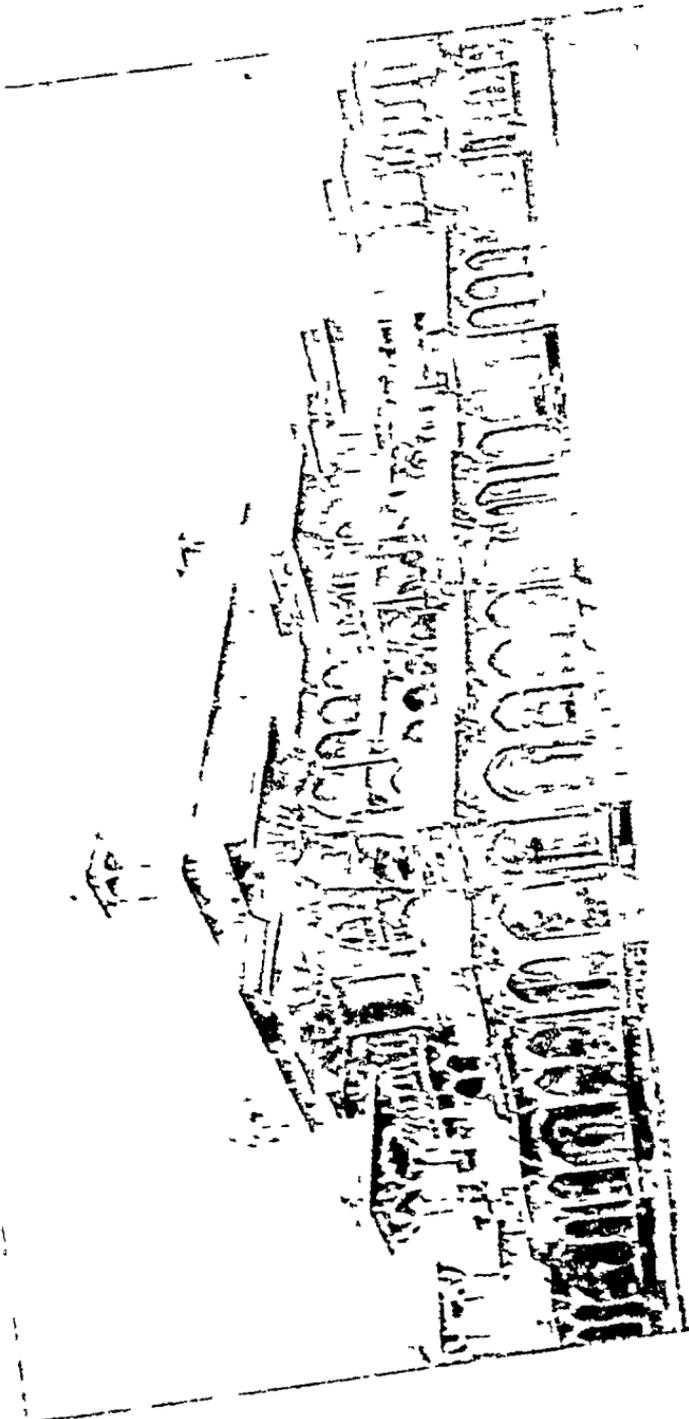
"तौहीदइलाही" कहते है। इस मत मे सब धर्मों की अच्छी बाते मौजूद थी। इसका मुख्य सिद्धान्त यह था कि ईश्वर एक है। अन्धविश्वास धर्म नहीं है। मनुष्य को बुद्धि से काम लेना चाहिए। बादशाह ने इस मत के नियम बना दिये। जो इसमे शामिल होते थे वे बादशाह को ही अपना गुरु मानते थे।

दीनइलाही की अधिक उन्नति न हुई। राजा बीरबल तो इसमें शामिल हो गये। परन्तु राजा भगवानदास और मानसिंह ने साफ इनकार कर दिया। अकबर की मृत्यु के बाद उसका बिलकुल लोप हो गया।

बादशाह हिन्दू-धर्म को भी मानता था। वह सूर्य की पूजा करता, कभी-कभी माथे पर तिलक लगाता और माला पहन लेता था। महल मे हिन्दू रानियो के मन्दिर बने हुए थे और उन्हें अपना धर्म पालने की पूरी आज़ादी थी।

समाज-सुधार—अकबर ने अपने राज्य के बुरे रवाजों को रोकने की कोशिश की। उसने ग़ुलामी की प्रथा को बन्द कर दिया और हुक्म दिया कि जहाँ तक हो सके शराब कम बेची जाय। वह बाल-विवाह का विरोधी था और बे-जोड़ विवाहो को भी नापसन्द करता था। उसने कानून बना दिया कि १६ वर्ष से कम उम्र के लड़को और १४ वर्ष से कम उम्र की लड़कियो के विवाह न होने पावे। लड़क-लड़की की रज़ामन्दी भी लेना जरूरी हो गया। विधवा स्त्रियो को विवाह करने की आज्ञा दे दी गई। सती के बुरे रवाज के रोकने का भी बादशाह ने प्रयत्न किया। कोई स्त्री उसकी आज्ञा के बिना सती नहीं हो सकती थी।

होते थे। धोखे से बचने के लिए बादशाह ने घोड़ों को दागने की रीति फिर चलाइ थी। नियत समय पर हर एक मनसबदार को अपने घोड़े मुआइने के लिए लाने पड़ते थे। सेना के पास अनेक प्रकार के हथियार थे। बादशाह को हथियारों का बड़ा शौक था। उसने बन्दूक़ चलाने की नई तरकीब चलाइ थीं। मनसबदारों के अलावा सेना में अहदी भी थे जिनका वेतन ५०० रुपये तक होता था।

साहित्य और शिल्प-कला की उन्नति—अकबर के समय में साहित्य और शिल्प-कला की अच्छी उन्नति हुई। अबुलफ़ज़्ल ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "आईनअकबरी" और "अकबरनामा" में अकबर के राज्य का पूरा हाल लिखा है। फ़ैज़ी ऊँचे दर्जे का कवि था। उसकी ग़ज़लें अब तक पढ़ी जाती हैं। बादशाह को संस्कृत-भाषा से भी प्रेम था। इसलिए उसने रामायण, महाभारत, गीता आदि ग्रन्थों का फ़ारसी में अनुवाद कराया। इतिहास की भी कइ पुस्तकें इस काल में लिखी गईं। हिन्दी-भाषा को अकबर के दर्बार में अच्छा प्रोत्साहन मिला। तुलसीदास के रामचरित-मानस और सूरदास के सूरसागर की इसी समय रचना हुइ। बादशाह ख़ुद भी हिन्दी बोल सकता था। कभी कभी वह हिन्दी में कविता भी करता था। उसके दर्बारी मानसिंह, टोडरमल, बीरबल हिन्दी-काव्य से प्रेम करते थे। मुसलमानों को भी हिन्दी से प्रेम था। अब्दुर्रहीम खानखाना हिन्दी में कविता करता था। उसके दोहे अब भी बड़े प्रेम से पढ़े जाते हैं।

अकबर को इमारत बनवाने का बड़ा शौक था। उसने फ़तहपुर सीकरी का शहर बसाया और उसमें बड़े-बड़े महल बनवाये। आगरे में उसने लाल पत्थर का किला और सिकन्दरे का रोज़ा, दो बड़ी इमारतें बनवाई। बादशाह को चित्रकारी से भी प्रेम था। उसके दर्बार में बड़े-बड़े चित्रकार रहते थे। उनके चित्र संसार भर में बढ़िया समझे जाते थे। संगीत-विद्या की भी उन्नति हुई। तानसेन दर्बार का प्रसिद्ध गायक था।

अभ्यास

१—हिन्दुओं के साथ अकबर ने कैसा बर्त्ताव किया?

२—अकबर के धार्मिक विचार क्या थे? दीनइलाही से तुम क्या समझते हो?

३—अकबर ने सामाजिक सुधार के लिए क्या किया?

४—अकबर के शासन-प्रबन्ध का वर्णन करो।

५—राजा टोडरमल ने मालगुज़ारी वसूल करने का क्या प्रबन्ध किया था?

६—अकबर के समय के साहित्य और शिल्प-कला की उन्नति का वर्णन करो?

७—अकबर के चरित्र के विषय में क्या जानते हो?

८—अकबर की गिनती भारत के श्रेष्ठ शासकों में क्यों की जाती है?

अध्याय २६

विलासप्रिय जहाँगीर

(सन् १६०५-२७)

जहाँगीर का राजगद्दी पर बैठना—अकबर की मृत्यु के पश्चात् उसका बड़ा बेटा सलीम जहाँगीर के नाम से गद्दी पर बैठा। उसने अपने बाप के अफ़सरों को बड़े-बड़े ओहदों पर रक्खा, बहुत-से कर माफ़ कर दिये और प्रजा की भलाई के लिए नये क़ानून बनाये।

ख़ुसरो की बग़ावत—अकबर सलीम से अप्रसन्न रहता था। इसलिए उसने सलीम के बेटे ख़ुसरो को राज्य देने का विचार किया था परन्तु समझौता होने के कारण ख़ुसरो की इच्छा पूरी न हुई। जब सलीम बादशाह हुआ तब उसने बग़ावत की। वह आगरे से चुपचाप भागा और मथुरा होता हुआ लाहौर पहुँच गया। जहाँगीर भी फ़ौज लेकर उसके पीछे चला। लाहौर के पास लड़ाई में ख़ुसरो हार गया और पकड़ा गया। उसके साथियों को बादशाह ने कड़ी सजा दी। ख़ुसरो क़ैदख़ाने में डाल दिया गया और क़रीब-करीब अन्धा कर दिया गया। सिक्खों के गुरु अर्जुन ने ख़ुसरो की कुछ मदद की थी। जब बादशाह को यह ख़बर मिली तो उसने हुक्म दिया कि गुरु को फाँसी दी जाय। इस अत्याचार का सिक्खों पर बुरा प्रभाव पड़ा। सिक्ख मुग़ल-राज्य के शत्रु हो गये।

जहाँगीर, جہاں گیر

नूरजहाँ, نورجہاں

शाहजहाँ شاہ جہاں

मुमताज बेगम — ممتاز بیگم

ताजमहल تاج محل

दीवान खास (दिल्ली) دیوان خاص (دلّی)
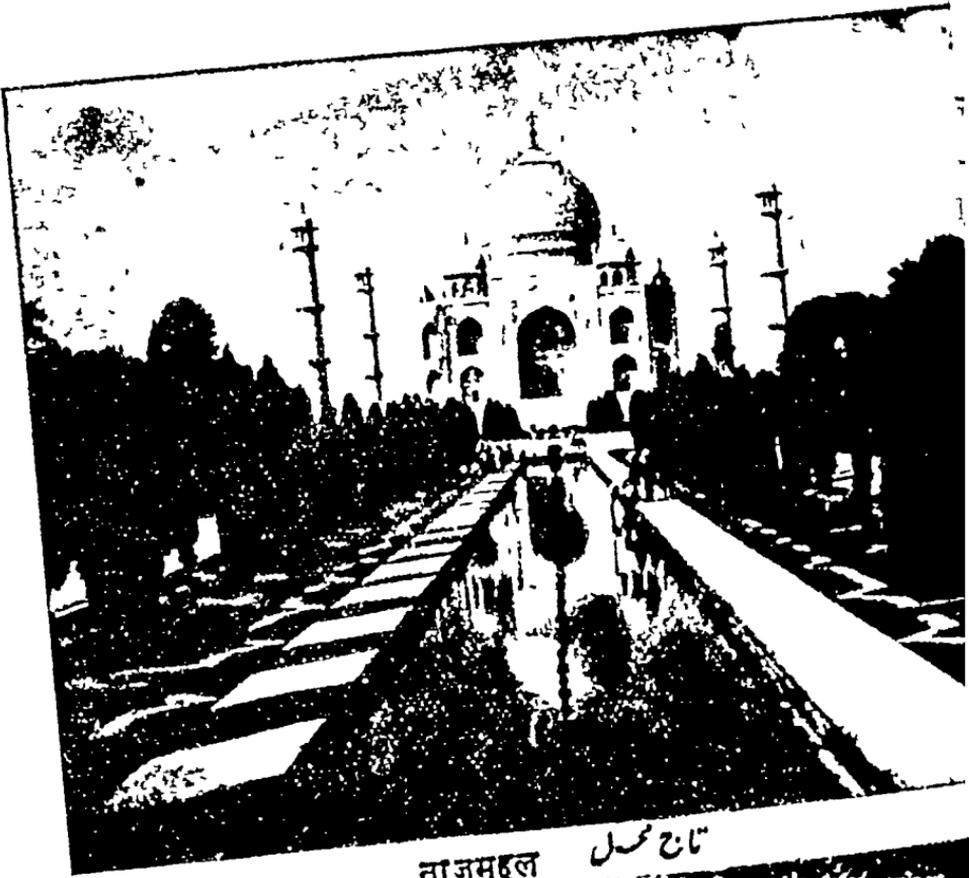
खुसरो को बादशाह ने कुछ समय बाद आसफखाँ के हवाले कर दिया। उसने चार वर्ष बाद उसे खुर्रम (शाहजहाँ) के सुपुर्द कर दिया। खुर्रम ने अपने एक गुलाम के हाथ से उसे मरवा डाला।

नूरजहाँ—मुसलमान-काल मे जितनी बेगमें हुई है उनमें नूरजहाँ का नाम सबसे अधिक प्रसिद्ध है। नूरजहाँ का बचपन का नाम मिहरुन्निसा था। उसका बाप मिर्जा गयासबेग तेहरान का निवासी था। गरीबी के कारण उसने हिन्दुस्तान आकर अकबर बादशाह के यहाँ नौकरी कर ली। मिहरुन्निसा महल मे आती-जाती थी। सलीम उससे प्रेम करने लगा। बादशाह ने यह देखकर उसका विवाह शेर अफगन नामक एक सर्दार से कर दिया। जहाँगीर के गद्दी पर बैठने के समय शेर अफगन बगाल मे था। शेर अफगन पर यह दोष लगाया गया कि वह बगावत करना चाहता है। कुछ लोगो का कहना है कि जहाँगीर ने नूरजहाँ को लेने के लिए ही यह बहाना बनाया था। कुछ भी हो कुतुबुद्दीन उसे गिरफ्तार करने के लिए भेजा गया। दोनो मे लड़ाई हो गई। शेर अफगन मारा गया। मिहरुन्निसा आगरे भेज दी गई और चार वर्ष बाद सन् १६११ ई० मे जहाँगीर ने उसके साथ विवाह कर लिया। अब वह नूरजहाँ कहलाने लगी।

नूरजहाँ बड़ी रूपवती, गुणवती, बुद्धिमती स्त्री थी। राज्य के मामलो को वह खूब समझती थी और बादशाह को सलाह देती थी। बादशाह उससे बड़ा प्रेम करता था और उसके लिए सब कुछ करने को तैयार था। सोने के सिक्कों पर उसने अपने नाम के साथ नूरजहाँ का नाम भी खुदवाया। बड़े-बड़े राजा, महाराजा और सर्दार उसकी

.खुशामद करने लगे। उसने अपनी एक पार्टी बना ली जिसमें उसका बाप और भाई आसफखाँ भी शामिल थे। यह सब होते हुए भी नूरजहाँ एक उदार हृदय और दयावती स्त्री थी। वह दीन-दुखियो की सदा मदद करती थी। उसने बहुत-से ग़रीब मुसलमानों की लड़कियों के विवाह कराये थे।

राजकुमार .खुर्रम का विद्रोह—जहाँगीर के चार बेटे थे। .खुसरो, पर्वेज़, .खुर्रम (शाहजहाँ) और शहरयार। .खुर्रम सब में योग्य और बहादुर था। इसलिए जहाँगीर ने उसे अपने जीवन-काल में ही शाहजहाँ की उपाधि दे दी थी। पहले तो नूरजहाँ और .खुर्रम से .खूब पटती थी परन्तु बाद को उनमें अनबन हो गई। नूरजहाँ शहरयार को चाहती थी क्योंकि उसकी लड़की जो शेर अफ़ग़न से थी उसको ब्याही थी।

सन् १६२२ ई० में फारस के बादशाह ने क़न्दहार को जीत लिया। जहाँगीर ने .खुर्रम को क़न्दहार पर चढ़ाई करने के लिए नियुक्त किया। परन्तु इसका उसने उलटा मतलब समझा। उसने समझा कि नूरजहाँ उसे राजगद्दी से वंचित रखने के लिए हिन्दुस्तान से बाहर निकालना चाहती है। .खुर्रम ने बग़ावत की। बादशाह ने महाबतख़ाँ को उसे दबाने के लिए भेजा। .खुर्रम से कुछ न बनी। वह दक्षिण की तरफ भागा। परन्तु जब वहाँ भी मदद न मिली तो तेलंगाना होता हुआ बङ्गाल पहुँचा और लूट-खसोट करता हुआ इलाहाबाद आगया। महाबतख़ाँ ने उसका पीछा न छोड़ा। शाहजहाँ की फौज हार गई और उसे फिर दक्षिण की तरफ लौटना पड़ा। इस दौड़-धूप और परेशानी से वह बीमार हो गया।

लाचार होकर उसने सन १६२५ ई० में बादशाह से माफी माँग ली।

महाबतख़ाँ का विद्रोह—महाबतख़ाँ का प्रभाव बढ़ता देखकर नूरजहाँ उससे जलन लगी। नूरजहाँ का भाई आसफ़ख़ाँ उसकी बर्बादी चाहता था। इसी लिए सन १६२६ ई० में महाबतख़ाँ को हुक्म मिला कि दर्बार में हाज़िर हो। उस पर रुपया मारने का भी दोष लगाया गया। जिससे वह बहुत नाख़ुश हुआ। जब महाबतख़ाँ आया, जहाँगीर झेलम नदी के किनारे डेरा डाले हुए पड़ा था। महाबत ने शाही डेरे को घेर लिया और बादशाह को क़ैद कर लिया। नूरजहाँ चुपके से नदी के दूसरे पार निकल गई। वहाँ से उसने बादशाह को छुड़ाने की कोशिश की परन्तु लड़ाई में वह न जीत सकी।

महाबतख़ाँ ने नूरजहाँ को बादशाह के पास जाने की आज्ञा दे दी। नूरजहाँ ने बड़ी चालाकी से जहाँगीर को क़ैद से छुड़ाया और फिर राज्य का काम करने लगी। महाबतख़ाँ भागकर दक्षिण में शाहजहाँ से जा मिला।

सर टामसरो—जहाँगीर के समय में सन् १६१५ ई० में इँगलैंड के बादशाह जेम्स प्रथम की ओर के एक राजदूत सर टामसरो व्यापार की आज्ञा लेने के लिए हिन्दुस्तान आया। वह यहाँ तीन वर्ष ठहरा। जहाँगीर ने अँगरेज़ों को मुग़ल-राज्य में व्यापार करने की आज्ञा दे दी।

सर टामसरो ने अपने रोजनामचे में जहाँगीर के दर्बार का हाल लिखा है। वह लिखता है कि सब लोग शराब पीते थे। बादशाह

अध्याय २७

मुग़ल-साम्राज्य की शान-शौकत

शाहजहाँ (सन १६२८-५८ ई० तक)

शाहजहाँ का बादशाह होना—जिस समय जहाँगीर की मृत्यु हुई शाहजहाँ दक्षिण में था। जब तक वह आया उसके ससुर आसफ़ख़ाँ ने दूसरों के एक बेटे को गद्दी पर बिठा दिया और शहरयार को क़ैद कर उसकी आँखें निकलवा डालीं। शाहजहाँ शीघ्र दक्षिण से आया और उसने एक-एक कर अपने वंश के शाहज़ादों को मरवा डाला। बड़ी धूम-धाम के साथ वह गद्दी पर बैठा और आसफ़ख़ाँ को उसने अपना मंत्री बनाया। नूरजहाँ राज्य के काम से अलग कर दी गई और उसकी पेंशन नियत हो गई।

राज-विद्रोह—गद्दी पर बैठने के थोड़े दिन बाद बुन्देलखंड में ओरछा के राजा ने विद्रोह किया परन्तु मुग़ल सेना ने उसे दबा दिया। इसके बाद ख़ानजहाँ लोदी ने बग़ावत की। वह चुपचाप एक दिन शाही दरबार से भाग गया और दक्षिण को चल दिया। बादशाह ने महाबतख़ाँ को फ़ौज देकर उसके पीछे भेजा। ख़ानजहाँ हार गया और मार डाला गया।

सन् १६३१ ई० में पुर्तगालियों का उपद्रव हुआ। कुछ पुर्तगाली व्यापारी हुगली में ठहर गये थे और अनाथ हिन्दू-मुसलमान बालकों को ग़ुलाम बना लेते थे। एक बार उन्होंने शाहजहाँ की बेगम

मुमताजमहल की दो लौंडियाँ पकड़ लीं। इस पर बादशाह बहुत अप्रसन्न हुआ। उसने बङ्गाल के सूबेदार को हुक्म दिया की पुर्तगालियों की कोठी का नाश कर दो। कइ हजार पुर्तगाली मारे गये और कइ हजार पकडे गये। उनके साथ बड़ी निर्दयता का बर्त्ताव किया गया।

अकाल—सन् १६३०-१६३२ इ० मे गुजरात और दक्षिण मे भयंकर अकाल पडा। लोग भूखो मरने लगे। सड़के लाशो से ढक गइं, अकाल और प्लेग से लाखो आदमी मर गये। सूरत मे ऐसा भयकर प्लेग फैला कि २१ मे से १७ अँगरेज व्यापारी मर गये। बादशाह ने गरीबो को भोजन बँटवाया और लगान माफ कर दिया।

मुमताज़महल—शाहजहाँ का विवाह २१ वर्ष की अवस्था में आसफ़खाँ की बेटी अर्जुमन्दबानू बेगम के साथ हुआ था। इस बेगम को बाद मे मुमताजमहल की पदवी मिली। शाहजहाँ उससे बड़ा प्रेम करता था। सन् १६३१ इ० मे बेगम बच्चा पैदा होते समय दक्षिण मे मर गइ। मरते समय उसने बादशाह से प्रार्थना की कि मेरा स्मारक ऐसा बनाना जिससे मेरा नाम अमर हो जाय। बादशाह ने जमुना के किनारे पर एक रौजा बनवाया जो ताज के नाम से प्रसिद्ध है। इसके बनने मे २२ वर्ष लगे और लगभग ३ करोड़ रुपया खर्च हुआ।

ताज संसार की अद्भुत इमारतो मे से है। देखने मे ऐसा मालूम होता है कि मानो आज ही बना है। इसकी नक्काशी और पत्थरों की खुदाई को देखकर बड़े बड़े कारीगर चकित रह जाते है।

शाहजहाँ की दूसरी इमारतें—शाहजहाँ को इमारते बनवाने का बड़ा शौक़ था। आगरे के किले की मोतीमसजिद, दिल्ली

हो गई थी उसके कारण आराज़ी बढ़ गई है। बादशाह अप्रसन्न हुआ और उसने कहा कि वहाँ के दीन-अनाथा और विधवाओं के शाप से नदी का पानी हट गया है। यदि मनुष्य का क़त्ल करना बुरा न होता तो मैं उस फ़ौजदार को मरवा देता जिसने इस ज़मीन से लगान वसूल किया है। बादशाह ने सादुल्लाखाँ को हुक्म दिया कि जो रुपया वसूल हुआ है वह शीघ्र वापस कर दिया जाय। यह कहानी सच हो या ग़लत, इतना अवश्य मानना पड़ेगा कि शाहजहाँ को प्रजा के सुख-दुख का सदा ध्यान रहता था।

यूरोप के यात्री लिखते है कि बादशाह प्रजा से प्रेम करता था और अत्याचारी हाकिमों को कड़ी सज़ा देता था। पुलिस का प्रबन्ध भी अच्छा था।

व्यापारी और दस्तकार लोग उन्नत दशा में थे। सहस्रों मनुष्य राज्य के क़ारख़ानो में काम करते थे और बढ़िया चीजें बनाते थे। सेना की संख्या शाहजहाँ के समय में बहुत बढ़ गई थी और युद्ध की सामग्री भी बहुत-सी इकट्ठी की गई थी जैसा कि उसके युद्धों से प्रकट होता है। ✓

राजगद्दी के लिए युद्ध—शाहजहाँ के चार बेटे थे और दो बेटियाँ—बेटो के नाम थे—दारा, शुजा, औरंगज़ेब, मुराद। बेटियों के नाम थे—जहाँआरा और रोशनआरा। दारा सूफ़ी था। उसमे मज़हबी पक्षपात बिलकुल न था। शाहजहाँ उससे प्रेम करता था और उसी को उसने अपना युवराज बनाया था। शुजा वीर तो था परन्तु अपना समय अय्याशी मे नष्ट करता था। औरंगज़ेब बड़ा बहादुर, चालाक और मज़हब का पाबन्द था। मुराद मूर्ख था और

शराब पीता था। बादशाह ने चारों बेटों को बड़ी बड़ी जागीरें दे दी थीं। परन्तु दारा दिल्ली में उसके पास ही रहता था। दारा और औरंगज़ेब में बड़ी शत्रुता थी। सन् १६५७ ई० में शाहजहाँ बीमार पड़ा। बीमारी की हालत में उसने राज्य का काम दारा को सौंप दिया। दारा ने बीमारी की खबर छिपानी चाही। इससे भाइयों को संदेह हुआ और उन्होंने समझा कि बादशाह मर गया और दारा सारे राज्य को ख़ुद हड़पना चाहता है। मुराद ने गुजरात में और शुजा ने बंगाल में बग़ावत की और बादशाह बन बैठे। औरंगज़ेब दक्षिण में था। वह भी ख़बर पाकर उत्तर की तरफ़ चल दिया।

औरंगज़ेब ने मुराद से मेल कर लिया और कहा कि मैं जीत होने पर तुम्हें पंजाब, सिन्ध, काश्मीर और काबुल का राज्य दे दूँगा। मुराद इस दमपट्टी में आगया। दोनों अपनी फ़ौजें लेकर उत्तर की तरफ़ चले। दारा ने राजा जसवंतसिंह को उनका मुक़ाबिला करने के लिए भेजा। उज्जैन के पास लड़ाई हुई जिसमें राजा हार गया। उज्जैन से दोनों भाई चम्बल को पार कर आगरे के पास आ पहुँचे। सामूगढ़* के मैदान में दारा से लड़ाई हुई। दारा पंजाब की तरफ़ भाग गया। औरंगज़ेब ने आगरे पर क़ब्ज़ा कर लिया और शाहजहाँ को वहीं किले में क़ैद कर लिया।

---

*प्रोफेसर जदुनाथ सरकार अपने इतिहास में लिखते हैं कि समोगर आगरे से ९ मील पर एक गाँव है। बर्नियर का लेख है कि सामूगढ़ फतहाबाद ही है जो आगरे से २१ मील पर है। कहते हैं यहाँ औरंगज़ेब ने एक सराय और एक मसजिद बनाई थी और एक बाग लगाया था जो अब तक मौजूद है।

भारतवर्ष सन् १७००
बम्बई
यूरोपीय बस्तियाँ
दिल्ली
आगरा
बनारस
उदयपुर
कलकत्ता
गोलकुण्डा
बीजापुर
मछलीपट्टम
गोआ
पुलिकट
मद्रास
जिंजी
नेगापट्टम
कोचीन
अ र ब
सा ग र
बंगाल की खाड़ी

अध्याय २८

मुग़ल-साम्राज्य की अवनति

औरंगज़ेब (सन् १६५८-१७०७ ई० तक)

औरंगज़ेब का राजसिंहासन पर बैठना—५ जून १६५९ ई० को औरंगजेब राजसिंहासन पर बैठा। गद्दी पर बैठते ही उसने बहुत-से कर बन्द कर दिये। गाना-बजाना और झरोखे में से दर्शन देना भी बन्द कर दिया। वह सुन्नी मुसलमानों की मदद से बादशाह हुआ था। इसलिए उनको प्रसन्न करने के लिए उसने लोगों को क़ुरान के नियमों पर चलने की ताकीद की।

चरित्र—औरंगज़ेब एक वीर, चतुर, सुशिक्षित बादशाह था। वह अपने धर्म का पक्का, सदाचारी और कर्त्तव्यदृढ़ था। वह क़ुरान के नियमों पर चलता था और अपना अधिकांश समय ईश्वर का नाम लेने में बिताता था। शुक्र के दिन वह रोज़ा रखता और जामामसजिद में नमाज पढ़ता था और कभी-कभी तमाम रात जाग कर भजन किया करता था। उसका जीवन सादा था। भोग-विलास, नाच-रंग, खेल-तमाशों से वह घृणा करता था और राज्य के रुपये को अपने आराम के लिए नहीं खर्च करता था। वह दूसरे बादशाहों की तरह न ज़ेवर पहनता था न जवाहरात। वह अपने हाथ से टोपियों के पल्ले काढ़कर या क़ुरानशरीफ की नकल कर अपना निजी खर्च चलाता था। उसके दरबार में न तो कोई चुग़ली खा सकता था

और न झूठ बोल सकता था। वह सबकी फरियाद सुनता था और इन्साफ करता था।

राज्य का काम वह बड़े परिश्रम से करता था। कठिन से कठिन आपत्ति आने पर भी वह धैर्य्य और गम्भीरता से काम लेता था। राजनीति के दाँव-पेच वह ख़ूब समझता था और जिस काम में हाथ लगाता था उसे पूरा किये बिना न छोड़ता था। उसका आदर्श ऊँचा था। वह कहा करता था कि प्रजा का हित करना बादशाहों का मुख्य कर्त्तव्य है। ये सब गुण होते हुए भी औरंगज़ेब बिलकुल दोषरहित न था। वह इस्लाम के सिवा किसी धर्म को आदर की दृष्टि से नहीं देख सकता था। उसके हृदय मे प्रेम नहीं था। उसके बेटे भी उससे डरते थे। कहते हैं एक तो उसका पत्र पाते ही डर के मारे पीला पड़ जाता था। वह किसी का विश्वास नहीं करता था। राज्य के चारों तरफ़ जासूस लगे हुए थे जो बादशाह को हर तरह की खबर देते थे। इन्हीं कारणों से मित्र शत्रु हो गये और राज्य में उपद्रव पैदा होने लगे।

मराठों के साथ युद्ध—औरंगज़ेब ने मराठों को बड़ा तंग किया। मराठे महाराष्ट्र के रहनेवाले थे। यह देश दक्षिणी प्लेटो के पश्चिम में है जहाँ आजकल बम्बई का सूबा है। मराठे बड़े परिश्रमी, लड़ने-भिड़नेवाले और साहसी थे। १६वीं शताब्दी में महाराष्ट्र देश में एकता का भाव बड़े ज़ोर से फैला। साधु-महात्माओं ने अपने उपदेश-द्वारा मराठा जाति में एक नई जान फूँकी। राजकीय मामलों का मराठों को ज्ञान था ही क्योंकि उनके कई सर्दार बीजापुर, गोलकुण्डा राज्यों में बड़े-बड़े ओहदों पर थे। ऐसे ही समय में शाहजी

नामक सर्दार के बेटे शिवाजी ने महाराष्ट्र में स्वाधीन राज्य स्थापित करने का संकल्प किया।

शिवाजी का प्रारम्भिक जीवन—शिवाजी का जन्म सन् १६२७ ई० में हुआ था। बचपन में उसे दादाजी कोणदेव नामक ब्राह्मण ने शिक्षा दी परन्तु शिवाजी ने पढ़ने-लिखने पर अधिक ध्यान न दिया। वह अपनी माता से वीर पुरुषों की कहानियाँ सुना करता था जिनका उस पर बड़ा प्रभाव पड़ा। थोड़े ही दिनों में उसने अस्त्र-शस्त्र चलाना, कुश्ती लड़ना, निशाना लगाना, घोड़े पर चढ़ना आदि काम सीख लिये। जब वह बड़ा हुआ तो उसने बीजापुर के किलों पर छापा मारना शुरू किया। उसने कई किले जीत लिये और घोषणा कर दी कि मेरा उद्देश मुसलमानों से हिन्दू-धर्म को बचाना है। जोश में आकर बहुत-से लोग उसके साथ हो गये। यह हालत देख-कर बीजापुर के सुलतान ने अपने एक सर्दार अफ़ज़लख़ाँ को शिवाजी को दबाने के लिए भेजा। ख़ाँ शिवाजी को पकड़ना चाहता था। जब दोनों की भेंट हुई तो शिवाजी ने अपना बाघनख ख़ाँ के पेट में घुसेड़ दिया जिससे वह मर गया। मराठे बीजापुर की सेना पर टूट पड़े और उसे मारकर भगा दिया।

शिवाजी और औरंगज़ेब—शिवाजी अब मुग़ल-राज्य पर भी छापा मारने लगा। औरंगज़ेब की नीति से हिन्दू असन्तुष्ट थे ही जब उन्होंने सुना कि शिवाजी का मन्तव्य गो-ब्राह्मण की रक्षा करना है तब उन्होंने हृदय से उसकी मदद की। औरंजेब ने अपने मामा शायस्ताख़ाँ को मराठों से लड़ने भेजा। शायस्ता की पहले तो जीत हुई परन्तु बाद को मराठों ने उसे मारकर भगा दिया। बादशाह ने

नाराज होकर शायस्ता को बङ्गाल का सूबेदार बनाकर भेज दिया। सन् १६६४ ई० में शिवाजी ने सूरत नगर को लूटा और अँगरेज़ कोठीवालों से रुपया वसूल किया। अब औरंगजेब ने राजा जयसिंह को शिवाजी से लड़ने के लिए भेजा। राजा जयसिंह ने समझा-बुझाकर शिवाजी को आगरे जाने के लिए राजी किया। जब वह दर्बार में पहुँचा तब सलाम के बाद बादशाह ने उसे तीसरे दर्जे के अमीरों में खड़ा करा दिया। इस अपमान से वह बड़ा क्रोधित हुआ। औरंगजेब ने उसके डेरे पर पहरा बिठा दिया। परन्तु चालाकी से वह अपने बेटे शम्भूजी के साथ निकल गया और मुग़ल देखते रह गये।

लड़ाई फिर छिड़ गई परन्तु राजा जयसिंह के देहान्त (सन् १६६७) के बाद शिवाजी ने मुग़लों से सुलह कर ली। यह सुलह अधिक दिन तक न रही और मराठे फिर लूट-मार करने लगे।

सन् १६७४ ई० में शिवाजी ने रायगढ़ को अपनी राजधानी बनाया और बड़ी धूमधाम से अपना राज्याभिषेक किया। सूरत को उसने फिर एक बार लूटा और खानदेश पर चढ़ाई की। वैलौर और जिंजा के किले भी उसने जीत लिये और दूर तक अपना राज्य बढ़ा लिया। सन् १६८० ई० में ५३ वर्ष की अवस्था में शिवाजी का स्वर्ग-वास हो गया।

शिवाजी का चरित्र—शिवाजी बड़ा वीर पुरुष था। उसने अपनी वीरता से ही राज-पद प्राप्त किया था। हिन्दू-धर्म में उसकी बड़ी श्रद्धा थी। वह साधु-सन्तों का आदर करता था। स्वामी रामदास नामक महात्मा उसके गुरु थे। उन्हीं की सलाह से वह हमेशा काम करता था। हिन्दू-धर्म का कट्टर सहायक होते हुए भी वह दूसरे

भड़ौंच
नर्मदा न०
ताप्ती न०
सूरत
सतपुड़ा पर्वत
अहमदनगर
औरङ्गाबाद
जुन्नीर
गोदावरी न०
पूना
रायगढ़
सतारा
गोलकुण्डा
बीजापुर
रत्नागिरि
कोलापुर
कोपल
गोआ
बिलारी
सीरा
बलापुर
बेलौर
बॅंगलौर
अर्काट
जिंजी
तंजौर
त्रिचनापल्ली
बंगाल की खाड़ी
शिवाजी का राज्य
सन् १६८० ई०
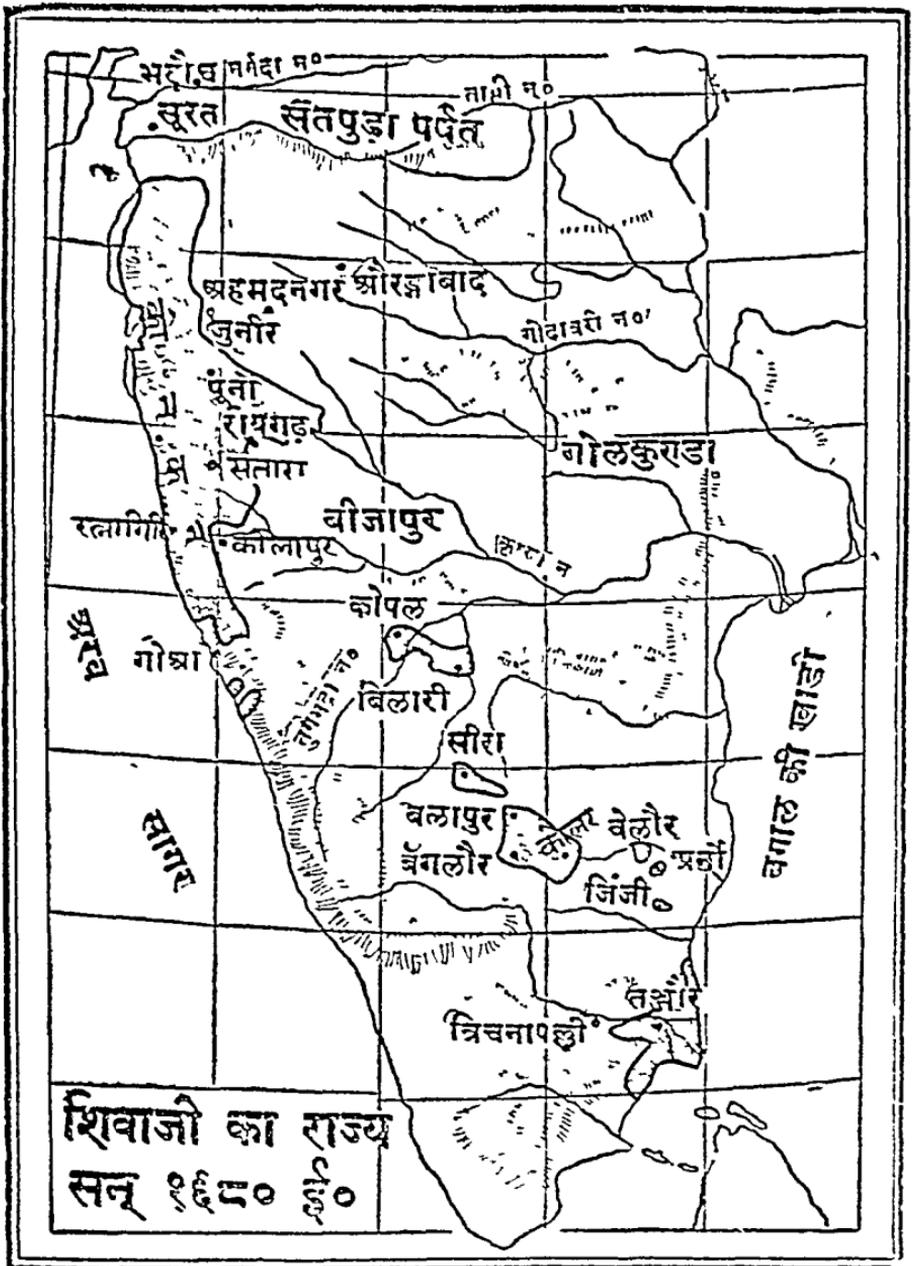
धर्मों का आदर करता था। जब कोई .कुरान की पुस्तक उसके हाथ लग जाती तब वह उसको मुसलमानों को ही लौटा देता था। स्त्रियों के साथ वह कभी अनुचित वर्त्ताव नहीं करता था और हमेशा सदाचार पर जोर देता था। वह योग्य और होनहार लोगों को शीघ्र पहचान लेता था और उन्हीं को बड़े-बड़े ओहदे देता था।

शिवाजी का शासन-प्रबन्ध—अँगरेज़ इतिहासकारो ने शिवाजी को लुटेरा कहा है परन्तु यह उनकी भूल है। शिवाजी बुद्धिमान् शासक था। उसने अष्टप्रधान नाम की एक कौंसिल बनाई जिसमें आठ मंत्री थे। प्रधान मंत्री पेशवा कहलाता था। इन्हीं की सलाह से वह राज्य-कार्य करता था। लगान का प्रबन्ध अच्छा था। किसानों को पैदावार का $\frac{2}{5}$ भाग राज्य को देना पड़ता था। जागीर की प्रथा शिवाजी ने बन्द कर दी थी। अफ़सरों को नकद वेतन दिया जाता था। आज-कल की-सी अदालतें उस समय नहीं थीं। लोगों के झगड़े पंचायतो-द्वारा तय होते थे। सेना का भी शिवाजी ने अच्छा प्रबन्ध किया था। उसकी सेना में पैदल और घुड़सवार दोनो थे। फौज साल में ८ महीने दूसरे राज्यों में लूट-मार कर गुजर करती थी। फौज के नियम कड़े थे। स्त्रियों और बच्चों को कैद करने की आज्ञा नहीं थी। जब सेना वापिस आती तो लूट का माल राज्य को देना पड़ता था।

औरंगज़ेब का धार्मिक पक्षपात—औरंगजेब ने .कुरान के नियमों के अनुसार शासन किया। उसने नाचना, गाना, बजाना, खेल, तमाशे सब बन्द कर दिये। बाजारों में होली, दिवाली मनाने की आज्ञा न रही। हिन्दुओं के मन्दिर और मदर्से तोड़ गये और

उनकी जगह मसजिदें बनाई गईं। हिन्दू माल के महकमें से बरखास्त कर दिये गये। सन् १६७५ ई० मे औरंगजेब ने सिक्खो के गुरु तेगबहादुर को मरवा डाला। इस पर वे आगबबूला हो गय और खुल्लम-खुल्ला बादशाह का विरोध करने लगे। तेगबहादुर के बेटे गुरु गोविन्दसिंह ने मुगलो के नाश का बीड़ा उठाया। चार वर्ष बाद सन् १६७९ ई० मे हिन्दुओ पर फिर से जजिया लगाया गया। इस नीति से वे नाराज हो गये। उनकी श्रद्धा मुगल-राज्य से हट गई। मराठे, राजपूत, जाट, सिक्ख सब मुगलो के साथ लड़ने की तैयारी करने लगे।

राजपूतों के साथ विद्रोह (सन् १६८०-८१)—राजपूत अकबर के समय से मुगलो का साथ देते आये थ। परन्तु औरंगजेब की धार्मिक नीति से वे नाराज हो गये। इसके अलावा एक और भी कारण था। राजा जसवन्तसिंह के काबुल मे मर जाने के बाद जब उसके बेटे लौटे तब बादशाह ने उन्हे दिल्ली मे रोक लिया और मुसलमानी ढङ्ग से रखना चाहा। इस पर राजपूत बिगड़ गये। उदयपुर और जोधपुर मिल गये। केवल जयपुर बादशाह के साथ रहा। औरंगजेब का बेटा अकबर एक बड़ी फौज लेकर अजमेर पहुँचा परन्तु राजपूतो ने उसे राज्य का लालच देकर अपनी तरफ मिला लिया। जब बादशाह को यह खबर मिली तो उसने एक चाल चली। उसने अकबर को एक चिट्ठी लिखी कि शाबाश बेटे! तुमने राजपूतो को खूब बहकाया। यह चिट्ठी राजपूतो के हाथ मे पहुचा दी गई। उन्होने फौरन अकबर का साथ छोड दिया। अकबर बेचारा फारस को चला गया और फिर कभी हिन्दुस्तान मे न आया। मुगल-सेना ने

राजपूत विद्रोह को दबा लिया। बादशाह ने जसवन्तसिंह के बेटे को जोधपुर का राजा स्वीकार कर लिया। इस विद्रोह का बुरा नतीजा हुआ। जिन राजपूतों ने मुग़ल-साम्राज्य के लिए अपना ख़ून बहाया था उनके दिल को गहरी चोट लगी। वे साम्राज्य के शत्रु हो गये और बादशाह को दक्खिन में मराठों से अकेले ही लड़ना पड़ा।

औरङ्गज़ेब और दक्षिण के मुसलमानी राज्य—औरङ्गज़ेब का राज्य दूर तक फैला हुआ था। परन्तु दक्खिन के मुसलमानी राज्य बीजापुर और गोलकुंडा अभी मुग़ल-राज्य के बाहर थे। बादशाह उन्हें जीतना चाहता था। सन् १६८६ ई० में उसने बीजापुर पर चढ़ाई की और उसे जीत लिया। इसके बाद गोलकुंडा के साथ लड़ाई हुई। गोलकुंडा का सुलतान अबुलहसन बड़ी वीरता से लड़ा। परन्तु रिश्वत देकर मुग़ल-सेना क़िले के अन्दर घुस गई। अबुलहसन हार गया और सन् १६८७ ई० में गोलकुंडा भी मुग़ल-राज्य में मिला लिया गया।

इन राज्यों के मिला लेने से मुग़ल-साम्राज्य का विस्तार तो बढ़ गया परन्तु इसका नतीजा अच्छा न हुआ। ये दोनों राज्य मराठों को रोकते रहते थे। अब वे बेखटके चारों तरफ़ लूट-मार करने लगे।

मराठों के साथ अन्तिम युद्ध—शिवाजी की मृत्यु के बाद उसका बेटा शम्भूजी मराठा-राज्य का मालिक हुआ। उसे पकड़वा कर औरङ्गज़ेब ने क़त्ल करा दिया और उसके बेटे शाहू को दिल्ली में रख कर मुसलमानी शिक्षा दी। परन्तु इससे मराठों की हिम्मत कम न हुई। उन्होंने फिर लड़ाई शुरू कर दी। सन् १६९९ ई० में औरङ्गज़ेब स्वयं दक्खिन में गया और उसने मराठों के क़िले भी जीत लिया।

शिवाजी شیواجی

औरङ्गज़ेब اورنگزیب

गोविन्दसिंह گووندسنگھ

वृद्ध औरङ्गज़े

(२) जहाँगीर جہاں گیر

(३) नूरजहाँ और जहांगी[र] نورجہاں اور جہاں گیر

(५) औरङ्गजेब

(६) मुहम्मदशाह محمد شاہ

(१) अकबर اکبر

(४) शाहजहाँ شاہجہاں

फिर भी लड़ाई होती रही। मुगल-सेना ने बड़ी मुसीबतें उठाईं। अकाल और प्लेग से हज़ारों आदमी मर गये।

औरङ्गज़ेब मरते दम तक मराठों को न दबा सका। इसके कई कारण थे। मराठे खुल्लम-खुल्ला मैदान में कभी नहीं लड़ते थे। वे रूखी-सूखी रोटी खाकर अपने टट्टूओं पर चढ़े हुए दुर्गम स्थानों में मुग़लों को हैरान करते थे। मुगल ऐश-आराम चाहते थे। न वे इतना परिश्रम कर सकते थे और न इतना कष्ट उठा सकते थे। मराठों में एकता थी। वे एक होकर अपनी जाति की उन्नति के लिए लड़ते थ। मुग़ल-सेना में बहुत-सी जातियों के लोग थे। इनका सगठन अच्छा न था। बादशाह को अपने अफसरों का विश्वास नहीं था। इसलिए वे अपने काम में ढील-ढाल करते थे।

औरङ्गज़ेब के अन्तिम दिन—औरङ्गज़ेब अब बहुत बूढ़ा हो गया था। उसकी अवस्था इस समय ९० वर्ष की थी। सन् १७०७ ई० में अहमदनगर में उसका देहान्त हो गया।

औरङ्गज़ेब को मरते समय बड़ा दुःख उठाना पड़ा। राज्य में चारों तरफ उपद्रव होने लगे। मुग़ल-सेना दुर्बल हो गई। बादशाह के बेटे उसके पास तक न आये। किसी ने उसका विश्वास नहीं किया।

राज्य-प्रबन्ध—राज्य का विस्तार बढ़ने से सूबों की सख्या २१ हो गई। इतने बडे राज्य का प्रबन्ध करना कठिन हो गया। बादशाह ने सब अधिकार अपने हाथ में ले लिया। हिन्दू सरकारी नौकरियों से अलग कर दिये गये और उन पर जज़िया लगाया गया। राज्य की आर्थिक दशा बिगड़ गई। लगान वसूल नहीं हुआ।

जहाँदारशाह की जीत हुई और वही गद्दी पर बैठा। जहाँदारशाह अपना समय अय्याशी से बिताता था। राज्य के काम की उसे कुछ भी पर्वाह न थी। यह हालत देखकर उसके भतीजे फ़रुंख़सियर ने सैयद भाइ हुसनअली और अब्दुल्ला की मदद से राज्य छीन लिया। जहाँदारशाह क़ैद कर लिया गया और मार डाला गया।

फ़र्रुख़सियर (सन १७१३-१९ ई०)—फ़रुंख़सियर सैयद भाइयो की मदद से बादशाह हुआ था। इसलिए उनका ज़ोर बढ़ गया। वे उसे कठपुतली की तरह नचाते थे। बड़े-बड़े अमीर आपस में ईर्ष्या और द्वेष रखते थे उनके दो दल थे। एक हिन्दुस्तानी, दूसरा विदेशी। हिन्दुस्तानी दल में वे लोग थे जो हिन्दुस्तान में ही पैदा हुए थे और यहीं बचपन से रहे थे। विदेशी दल में ईरानी, अफ़ग़ान और तूरानी थे। जिनकी हिन्दुस्तानियो के साथ नहीं पटती थी। सैयद भाइयों के बर्त्ताव से अप्रसन्न होकर फरुंख़सियर ने उनके चंगुल से निकलने की कोशिश की। परन्तु वह मारा गया। सैयदों ने दो शाहज़ादों को एक-एक कर गद्दी पर बिठाया परन्तु वे अधिक दिन तक न जिये। उनके बाद बहादुरशाह का पोता रोशनअख्तर मुहम्मद-शाह के नाम से गद्दी पर बैठा।

मुहम्मदशाह (सन १७१९-४८ ई०)—मुहम्मदशाह ने पहले सैयदों के पंजे से छूटने की कोशिश की। हुसैनअली धोखे से क़त्ल कर दिया गया और अब्दुल्ला को ज़हर दे दिया गया। परन्तु सैयदों के हटने से कुछ लाभ न हुआ। साम्राज्य की दशा दिन पर दिन बिगड़ती गई। बड़े-बड़े सूबेदार स्वाधीन होने लगे। दक्खिन का सूबेदार आसफ़जाह शक्तिशाली हो गया। उसने निज़ामुलमुल्क की पदवी

ले ली। बंगाल में शुजाउद्दीन और अवध में सआदतखॉं ने भी अपना ताक़त बढ़ा ली। मराठे उत्तर की तरफ़ बढ़ रहे थे। उन्होंने दिल्ली पर भी धावा किया। शहर लुटते-लुटते बचा। ऐसी दशा मे सन् १७३९ ई० मे नादिरशाह ने हिन्दुस्तान पर हमला किया।

नादिरशाह का आक्रमण—नादिरशाह फ़ारस का बादशाह था। जब उसने कन्दहार पर हमला किया तो वहॉं से लाग भाग-कर मुगल-राज्य में जाने लगे। नादिरशाह ने मुहम्मदशाह को लिखा कि मेरे शत्रु मुगल-राज्य मे न ठहरने पावे। मुहम्मदशाह ने कुछ उत्तर न दिया। कई बार खबर भेजी गई। परन्तु मुहम्मदशाह से कोई ठीक उत्तर न मिला। क्रुद्ध होकर नादिरशाह ने हिन्दुस्तान पर चढ़ाई कर दी। कर्नाल के मैदान मे युद्ध हुआ जिसमे उसकी जीत हुई। दिल्ली पहुँचने के दूसरे दिन खबर फैल गई कि नादिरशाह मर गया। एकाएक शहर मे बलवा हो गया। फ़ारसी लोग क़त्ल कर डाले गये। इस पर उसने नाराज़ होकर क़त्लआम का हुक्म दिया। ख़ूब लूट-मार हुई। असंख्य द्रव्य लेकर नादिरशाह अपने देश को लौटा और शाहजहॉं के 'तख़्तताऊस' को भी साथ ले गया।

नादिरशाह के आक्रमण ने मुगल-राज्य का नाश कर दिया। जो कुछ शक्ति बाक़ी बची थी वह भी जाती रही। मुहम्मदशाह केवल नाम का बादशाह रह गया। दक्षिण, मालवा, गुजरात, राजपूताना और पंजाब स्वाधीन हो गये। रुहेलखंड मे रुहेलो ने अपनी धाक जमा ली। मराठे बंगाल तक धावा करने लगे और नवाबो से चौथ वसूल करने लगे। सिक्खों की भी ताक़त बढ़ गई।

जमाने का मौक़ा मिला। बंगाल में अँगरेज़ों की धाक जम गई और अब वे अपना राज्य स्थापित करने की कोशिश में लग गये।

मुग़ल-राज्य का अन्त—पानीपत की लड़ाई के बाद मुग़ल-राज्य नाम के वास्ते रहा। अन्तिम सम्राट् बहादुरशाह ने सन् १८५७ ई० के ग़दर में विद्रोहियों का साथ दिया। वह क़ैद कर रंगून भेज दिया गया और मुग़ल-राज्य की इतिश्री हो गई।

अभ्यास

१—सैयद भाई कौन थे? उनके विषय में क्या जानते हो?

२—मुहम्मदशाह के समय में दिल्ली-साम्राज्य की क्या दशा थी?

३—नादिरशाह के हमले का वर्णन करो। इसका दिल्ली-साम्राज्य पर क्या प्रभाव पड़ा?

४—पेशवाओं ने किस तरह अपनी ताक़त बढ़ाई? बालाजी बाजी-राव के समय में मराठों का राज्य कहाँ तक था?

५—पानीपत की तीसरी लड़ाई कब और क्यों हुई? इसका क्या नतीजा हुआ?

—

अध्याय ३०

मुग़ल-काल की सभ्यता

मुग़ल-शासन—मुग़लों ने ही सबसे पहले इस बात का अनुभव किया कि मुसलमानी राज्य की जड़ हिन्दुस्तान मे कभी मज़बूत नहीं हो सकती जब तक हिन्दू-धर्म को आदर से न देखा जाय। उन्होंने हिन्दुओं को अपनाया, उन्हे बड़े-बड़े ओहदे दिये। हिन्दू भी पक्के राजभक्त हो गये। उन्होंने बलख़, बदख्शाँ, काबुल, कन्दहार में जाकर साम्राज्य के लिए अपना ख़ून बहाया। मुग़लों ने बाहर के देशों के साथ सम्बन्ध किया और देश मे एक शासन स्थापित कर एकता का भाव पैदा किया। हिन्दू-मुसलमान सब एक छत्र के नीचे आगये और एक ही बादशाह को अपना सम्राट् मानने लगे।

मुग़ल-शासन के दो भाग थे—एक तो केन्द्रिक शासन, दूसरा प्रान्तीय शासन। केन्द्रिक शासन बादशाह और उसके बड़े-बड़े अफ़सरों के हाथ में था। इसका काम बहुधा राजधानी मे होता था। प्रान्तों (सूबों) में सूबेदार शासन करते थे। प्रान्तीय शासन की ख़ूब देख-भाल रहती थी। राज्य के कर्मचारी, जो 'वाकअनवीस' कहलाते थे, सूबों का हाल लिख-लिखकर बादशाह के पास भेजते थे। शासन मे हिन्दू-मुसलमान सबको ओहदे दिये जाते थे। प्रजा को अपना धर्म पालने की स्वतन्त्रता थी। बहुत-से बुरे रिवाज बन्द कर दिये गये थे। परन्तु औरंगज़ेब के समय मे यह नीति

फ़ारसी में अनुवाद कराया गया। जहाँगीर ने भी बाबर की तरह अपना जीवन-चरित्र फ़ारसी में लिखा और विद्वानों का आदर किया। फ़िरिश्ता ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक गुलशनइब्राहीमी इसी के समय में लिखी। औरंगज़ेब किसी को इतिहास नहीं लिखने देता था। परन्तु तो भी उसके शासन-काल में कई ग्रन्थ लिखे गये जिनमें मुहम्मद हाशिम उर्फ़ ख़ाफ़ीख़ाँ की 'मुन्तख़बउल्लुबाब' अधिक प्रसिद्ध है।

अकबर के समय से हिन्दी-भाषा की उन्नति होने लगी। संस्कृत का प्रचार कम हो गया। जनता को धर्म की शिक्षा देने के लिए आचार्यों ने भाषा ही का प्रयोग किया। गोस्वामी तुलसीदास के रामचरितमानस और विनयपत्रिका, सूरदास का सूरसागर हिन्दी-भाषा में ही लिखे गये। इनके अलावा केशवदास, देव भूषण आदि और भी कवि हुए जिनकी कीर्ति अब तक अमर है।

मुसलमान भी हिन्दी-भाषा में कविता करते थे। अब्दुर्रहीम ख़ानख़ाना के दोहे अब तक पढ़े जाते हैं। रसखान, नवाज़ आदि ने भी अपनी सुन्दर रचनाओं से हिन्दी-साहित्य का भाण्डार बढ़ाया और हिन्दू-मुसलमान के भेद-भाव को मिटाने का प्रयत्न किया। सत्रहवीं शताब्दी के अन्त होने पर उर्दू-भाषा की उन्नति हुई। उर्दू तुर्की भाषा का शब्द है। इसका अर्थ है—'फ़ौजी डेरा'। यह भाषा फ़ारसी, तुर्की, हिन्दी के मेल से बनी और पहले लश्कर के बाज़ार में बोली जाती थी। अठारहवीं शताब्दी में उर्दू का प्रचार बढ़ गया। वली, सौदा, मीर, मीरहसन आदि कवियों ने उर्दू में ऊँचे दर्जे की कविता की। फ़ारसी का प्रभाव दिन पर दिन कम होने लगा और धीरे-धीरे उर्दू मामूली बोल-चाल की भाषा हो गई।

सामाजिक दशा—मुगल सम्राट् बड़े ठाट-बाट से रहते थे। लाखो रुपया खाने-पीने, आभूषण और जवाहरात में खर्च होता था। अकबर ख़ुद सादगी से रहता था। परन्तु जहाँगीर और शाहजहाँ के समय मे दर्बार की शान-शौकत अधिक बढ़ गई। इस शान को बढ़ाने के लिए शाहजहाँ ने लाखो रुपया खर्च कर डाला। औरंगज़ेब ने यह राजसी ठाट कम कर दिया परन्तु इसका बिलकुल बन्द होना तो असम्भव ही-सा था।

बड़े-बड़े अमीर और सर्दार राज्य से ख़ूब रुपया पाते थे। परन्तु यह नियम था कि मरने के बाद अमीरो की दौलत उनके बेटो को नही मिलती थी। वह राज्य की हो जाती थी। इसलिए अमीर लोग रुपया नही बचाते थे। इसका एक और भी कारण था। रुपये को किसी कारबार मे लगाने का ज़रिया ही न था। बैंक भी नहीं थे। व्यापार भी कम था। अधिकांश आमदनी सोने-चाँदी के गहने और जवाहरात खरीदने में खर्च होती थी। अमीरो के यहाँ पाँच-पाँच सौ नौकर रहते थे। लाखो रुपया अय्याशी में ख़र्च होता था।

किसानो की हालत बहुत अच्छी न थी। कारीगरो का भी काफ़ी आदर न था। बाल-विवाह का रवाज मुसलमानो मे भी हो चला था। औरंगज़ेब के शासन-काल में अमीरो की हालत ख़राब हो गई, ऐश-आराम ने उन्हे निकम्मा बना दिया। उनके लड़को को उचित शिक्षा न मिली। ज्योतिषियो का इतना प्रभाव बढ़ गया कि उनसे बिना पूछे कोई काम शुरू नहीं किया जाता था। परन्तु साधारण मनुष्या की दशा इतनी बुरी न थी। उनमे धार्मिक जोश भी था और उनके सदाचार का आदर्श ऊँचा था।

पेशवाओं का व

- (१) बालाजी विश्वनाथ (१७०७–२० ई०)
  - (२) बाजीराव (१७२०–४०)
    - (३) बालाजी बाजीराव (१७४०–६१)
      - विश्वासराव
      - (४) माधोराव (१७६१–७२)
      - (५) नारायणराव (१७७२–७३)
        - (६) माधोराव नारायण (१७७४–९५) (आत्महत्या की)
    - रघुनाथराव (राघोबा)
      - अमृतराव
      - (७) बाजीराव द्वितीय (१७९६–१८१८)
        - नाना साहब (गोद लिया हुआ)
      - चिम्मनजी अप्पा
  - चिम्मनजी अप्पा
    - सदाशिवराव भाऊ (पानीपत की तीसरी लड़ाई में मारा)